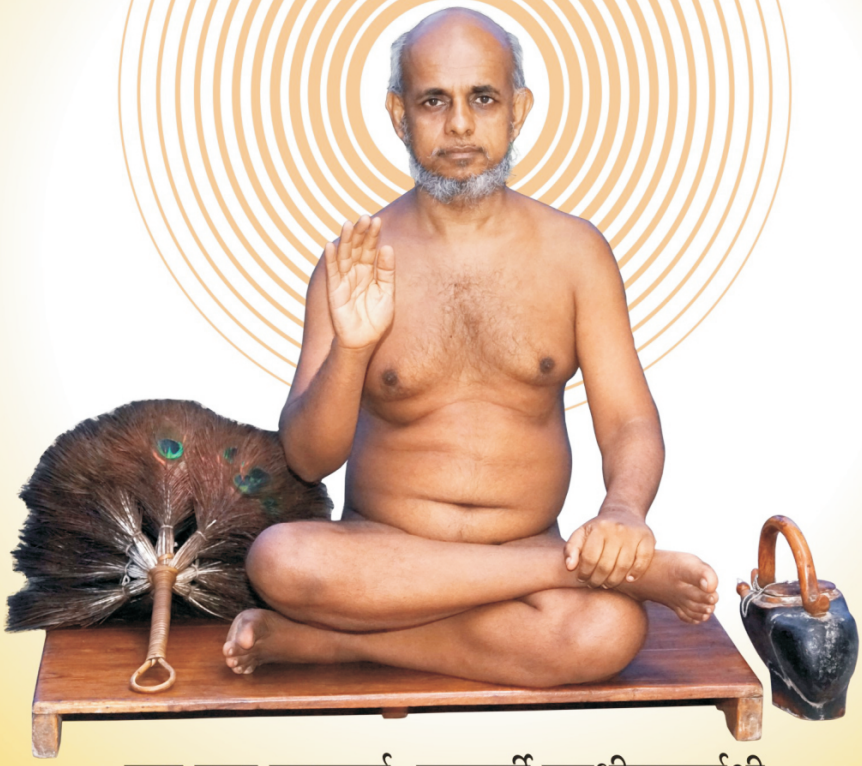

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

# सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

## जिनवाणी-महोत्सव

# सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

# दानचिन्तामणि

लेखक
जी. ब्रह्मप्प

प्रकाशक
मैसूर रियासत हिन्दी प्रचार समिति
बैंगलोर (कर्नाटक)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

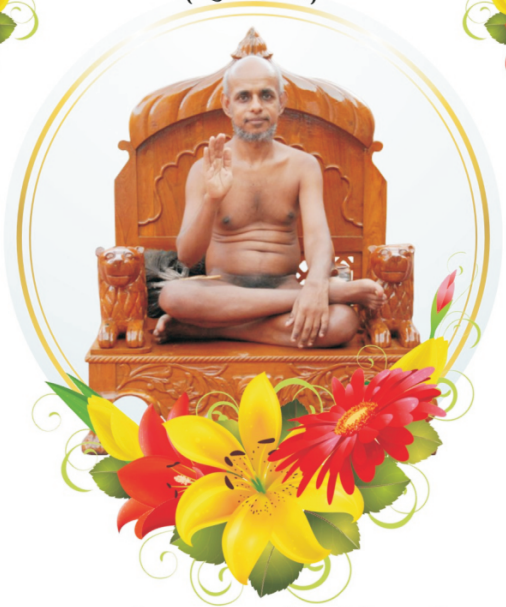

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

# दानचिंतामणि

(एक ऐतिहासिक उपन्यास)

*

जी ब्रह्मप्प, एम ए
रीडर, कन्नड - विभाग
सरकारी कालेज, मडकेरी

एम के भारतीरमणाचार्य, एम ए
हिंदी प्राध्यापक
सरकारी कालेज, कोलार

प्रकाशक
मैसूर रियासत हिंदी प्रचार समिति
जयनगर - बेंगलोर - 11

प्राप्ति स्थान

मैसूर रियासत हिंदी प्रचार समिति

जयनगर बेंगलोर 11

और

विद्या साधन केंद्र

III मेन रोड

हनुमंतनगर, बेंगलोर 19

Copy Right- एम के. भारतीरमणाचार्य एम ए

मुद्रक

श्री कृष्णा प्रिंटर्स,

266/8 III मेन हनुमंतनगर

बेंगलोर 19

प्रथम संस्करण] [मूल्य: 3-50

# अपनी दो बातें

एक हजार वर्ष-पूर्व चालुक्य राज्य में महामहिमामयी अत्तिमब्बे जीवित थी। इस महिलामणि का यशोगान रन्न ने अपनी अमर कृति अजितपुराण में किया है। उस से प्रेरणा पाकर श्री जी ब्रह्मप्प ने इस उपन्यास की रचना कन्नड में की है।

श्री जी ब्रह्मप्प कन्नड विभाग के प्राध्यापक हैं। आजकल मडकेरी के सरकारी कालेज के रीडर हैं। आपने जैन-साहित्य का गहरा अध्ययन किया है। उपन्यासो के द्वारा अपने ज्ञान का प्रसार जनता में कर रहे हैं।

अजित पुराण के अतिरिक्त लेखक ने पोन्नकवि रचित शाति पुराण, सर्वश्री वि एस कुलकर्णी की साहित्य-सुधा, आचार्य ती न श्रीकठय्य, के समालोकन, डॉ एस श्रीकठ शास्त्री के सोर्सस आफ कर्नाटक हिस्टरी, नीलकठ शास्त्री के ए हिस्टरी आफ साउथ इडिया एव लक्कुडी के शासन S I-1, XI-1, बावे कर्नाटक इन्स्किप्क्षन्स जिल्द 1 भाग 1 –आदि से भी विषय सग्रह करके बचे-कुचे अश को कल्पना द्वारा भर कर इस दानचितामणि का ढाचा तैय्यार किया है।

ब्रह्मप्प और हम सरकारी कालेज में 1962–67 तक सहोद्योगी थे। 1966 में दानचितामणि का हिदी-रूप तैय्यार हुआ।

मैसूर रियासत हिदी प्रचार समिति ने अपने पाठ्यक्रम में इस को स्थान देकर छपाने का अवसर दिया और। स्वय प्रकाशन का भार भी उठाया। समिति के कार्यकर्ताओ के हम कृतज्ञ हैं।

अनिरीक्षित विघ्नबाधाओ के आने पर भी श्री कृष्णा प्रिन्टस् की मालकिन अमृता नागराज ने इस की सुदर छपाई कर दी है। अकेली अमृता नागराज ने अक्षर-जोड से लेकर छपाई तक का पूरा कार्य दिन रात काम करके संभाला। उनकी पचवर्षीय पुत्री उषा कुमारी से लेकरहमारे घर के छोटे बडे सभी व्यक्तियो ने इस कार्य में किसी

न किसी रूप में हाथ बटाया है।

हम इन सब की शुभ-कामना करते हैं।

प्रिय पाठकों से सविनय निवेदन है कि पुस्तक की छपाई शीघ्रता में हुई। अतएव त्रुटियों का होना स्वाभाविक है। प्रार्थना है कि क्षमा करें और छोटी-बड़ी सब प्रकार की त्रुटियों को सुधारकर पढ़ें और उसकी सूचना हमें भी दें ताकि अगले संस्करण में सुधार कर सकें। ऐसे महानुभावों के सुझाव को धन्यवाद स्वीकार करेंगे।

## प्रकाशकों की ओर से

पूज्य बापू के शतमानोत्सव के अवसर पर श्री अहम्मण्ण के उपन्यास दानचिंतामणि को पाठकों को भेंट करते हुए समिति असीम आभार का अनुभव कर रही है। दानचिंतामणि की वस्तु ऐतिहासिक है और कन्नड़ साहित्य के स्वर्णयुग से संबंध रखनेवाली है।

इसका हिंदी अनुवाद श्री भारतीरमणाचार्य ने तैयार किया। श्री आचार्य जी हिंदी और कन्नड़ के सधे हुए लेखक हैं। सैकड़ों लेख और दर्जन से भी अधिक मौलिक और अनूदित ग्रन्थ इस बात के साक्षी हैं। आप 25 वर्षों से हमारे साथ हैं समिति के सक्रिय कार्यकर्ता एवं आजीवन सदस्य हैं।

लेखक के इच्छानुसार पुस्तक दि रत्नवर्मा हेग्गडे और श्रीमती रत्नम्मा को समर्पित है जो आधुनिक चामुण्डराय और दानचिंतामणि थे। श्री नेमिनाथ की [illegible] फुट की पाषाणमूर्ति बनवाने का कार्य प्रारम्भ करके स्वर्गवासी हो गए। आप के सुयोग्य पुत्र वीरेंद्र हेग्गडे आदि इस कार्य को आगे बढ़ा रहे हैं। परमात्मा की कृपा से यह कार्य पूर्ण हो और हमें समवसरण देखने का सौभाग्य प्राप्त हो। आप के परिवार तथा पाठकों की शुभ कामना करते हुए आशा करते हैं कि साहित्य के आदान-प्रदान रूपी इस कार्य का समादर राष्ट्रभाषा प्रेमियों द्वारा होगा।

जय हिंद — जय हिंदी

जिनचद्रमुनि पूर्वाभिमुख करके पीठ पर बैठे थे । होमकुड के भस्म से मुनि के मुख और सिर अच्छी तरह मले गए। तदनतर जिनचद्र ने अपनी मुट्ठी में केशराशि पकड इस भाति जड से उखाडी मानो कर्म की जड ही उखाड रहे हो । दाढी-मूंछ तक ऐसे ही उखाडी गई । फिर भी वे हंसमुख थे । अन्य भक्तवृन्द बचे-कुचे बाल उखाडने लगे, पर बहुत सभल सभलकर । इस कार्य में अत्तिमब्बे एव उसकी बहन गुडुमब्बे का उत्साह वर्णनातीत था । पीठ पर चढकर मुनि के सिर से बाल उखाडने में वे बडी उत्सुकता एव कौशल दिखा रही थी । कभी-कभी इस कार्य के लिए मुनि जी की जाघो पर भी चढ जाती थी । तब नागमय्य उन दोनो को रोकते हुए कहते 'छी ' कैसा अनर्थ ! बडो पर मत चढना, क्षमा माँगकर नमस्कार करो। वे दोनो नमस्कार करती और मुनिजी मन ही मन असीसते कि तुम दोनो सम्यक्त्व चूडामणि बनो । वे दोनो इस तरह काम कर रही थी मानो जिनमूर्ति का निर्माल्य उतार रही हो। इन बहनो का उत्साह सांक्रामिक बना, औरो ने भी इस कार्य में हाथ बटाना शुरू किया। पर महामुनि जिनचद्रजी महाशिल्पि के हाथ पडी प्रतिमा के समान बैठ थे। भक्तवृद ने मुनि के सिर और मुख के सभी बाल उखाड दिए। इस लोच के समाप्त होने पर जिन-गधोदक अच्छी तरह मल दिया गया। इससे मुनिजी इतना प्रसन्न हुए मानो उनको सजीविनी का स्पश ही प्राप्त हुआ हो । शरीर पर पडे हुए बाल पिच्छ से झाड लिए । अत्तिमब्बे एव गुडुमब्बे को अपने पास बिठाकर मुनि जिनचद्रजी ने आशीर्वाद दिया — तुम दोनो सम्यक्त्व चूडामणि बनो ।

पुगनूर में जिनचद्रजी की यह लोच-क्रिया बडी धूम से मनाई गई । तब चालुक्य महामत्री नागमय्य के नेतृत्व में काय

आयोजित था तो कहना क्या ? नागमल्ल के पुत्र मल्लप और पुन्नमय्य भी सारा राजकाज छोड़ परिवार सहित उस समारोह में सम्मिलित थे। जिनचंद्रजी उस समय के धर्मगुरु थे। आप सदा सपरि समुद्र म तैलपवाले नागमल्ल के परिवार को सही रास्ते पर ले चलनेवाले कर्णधार का काम किया करते थे। महा पराक्रमी मल्लप और पुन्नमय्य पर भी आप का अंकुश था। आप की अनुमति और आशीर्वाद के बिना न नागमल्ल किसी कार्य में प्रवृत्त होता न उनके बेटे ही किसी काम में हाथ लगाते।

लोच के बाद मुनि के केश गुच्छों का नदी में विसर्जन करना था। अतएव सभी राज-महिलाओं के साथ जुलूस निकला। राजकीय पुरोहित नागमल्ल और उनके पुत्र नंगे पाँव चल रहे थे। उनकी भक्ति सराहनीय थी। इस प्रकार केश-विसर्जन क्रिया भी समाप्त हुई।

उस दिन जिनचंद्रजी ने व्रत रखा। उस समारोह में सम्मिलित जनसमूह को नागमल्ल ने प्रीति भोज दिया। भोजन के उपरान्त प्रमुखों की सभा हुई। वे सब जिनचंद्रजी के दर्शनार्थ आए थे। जिनचंद्रजी के साथ जटाधारी श्रमण पोन्न भी विराजमान थे। पंप कवि भी उपस्थित थे। उन्होंने इन दोनों को साष्टांग किया। दोनों ने आशीर्वाद दिया धर्मवृद्धिरस्तु कवि पंप ने एक-एक करके अपने परिवार के सभी व्यक्तियों का परिचय करा दिया।

जिनचंद्र जी ने वार्तालाप प्रारंभ किया —

पंपदेव ! इन दिनों में तुम क्या अध्ययन कर रहे हो ?

अध्ययन ! वे तो महाज्ञानी थे। वे कहाँ और मैं कहाँ ?

पंपदेव विनम्र थे।

हमारा मतलब भी यही था। पूर्णज्ञानी बनने के बाद ही मौन मुकुट-सा शोभायमान बनेगा। तुमने इधर कुछ रचना नहीं की ? क्यों ? पारस (पारेसे) से रहनेवाले तामस बनते जा रहे हो ?

मुनिजी के कथन में आक्षेप सूचक ध्वनि थी ।

महाप्रभु अरिकेसरी के चल बसने के बाद मुझे कुछ भी नहीं सूझ रहा है ।

पप का गला बैठ गया ।

अरिकेसरी सचमुच महान थे । उनकी मृत्यु से ससार को बडी क्षति उठानी पडी है । यह तो ठीक है, पर हमलोगो का कर्तव्य तो है कि जितने दिन जीते रहें तब तक सास लेते रहें ।

ठीक है। पर क्या सूरज के डूबने पर कमल खिले रहेंगे ? मेरी स्फूर्ति की साकार मूर्ति थे अरिकेसरी ! मेरे उत्साह के उद्‌गम थे अरिकेसरी ! मेरे उल्लास के फूल थे अरिकेसरी ! ऐसे व्यक्ति को खोकर जिन्दा रहना निलज्जता है । यह जीवन व्यर्थ है । अब किस के लिए जीऊँ ?

पप की बातो में जीवन के प्रति अनासक्ति का भाव था।

पपदेव ! एक व्यक्ति के पीछे लोक व्यापार रुक नही सकता । यह ससार प्रवाह है । यहाँ आनेवाले आते रहते हैं जानेवाले जाते रहते हैं । चद दिनो के लिए साथ रहते है और कुछ दिन बाद विवश होकर अपने प्रिय बन्धुओ को छोडकर जाना ही पडता है । आदिपुराण के कवि हो तुम ! तुम ही अगर ऐसे बन बैठो तो लोगो का मागदर्शन कौन करें ? ऐसे आतभाव से क्या तुम्हारा भला होगा ?

महात्माजी ! मैंने भी कई बार इसी प्रकार सोचा है । औरो को ऐसे ही उपदेश दिया भी है । पर अरिकेसरी का निर्वाण मेरे लिए दुस्सह बना है । उनसे प्रदत्त वस्तु वाहन वस्त्रादि को सजा कर देखा करता हूँ तो क्षणभर के लिए विरह व्यथा क्षुब्ध सी दिखाई देती है । पर दूसरे ही क्षण मुझे ऐसा लगता है मानो एक एक वस्तु मेरा धिक्कारते हुए कह रही हो--देख अरिकेसरी नही रहे न क्यो रह गया ? अरिकेसरी के दिए गए नवरत्नो को नव देखता था अब भी देखता हूँ पर आँसू बहाते हुए । यह बात स्पष्ट हो गई है कि अरिकेसरी

के बिना मेरे लिए स्वर्ग भी नरक ही रहेगा।

कवि के आँसू फूट निकले। गला बैठ गया। सारे सभासद भावोद्रेक से काँप उठे।

पद्मदेव! आँसू बहाने से तो केवल आँख दुखने लगेगी। अरिकेसरी तो नहीं आएगा। इस दुर्बलता को हटा दो। आत्मा की अमरता की बात सोचो। इस में तुम्हारा भी हित है और लोक का भी। सुनो! आदिपुराण सुनने का मेरा चाव दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। तुम्हारा आदिपुराण एक महान कृति है। तुम्हारा भारत सचमुच हमारे भारत-सा महान एवं अमर्त्य है। अतएव तुम शान्तिपुराण रचो।

पंप को कार्योन्मुख करने के भाव से जिनचन्द्रजी को यों कहना पड़ा।

पर पंप ने उत्तर दिया

क्या मैं लिखने बैठूँ? क्या यह संभव है? अरिकेसरी की चिता में ही मैंने काँटा भी जला दिया। क्या कभी विधवा भी संतान पा सकेगी? पाये ही पाये पर क्या उसका समादर होगा? पद्मदेव से आगे बोलते नहीं बना। उत्तरीय से आँसू पोंछने लगे। इस दृश्य को देखकर सात-आठ वर्ष की बालिका अतिमब्बे पंप के पास आई और बोली मामाजी आप क्यों रोते हैं? आप को क्या चाहिए? आप का कुछ खो गया है? ऐसे कहते कहते अपने लहंगे की ओर से आँसू पोंछने लगी। दूसरी ओर से गुंडमब्बे यह कहते कहते बीच आयी कि मामा! तुम्हें क्या हुआ है? हमारे यहाँ तो कोई नहीं रोता।

इन दोनों बालिकाओं को पंपकवि ने हाथ पसार कर अपनी ओर खींच लिया। उनकी आत्मीयता से प्रभावित हुए। दोनों को अपनी गोद में बिठा लिया। भावोद्रेक में उन बच्चियों के आँसू उमड़ पड़े। महाकवि ने उनके आँसू पोंछे। बोले — मैं अब नहीं रोऊँगा। तुम्हारी

। आगे कह नहीं सके।

अत्तिमव्वे ने फिर पूछा — मामा, तुम्हें क्या चाहिए ?

बेटी, जिस वस्तु को खोकर मैं दुखी हूँ उसे कोई ला कर नही दे सकता पप की वाणी खिन्नता से सनी हुई थी।

मैं ला सकती हूँ -- गुड्डुमव्वे ने आश्वासन दिया।

मैं भी ला सकती हूँ -- अत्तिमव्वे ने दृढता से कहा। मामाजी ! कहो न ? क्या खो गया है ?

दोनो ने प्रश्न किया।

बेटी तुम सुनकर क्या करोगी ? हमारे महाराजा चल बसे। समझो ? अब उनको कौन ला सकता है ?

पप की माँग अत्यत जटिल थी।

पर क्षणार्ध में अत्तिमव्वे ने इन का समाधान ढूँढ निकाला। और बोल उठी : हाँ, तुम्हारे राजा चल बसे, पर हमारे राजा तो हैं ! मैं उनको बुला लाती हूँ।

गुड्डुमव्वे का उत्तर सीधा था—

मामाजी, तुम हमारे यहाँ ही ठहर जाओ।

कौन खिलाएगा ? पिलाएगा ? — पप ने तक किया। भोली भाली लडकियो की बातो में विनोद पा रहे थे।

मैं करूँगी। — अत्तिमव्वे ने दृढता से उत्तर दिया।

मुझे कपडे ? - ---- पप की माँग बढती गई।

मेरे दादाजी के कई कपडे हैं, पहन लीजिए। पिताजो की धोतियाँ भी मैं दूँगी – गुड्डुमव्वे ने आश्वासन दिया।

इन दोनो की बातो से पपकवि का दुःख दब गया। अरिकेसरी जैसी उदारता की मूर्तियाँ इस कर्नाटक म कई हैं—ऐसा सोचकर प्रसन्न हुए।

देखो पप जी ! बच्चे कितने नादान होते हैं ? इन्ह क्या अभाव है ? केवल हम सारी दुनियाँ की झझटो को ढोए दबे जाते हैं,

हमारी सांस घुटती जाती है । सच बात तो यह कि जो बच्चों का पालन हो नहीं सकता जानी है ? और ! तुम पुराण लिखना शुरू करो । तुम्हारा शोक यहाँ रस प्रवाह समझा देगा ।

शिवचन्द्रजी ने इन शब्दों से पंप को प्रेरित करने का प्रयत्न किया ।

फिर वही आज्ञा ! मुझसे लिखते नहीं बनता । इस जन्म में पत्र न लिखने की मैंने कसम खाई है ।। आप की इच्छा तो शान्ति पुराण लिखवाने की है न ? ।।

जी हाँ ।

यह कोई बड़ी बात नहीं । आप की समझ में ही थी । हम तो गोस्वामी जी ने रामायण की रचना कर चुके हैं । ऐसे कवि चक्रवर्ती के लिए यह कोई बड़ी बात नहीं होती । वे शान्ति पुराण लिखेंगे । आज्ञा हो ।

पोन्न ने उत्तर दिया — देखिए । प्रश्न सीधा है । आप को शान्ति पुराण लिखने का आदेश हुआ है । आप लिखिए ।।

स्वामी जी मेरा आशय समझिए । मैंने एक लौकिक और एक पारमार्थिक – दोनों रचनाएँ की हैं । आप भी एक पुराण की रचना करें तो बड़ा अच्छा होगा । रामायण सफल लौकिक काव्य है । शान्ति पुराण आप का अलौकिक अर्थात् पारमार्थिक काव्य बन जाय । —यों युक्ति पूर्वक लिखवाने का प्रयत्न पंप ने किया ।

पोन्नजी भी लिखें और आप भी लिखिए अत्तिमब्बे बोली ।

हाँ हाँ आप दोनों लिखें । एक मैं लूँगी । एक मेरी दीदी ।

गुंडमब्बे ने स्फूर्ति से कहा । अपनी बात पर आप फूली न समाई । नाच उठी । वहाँ उपस्थित सभी लोग इनके भोलेपन से असीम आनंद का अनुभव करने लगे ।

पंप ने उन दोनों को प्यार से पास बुलाया और पूछा बेटियो आओ हमारे पास । हम अपने यहाँ ले जाएँगे ।

क्यों मामाजी ! तुम्हीने कहा की वहाँ राजा की मौत हो गई है। यहाँ राजा हैं। हम यहीं रहें । —अत्तिमब्बे ने कहा ।

क्यों मामाजी, यह स्थान आप को पसद नही आया ?

गुड्डुमब्बे ने प्रश्न किया।

बडा अच्छा है । तुम्हारा यह देश बडा उत्तम है ।

पप ने आश्वासन दिया ।

तो यही रह जाओ न — अत्तिमब्बे ने दृढता से कहा ।

तुम्हारी मामी को तो बुला लाना होगा ।

पप ने मुस्कुराते हुए कहा ।

हाँ हाँ, उनको बुला लाना है — गुड्डुमब्बे ने स्वीकृति दी ।

यह मामाजी का बहाना है । यहाँ से जाने के बाद फिर नही लौटेंगे अत्तिमब्बे ने ताड लिया ।

ठीक कहती हो बेटी, जिनचद्रजी के ओठ खिल उठे ।

तब तक चुपचाप बैठे हुए नागमय्य ने पप कवि को अपने यहाँ ठहरा लेने के इरादे से कहा — देखिए, आज रात को कविजी के श्रीमुख से आदिपुराण सुनने का चाव उमड रहा है । कौन दरवाजे पर आए इस सुअवसर को जाने देगा ? हमारा अहोभाग्य है । आप हमारी प्रार्थना स्वीकार कीजिए।

यह बहुत ही उत्तम प्रस्ताव है । शिवरात्रि के दिन प्रथम तीर्थंकर का चरित हो ! सो भी महाकवि के श्रीमुख से ही । क्या ही आनद की बात है ! — जिनचद्रजी ने समर्थन किया ।

बहुत ! मामाजी कहानी सुनाएगे अत्तिमब्बे ने सतोष प्रकट किया

ओह ! तब तो हम इनको ओझा जी कहें — गुड्डुमब्बे बोल उठी । दोनो आनद से पुलकित हो रही थी ।

नागमय्य का परिवार बडा था । महा साहसी मल्लप और

मल्लुर पुट्टमय्य दोनों उनके पुत्र रत्न थे। उनकी पत्नी न थी। परमात्मा की कृपा से सुहागोवी सुहागिन की मौत कभी आ चुकी थी। नागमय्य की कोई संतान नहीं थी। पर मल्लप की गोद कभी खाली नहीं रही। नागमय्य का पत्नीट्ठ उनकी भावज अम्मक्कदे थी। मल्लप की इस धर्म पत्नी ने कई संतानों को जन्म दिया। पुट्टमय्य एळमय्य चिक्कमोरभय्य जाहुगमल्ल और बल्ल — ये पांच पुत्र थे। इनके बाद आनियक्के और पुट्टमक्के का एक साथ जन्म हुआ था। अम्मक्कदे की तीसरी लड़की थी नागियक्के। इस प्रकार आठ संतानों की माँ बन कर उस साध्वी ने नागमय्य का घर भर दिया था।

नागमय्य और जिनचन्द्र समवयस्क थे और बचपन के साथी थे। नागमय्य ने जिस समय लौकिक कार्यक्षेत्र अपनाया था उसी समय जिनचन्द्रजी ने आध्यात्मिक क्षेत्र को अपनाया था और संन्यास स्वीकार किया था। नागमय्य ने लौकिक में यश प्राप्त किया जिनचन्द्रजी ने पारमार्थिक साम्राज्य में अद्वितीय स्थान प्राप्त किया।

नागमय्य के पूर्वज वेदवेदांत में पारंगत कौण्डिन्य गोत्र के ब्राह्मण थे। इस वेद विद्या में नागमय्य की काफी पहुँच थी। जिनचन्द्रजी के प्रभाव से उन्होंने यज्ञ-याग का त्याग किया था और जैनागमों का अध्ययन किया। जैनधर्म के अहिंसातत्त्व से नागमय्य अत्यंत प्रभावित थे। अतएव उन्होंने अपनी इच्छा से जैनदीक्षा ली। बाद को इनके परिवार के लोग एक एक करके जैनदीक्षा लेते गए। उधर देवेन्द्र मुनिजी ने पम्प के पिता अभिराम को जिनदीक्षा दी थी।

सर्वत्र जैनधर्म फैल गया। यज्ञवेदी के स्थान में दयाधर्म के चबूतरे बनाए गए। यज्ञस्तम्भ पर अहिंसा का ध्वज फहराने लगा।

नागमय्य चालुक्यों के महामात्य थे। चालुक्यों की दूसरी शाखा के आश्रय में पम्पकवि थे। पोन्नजी यद्यपि श्रमण थे फिर भी राष्ट्रकूट सम्राट के कवि के रूप में प्रसिद्ध थे। कभी कभी जैनधर्म उनकी

महोत्सवो में से सभी सम्मिलित हुआ करते थे। उन दिनो के सन्यासी राजकीय परिवार में से धर्म रूपी मदराचल के सहारे कन्नड सस्कृति रूपी अमृत निकालने में लगे हुए थे। उन दिनो के राजा महाराजाओ का सिर अहिंसा के सम्मुख आप झुका करता था। वैसे ही उनके अमात्यगण व्यावृक्ष के माली बने रहते थे।

जिनचद्र मुनि ऊँचे आसन पर विराजमान थे। उनकी बगल में समण पोन्नकवि विराज रहे थे। वेदिका पर पप कवि आदिपुराण का पाठ कर रहे थे। सुदर लिखावट थी। सहस्रो पत्र थे। उनको श्रीगध के पटल के बीच मे जोडकर ग्रन्थ बनाया था। श्रीगध के उन पटलो के चौकोर सोने से मढे गए थे। सोने में सुगध की बात यहाँ चरितार्थ दिखाई दे रही थी। उस सुगध में मानो धर्म की शीतलता ने चार चाद लगा दिए थे। आदिपुराण ग्रन्थ बडा मनमोहक था। कदली-गभ-श्याम पप कवि भी बडे आकषणीय व्यक्ति थे। न अत्यत ऊँचे कद के थे, न छोटे ही। देखनेवाले देखते ही रह जाए ऐसा व्यक्तित्व था। खिले कमल-सा मुख, नीलोत्पल से विकसित नेत्र, विशाल और उन्नत भाल, घुघुराले केश, अखाडे की साधना से गठित सुदर शरीर—इस प्रकार वे कन्नड देश के नव मन्मथ से थे। यो तो ढलती उम्र थी, पर देह की कांति में जरा भी मलिनता नही आई थी। दो महर्षियो के बीच में रस-सेतु के समान पपकवि विराजमान थे। एक ओर कमबध से मुक्त जिनचद्र जी थे। उनके केश-लोम रहित सिर और मुख देखते ही बता देते थे कि यहाँ कम की जड कट गई है। दूसरी ओर जटाधारी समणपोन्न थे। उनके जटाबध देखते ही ऐसा भासित होता था कि कम भले ही हो, पर मेरा कुछ नही बिगाड सकेगा क्योंकि मैंने उसको अपने हाथो कस लिया है। ऐसे दोनो के बीच में सम्यक् सारोदय की भाति पप महाकवि आसनारूढ थे।

नागमल्ल के यहाँ आंगन में उस ग्राम के सभी श्रावक एकत्रित थे । वहाँ एक चबूतरा बना था। उस पर समवसरण का दृश्य सजाया गया था। सोने का समवसरण था । रत्नों का तोरण बना था। चाँदी के खंभे थे। स्फटिक मणि के तीन पीठ रखे हुए थे । अंतिम पीठ पर केसर फैलाए हुए चारों ओर मुँह किए चार सिंह थे। सिंहों के पीठ से लगे खिले हुए रक्त कमल थे। इन कमलों पर जिन बिंब रखा हुआ था । वह पारदर्शक स्फटिक की मूर्ति थी। उस मूर्ति के पीछे घी का दिया प्रज्वलित था । उस मूर्ति से छनकर आनेवाली दीप-किरणों ने सुवर्ण रश्मि का भ्रम फैला दिया था। श्रावकों को ऐसा लगा मानों वे सचमुच समवसरण ही देख रहे हों । जब कभी नागमल्ल का भक्ति भाव उत्कर्ष दशा तक पहुंच जाता ऐसे दृश्यों को सजाकर चरितार्थ हो जाता । नागमल्ल ने इन दिनों में राजकाज का सर्वथा त्याग किया था । अपने सुयोग्य पुत्रों पर यह भार डाल कर आप आध्यात्मिक साधना में लगे हुए थे । परिवार के लोग नागमल्ल से धर्म के सम्बन्ध में भय मान रहे थे। अतएव कोई उनसे बातें नहीं करता था । केवल अतिमब्बे और गुंडमब्बे में इतना साहस था कि दादाजी को गले लगाकर बातें करती थीं। यह देख घर के लोगों ने इन्हीं दोनों के जिम्मे नागमल्ल की सुख-सुविधाओं की बात छोड़ रखी थी। नागमल्ल की आध्यात्मिकता का प्रभाव इन दोनों पर भी पड़ा था । जब चाहे तब ये बालिकाएँ आप ही समवसरण की झांकी सजा देती थीं। और स्वयं इन्द्राणी बन जातीं और जिनमूर्ति को गोद में लेकर खिलाती थीं । आज तो इनके उत्साह का पारावार उमड़ पड़ा था।

समवसरण की एक ओर जिनबिंब और पीठ के बीच में पद्मकवि सुखासीन थे तो दूसरी ओर नागमल्ल एवं दो-एक भव्य व्यक्ति बैठे हुए थे। अतिमब्बे और गुंडमब्बे के अभिनय का प्रबंध भी हुआ था।

अत्तिमब्बे इन्द्र बनी हुई थी। गुडुमब्बे बनी थी इन्द्राणी। आदि देव के गर्भावतरण-कल्याण का जब अभिनय हुआ तो देखनेवालो को इतना आनद हुआ मानो बाझ ने सतान को जन्म दिया हो। निर्मल अत करणवाले बच्चों का खेल ही मनमोहक होता है। ये दोनो मानो नई चमेली थीं। दोनो की देह अत्यत सुदर और एक ही साचे में ढली सी थी। मुक्तिद्वार-सी अहिसा-कांति से आकर्षक मुखाकृति थी। मूर्तिवत् दयादाक्षिण्य से दो नेत्र थे। सृष्टि के रहस्य को बाहर ला रखनेवाली पैनी ठुड्डी थी। उनकी उभरी हुई ठुडडी से पता चलता कि ये दोनो देखने में जितनी कोमल हैं उतनी ही व्रत - नियमो के पालन में दढ भी हैं। भरे हुए गाल थे। लता को भी लजानेवाली देह देखनेवालो का चाव क्षण क्षण बढाती रहती। कारण यह कि ये सुदरियाँ अभिनय करते समय जिस किसी मुद्रा में खडी होती वही एक नूतन आकर्षक भगिमा बन जाती थी।

गर्भावतरण का अभिनय पहले हुआ। जब तीर्थंकर पुरि में रत्नवृष्टि होने के दृश्य का अभिनय हो रहा था तब दर्शको के सम्मुख असली रत्नो की झडी लगा दी। गई थी क्योकि नागमय्य ने इस का प्रबध कर दिया था। पर श्रावको का मन इन सुदर बालिकाओ के कलापूर्ण अभिनय में इतना मग्न था कि ये रत्न ज्यो के त्यो पडे रहे। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे दोनो ने अजलियो में भर भर कर श्रावको की ओर रत्नो को उछाला। नखशिख तक नवरत्नो से अलकृत कुसुम कोमलता में भी व्रतनियमादि मे दढता के द्योतक उभरी ठुडिडयो वाली ये कन्याएँ साक्षात् कुसुमित कल्प बेली सी लग रही थी। यद्यपि ये दोनो हथेलियो में रत्नो को भर भर कर श्रावको की ओर फेंका करती थीं पर वहाँ कोई इन जड रत्नो की ओर ध्यान नही दे रहा था। जिस प्रकार उस समवसरण में तृप्ति का साम्राज्य था उसी प्रकार की तृप्ति इस समवसरण में भी थी। तृप्ति और आनद का ही साम्राज्य था।

जन्माभिषेक कल्याणक का अभिनय प्रारम्भ हुआ। तब भावकों के नेत्रों से आनंद वाष्प बह निकला। देवेन्द्र बनी अत्तिमब्बे ने इन्द्राणी बनी हुई गुंडमब्बे को अंदर भेजा और आप उसकी प्रतीक्षा करती हुई सी उत्कंठ मुद्रा में खड़ी रहीं। इन्द्राणी का कार्य बड़ा दुष्कर था। क्योंकि जिन-शिशु को ले आना था। वहाँ पहले उस की माँ को मोहनिद्रा में सुलाकर दूसरे मायावी शिशु को वहाँ रखना था। तब जिन शिशु को गोद लिए आना था। उस दृश्य का अभिनय इस सफलता के साथ उसने किया कि उसमें अभिनय का भ्रम ही नहीं रहा। सब के सब पुलकित हुए। बाहर जिन-शिशु के दर्शनार्थ उत्कंठित होकर खड़े हुए इन्द्र ने अर्थात् अत्तिमब्बे ने उस शिशु को देखते ही इस ममता के साथ उसे गोद में उठाकर गले लगाया कि सचमुच वहाँ उपस्थित माताएँ भी मात मानें। तत्पश्चात् उस जिन शिशु को ऐरावत पर बिठाकर मेरुपर्वत ले जाने का अभिनय हुआ। वहाँ ले जाने पर पाण्डु शिला पर बिठाकर और क्षीर समुद्र के फेनिल पय से क्षीराभिषेक हुआ यों तो जिन मूर्ति पर सचमुच क्षीराभिषेक कर दिया। इस मोहक दृश्य में भावक ऐसे तल्लीन थे कि उन्हें अभिनय और यथार्थ में अंतर का अनुभव ही नहीं हो रहा था। इस प्रकार इन बालिकाओं ने पंचकल्याण महोत्सव का अभिनय कर दिखाया कि भावकों का चित्त रसाप्लुत हुआ और देह आनंद पुलकित। उस दृश्य को देखते हुए नेत्र टकटकी बाँधे रह गए।

पंप महाकवि यह दृश्य देखकर पुलकित हुए। उनकी दृष्टि में अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे दोनों काव्य-कलिका सी बनीं। जिनराजी का भक्तिभाव व्याप्त था। पोन्नकवि रस प्रवाह में बह गए। नागमय्य के नेत्रों से आनंदवाष्प बह निकला। अभिनय समाप्त हुआ कि वहीं नागमय्य ने इन दोनों बालिकाओं को वेशभूषा उतारने का भी समय नहीं दिया यों ही गोद में बिठाकर वात्सल्य भाव से

गद्गद् हो गए। स्त्रियो की पंक्ति में सत्र के सामने बैठी हुई अब्बकब्बे मानो पयोबुधि में तैर रही थी। चालुक्य महामात्य दल्लप नागमय्य की बगल में ही बैठे थे। अतएव ज्योंही नागमय्य की गोद में इन बालिकाओ को देखा त्योंही उनको अपनी गोद मे बिठा लिया और उनको इस भांति कसकर गले लगाया मानो यह दताना चाहते हो कि वे कभी अपने हाथ लगी इन निधियो को पराए हाथ नही सौंप सकते।

पप कवि के काव्यवाचन सुनने का चाव श्रावको में क्षण-क्षण बढ रहा था। कवि के सम्मुख ग्रन्थ सजा हुआ था। अरिकेसरी ने श्रीगध एव सोने के पटलो पर काव्य लिखवाया था। पप कवि को सुवण-सपुट भेंट में दिया था।

प्रथम तीर्थश के दिव्य जीवन चरित को एक ओर पप महाकवि ने महाकाव्य में निबद्ध किया था तो दूसरी ओर अरिकेसरी ने उस महाकाव्य का सुवण सपुट निकाला था। पप कवि के सुवण सपुट मे चादी के रत्नजटित चौवट थे। पप कवि ने सर्वप्रथम काव्य से मगलाचरण के पद्य सुनाए। पचपरमेष्ठियो का स्मरण भक्ति भाव से किया। पप की वाणी दुदुभी-ध्वनि के समान लग रही थी पप कवि के श्यामल मुख की सित दत पक्ति शुक्ति में स्थित मोती का स्मरण दिला रही थी।

आदिदेव का दिव्यदर्शन, स्वय कवि के श्रीमुख मे जो सदर्भानुसार रागरागिनियो में अभिव्यक्त हो रहा था तो, सुननेवाले श्रावको के भाग्य का द्वार ही मानो खुला हुआ था।

यद्यपि जयवर्मा ज्येष्ठ पुत्र थे पर उनके पिता अपने कनिष्ठ पुत्र को राज्य देकर चल बसे। इससे जयवर्मा को बडा आघात पहुचा। नागरिक जीवन से जी ऊब उठा, कानन की ओर आकृष्ट हुए। विरक्त बने। अपने हाथ से अपने सिर के बालो को कसकर उखाड लिया और

जिज्ञासा भी चमत्कार जपते जपते जयवर्मा उन केशों को मगन हाथ से बांबी में डालने लगे तो सहसा साँप ने काट खाया। उसी समय आकाश में एक खेचर विमान दिखाई दिया। एक ओर विष की लहर चढ़ रही थी दूसरी ओर खेचर दम्पति की रसीली प्रेम भरी बातें सुनाई दे रही थीं उनकी मनमोहक आकृति मन को बरबस अपनी ओर खींच रही थी। परिणाम यह हुआ कि जयवर्मा के मन में वैसे ही खेचर बनने एवं ऐसे ही विषय भोग करने की लालसा प्रबल हो उठी। उस खेचर विमान के साथ इन के अंतरंग की कल्पनाएँ भी उड़ने लगीं। इसी धुन में जयवर्मा के प्राण पखेरू उड़ गए—इस कथा का सुंदर निरूपण पंप महाकवि ने किया। वहाँ उपस्थित सहृदयों पर मानो जादू फिर गया। पूर्व कर्म के उत्थान पतन रूपी उत्पात का साक्षात्कार केवल विलासवती को हुआ अतएव आप बड़े खिन्न बने। अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे की समझ में यद्यपि कोई बात नहीं जमी फिर भी पंप कवि की गंभीर ध्वनि में खूब ही गर्मी थी। अतएव वे एकाग्र भाव से सुन रही थीं।

कथा आगे बढ़ी। जयवर्मा अगले जन्म में महाबल खेचर बने। उनके अंतःकरण में जो जो लालसाएँ अंतिम क्षण में जागृत हुई थीं सभी व्रत के प्रभाव से सब पूर्ण हुईं। उन्होंने अपने को धन्य समझा। उनके स्वभाव के अनुरूप सचिव भी मिले जिससे महाबल की भोगलालसा दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी। पर स्वयंबुद्ध नामक एक अमात्य भी था जो कभी कभी भोगों की नश्वरता का स्मरण दिलाया करता था। परिणाम यह हुआ कि महाबल खेचर अपने अंतिम दिनों में परम विरक्त बने। उन्होंने भोगों का त्याग किया। दिगम्बर बने इस प्रकार अंतिम साँस छोड़ी—पंप महाकवि ने महाबल के धार्मिक जीवनोत्कर्ष का बड़ा आकर्षक वर्णन सुनाया। श्रावकों के मन पटल पर उसका चित्र अंक गया। यहाँ तक कि अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे

भी पप महाकवि के काव्य की कमनीयता का अनुभव करने लगी।

महाबल खेचर का जीवन समाप्त हुआ। ईशानकल्प में एक सहस्र दल कमल आप विकसित हुआ। उस में से षोडश वर्षीय एक देव प्रकट हुआ। स्वय आश्चर्य चकित हो वह चारो ओर देखने लगा। तब वहाँ उपस्थित वद्धो ने कहा—तुम पूवजन्म में महाबल थे। अब तुम्हारा जन्म देवयोनि मे हुआ है। तुम्हारा नाम ललिताग रहेगा।

सहस्रो देवागनाओ के साथ नित्य रास लीला में ललिताग का जीवन चाव से ढलने लगा। नित्य नया रग रचा जाता। स्वयप्रभा नामक देवागना पर ललिताग विशेष आसक्त रहा। चिरकाल तक उसके प्रणय सिन्धु में पैठा रहा। देवलोक में भी मृत्यु आ धमकी। ललिताग को मृत्यु की सूचना मिली। उसके सहजाभरण और सहज कुसुम मालाएँ मलिन हो गई। शरीर की काति फीकी पड गई। मौत की आहट पाकर ललिताग काप उठा। कसकर कल्पवृक्ष पकड लिया और आयु की माग की। कामधेनु के चरणो पर लिपटकर मृत्यु से बचाने की प्रार्थना की। चूडामणि को गले बाधकर गिडगिडाया। अत में अपनी प्रेयसी स्वयप्रभा की शरण में गया। उसे सब की सहानुभूति यथेष्ट प्राप्त हुई पर कोई उसे एक दिन के लिए भी नही बचा सका। वहाँ के वद्धो ने कहा—यद्यपि यह देव लोक है फिर भी यह नाशवान है। मरने के लिए ही हमारा जन्म होता है। अतएव शोक का त्याग-करो और बचे हुए दिनो को जिनेंद्र के भजन में बिताओ। ललिताग में विवेक जाग्रत हुआ। बचे हुए छ महीनो को जिनबिब के दशन और पजा में लगाया। देवागनाओ ने पूजाद्रव्य जुटा कर हाथ बँटाया। कल्पवृक्ष ने फल दिया। कामधेनु से जिनाभिषेक के लिए अमृत धारा प्राप्त हुई। जिनबिब की चरण सेवा करते करते पचनमस्कार जपते जपते ललिताग ने प्राण-त्याग किया। महाकवि पप ने इस भाति ललिताग के स्वगच्युत होने के प्रसग का वर्णन

सुनाया कि सब अनुभव करने लगे मानो वे स्वयं स्वर्ग से वंचित हुए हों।

तदनन्तर पंप कवि ने स्वयंप्रभा के विरह का वर्णन किया। इससे श्रोताओं का कोमल अन्तःकरण पिघल कर बह उठा। सब को आँसू बहाते देखकर अत्तिमब्बे और मुगुमम्म भी आँसू बहाने लगी।

ललितांग का अगला जन्म मानवयोनि में हुआ। मर्त्य लोक में उसका नाम वज्रजंघ पड़ा। स्वयंप्रभा उसका विरह ताप से जल रही। वह भी इस लोक में आई। उसका नाम श्रीमती था। यहाँ श्रीमती और वज्रजंघ का विवाह हुआ। उन्होंने यथोचित रीति से अनन्तकाल तक अनन्तसुख भोगा। एक दिन की बात है। सेवकों ने शयन के शयनागार में सुगंध धूम लगाकर गवाक्ष बंद किया। ऐसा नियम किया करते थे। पर उस दिन धुआँ अधिक उठने लगा। दैव वश प्रेरणा से उन्होंने खिड़कियों को इस भाँति बंद किया कि सब धुआँ रुक कर इन के श्वास मुख में बाधा नहीं डाल सके। परस्पर बाहुपाश लिए रात भर विहार करते रहे। पर उसी मुद्रा में न जाने कब इन दोनों के प्राण पखेरू उड़ गए थे। सबेरे सेवकों को कलेवर मात्र मिले। यही तो प्रणय जीवन का आदर्श है! पंप कवि ने इस अध्याय को समाप्त किया। श्रोताओं की भावुकता रस-धारा बन बह चली।

अगले जन्म में इन दंपतियों का जन्म भोग भूमि में हुआ। वहाँ चारण मुनियों को भक्ति से भिक्षा-दान करने के पुण्य प्रभाव से अगले जन्म में भोगभूमिजा स्वयंप्रभा स्त्री जन्म से निवृत्त होकर स्वयंप्रभ देव बन गई। तदनन्तर जन्म में श्रीधरदेव सुविधि नामक महाराजा बने। स्वयंप्रभ सुविधि का पुत्र केशव बना। इस प्रकार पंप कवि ने आदिदेव बनने तक की भवावली का निरूपण संक्षेप में सुना दिया।

आदिदेव बड़े रम्य रसिक थे उनकी रसिकता में उनकी

प्रयसी यशस्वती एव सुनदा के योग से चार चाद लगे। दिन दूनी रात चौगुनी वेग से उसकी रसिकता रग पकडने लगी। तीन लोक के गुरु वननेवाले आदितीथ कर ससार मे ऐसे मग्न हुए मानो ससार को ही जीवन का सार-सवस्व मान रहे हो। आप को जगाने के लिए देवेद्र को नीलाजना के नृत्य की व्यवस्था करनी पडी। लता सी कोमल, मदन चाप सी, आमूराकार, उस सुदरी को झूले पर झूलते हुए देखकर आदिदेव भी आसक्त वने। पर उस सुर-वारवनिता का अत उस रगशाला मे ही हुआ। मानो कला मे वह कमनीय काति लीन हो गई। रग मे भग न हो इस आशय से यद्यपि देवेद्र ने उसकी प्रतिकृति सृष्टि करके अभिनय को चालू रखा। पर आदिदेव ने इसे ताड लिया। उनको अपने जीवन का लक्ष्य स्पष्ट दिखाई देने लगा। जातरूपधर वन पण्मास तक तप किया। भिक्षाटन करते और छ महीने विताए। पिछले भवो में स्वयप्रभा, श्रीमती, भोगभूमिजा आदि वनकर आदिदेव के जीवन को रसमय वनानेवाली आत्मा, उस जन्म में श्रेयास वन, प्रतीक्षा कर रही थी। जैसे ही उसने आदिदेव को अपने द्वार पर देखा, ईख के रस से उनके अजली-पुट को भर दिया। उस का पान करके आदिदेव सतृप्त हुए। आगे चलकर कुछ समय तक आदिदेव तप करते रहे। अत में उनके घातिकर्मों का नाश हुआ और वे जिनेन्द्र वने। तीनो लोको में जीव के नाना जन्मो के कारणी भूत कर्म की जटिलता का स्वरूप उन्होने जाना और उससे निवृत्त होने का उपदेश दिया, कर्म से छुटकारा पाने का उपाय भी सुझाया।-

पप महाकविकी दिव्य वाणी ने इस प्रकार आदिदेव के दिव्य जीवन का, जीता जागता वर्णन सुना दिया।

तव तक रात वीत गई थी और उषकाल की रमणीय छटा छाई हुई थी श्रोतागण महाकवि का यशोगान करते करते अपने अपने घर गए।

अत्तिमब्बे दौड़कर पंप के पास आई और बोली— मामाजी बड़ी सुंदर कथा है !

इतना कह अपने कंठ से मुक्ता हार निकालकर पंप के गले में पहना देना चाहती थी कि उधर गुंडमब्बे भी भागते भागते आई और बोली— तुमने तो मामाजी हम दोनों को देवलोक के दर्शन करा दिए – यों कहते कहते वह अपनी रत्नांगुलीय को उतारकर पंप कवि की अंगुली में पहनाने का उपक्रम करने लगी। देखो बेटा ! तुम्हारे यह गहने मुझे नहीं चाहिए। क्या तुम मुझे मनचाहा दे सकोगी ?— ऐसा कह अवसर उनका कुतूहल-पूर्ण और उदार मुख देखकर उनको अपनी ओर खींच लिया और उनके मुखमुद्रा का चुम्मा लेते हुए कहा— यह चाहिए, समझी ! दोनों से अपनी मनचाहा पुरस्कार पाकर कवि अपने को धन्य समझने लगे। अवर्णनीय वात्सल्य रस में बह गए।

२

अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे का विद्याभ्यास जिनभवन की में यहाँ होने लगा। प्रतिभावान शिल्पि के हाथ में पड़ने पर क्या पत्थर भी सुंदर विग्रह बन जाता है तब अमृतशिला का कहना ही क्या ? शिल्पि का श्रम कम होगा और मूर्ति भी सुंदर बनेगी। इन दोनों बच्चियों की शिक्षा सुदृढ़ धार्मिक नींव पर प्रारंभ हुई। उस नींव पर महाकाव्य के सौंदर्य और रीतियों का महल खड़ा कर दिया गया। कुमारव्यास भारत भी से मुख्य इन बालिकाओं को संगीत एवं नर्तन में भी शिक्षा दी गई। खिले हुए कमल से निकलने वाले मकरंद पान मत्त भ्रमर के समान स्वर उनके मुखारविंद से निकला करता था।

मानमब्बे का घर क्या था कवियों और कलाकारों का अड्डा था। वह उनके लिए आश्रयदाता साक्षात् सुरतरु थे। प्रातःकाल से

सध्या तक वहाँ रसधारा प्रवाहित रहती थी। धार्मिक सिद्धातो का निरूपण भी होता रहता था। ऐसे वातावरण में रहनेवालो पर, विशेष कर बच्चो के मन पर उसका प्रभाव पडना अनिवार्य ही था। श्रीगध के कारखाने मे जाने पर चाहे या न चाहे शरीर सुगधि से लिप्त होता ही है।

अन्निमव्वे और गुडुमव्वे दोनो वीर पुत्रियाँ थी। मल्लप इन के पिता थे, और परमवीर नागमय्य दादा। आगे चलकर इन लडकियो को किसी न किसी वीर की वहू बनना ही था। अतएव क्षात्र वातावरण में रहनेवाली इन लडकियो ने क्षत्रियोचित विद्याएँ भी सीख ली। तलवार की धनी बन गई। घुडसवारी मे सहज ही निपुण बन गई। भाइयो के समान दोना पहली श्रेणी की तीरदाज भी बन गई। मछलियो की सताने क्या किसीसे तैरना सीखती है?

वसन्त मारुत के स्पर्श से पुलकित कल्पना सी दोनो लडकियो ने तारुण्य में प्रवेश किया। सहज सुदर इन तरुणियो पर सस्कृति कालिकत और क्षात्र तेज की रोली खूब फब रही थी। इनको देखने मे अभी अभी सुनार के यहाँ से आई सुवर्ण प्रतिमा का भान हो रहा था। यद्यपि दोनो लडकियाँ नव यौवन में पदार्पण कर चुकी थी, पर नागमय्य की दृष्टि में अभी तक वे दुधमुही-सी थीं।

जिनचद्र मुनि अत्यत वृद्ध बने। कमर झुक गई। हाथ पैर कापने लग। आँखें कम सूझ रही थी। बिना छाटे जिनमुनि अन्न स्वीकार कर नही सकते थे। इधर नागमय्य की उम्र भी करीब करीब वही थी। पर अखाडे में गठित वदन थी। अभी शक्ति कुठित नही हुई थी। पर आध्यात्मिक चिनन में सदा व्यस्त अंत करण ससार से ऊब उठा था।

एक वार जिनचद्रजी ने कहा-- नागमय्य! मुझे अव सल्लेखन दीक्षा लेनी होगी।

नागमय्य के सिर पर मानो बिजली टूट पड़ी। कुछ नहीं बोले।

क्या चुप हो ?— जिनचन्द्रजी ने और छेड़ा।

जी अब आप सल्लेखन व्रत लेंगे तब मेरा क्या होगा ?

तुम्हारा क्या होगा ! यहां कौन किसका है सब अपना अपना देख रहे हैं। अपना राग और अपनी डफली यही दुनिया की रीत है। अब मेरा जिन्दा रहना ठीक नहीं क्योंकि अब मेरा जीना क्या है अधिक से अधिक व्रत भ्रष्ट होना और औरों पर बोझ बन कर रहना है। जिस दिन शरीर भिक्षाटन के लिए असमर्थ हो जाय उसी दिन सल्लेखन लेने की विधि है।

जो हो। अब तक मैं जिन्दा हूं आप को सल्लेखन व्रत लेने की आवश्यकता नहीं है। आप के बिना मैं जीवित रहना नहीं चाहता।

यों कहते कहते नागमय्य का गला बैठ गया। अस्सी वर्ष से साथ साथ जीवन बिताया था।

नागमय्य ! देखो यह मोह-कर्म तुम्हें सता रहा है। इतने दिनों तक धार्मिक क्षेत्र में साधना करने पर भी तुम्हारा अज्ञान दूर नहीं हुआ। बताओ मैं कौन हूं और तुम कौन हो ? जब शरीर तक हमारा अपना नहीं है तो और किस का भरोसा है ? शरीर तक कर्म का परिणाम है। आत्मविकास के मार्ग में यह भी बन्धन है। इस कर्म का नाश करना ही होगा। जब तक व्याकरण अलंकार छन्द आदि रस के पोषक बने रहते हैं तब तक काव्य में उनका स्थान है। जब उनसे रसास्वादन में विघ्न हो या रसाभास का वे कारण बनें तो उनको काव्य से हटाना ही होगा। इसी भांति इस देह का स्थान-मान भी है। अब तक यह शरीर तपस्या के लिए उपयुक्त था। अब यह थका हुआ है। अब मानो यह कह रहा है कि अब मुझसे यहां नहीं जाता।

अधिक मत सताओ। बेचारे पर मैं अधिक बोझ डालकर दबाना नही चाहता। अतएव सल्लेखन ग्रहण करने की स्वीकृति दे दो।

महाराज, — नागमय्य बोले— आप बडे अनासक्त हैं। अनायास ऐसी बातें करते जा रहे हैं, पर मुझे कुछ नही सूझ रहा है।

नागमय्य! महर्षियो की महानवमी मौत ही है। क्या तुमने श्रवणबेलगोल में नही देखा? पद पद पर सल्लेखन की महिमा-द्योतक फलकें लगी हुई हैं। शिला पर अकित सल्लेखन-व्रती महर्षियो की नामावली की भी कोई अत है? वे आज भी नक्षत्र की भाति जाज्वल्यमान हैं। जीवन भर समाधि-मरण की कामना करते हुए अतकाल मे उसे पाकर धन्य बने महर्षियो के जीवन-वृत्त को अपने सिर आँखो पर रख कर विश्व को सुनानेवाली ये चट्टाने क्या भुलाई जा सकेगी। श्रवण-बेलगोल मानो इनका आगार है। समाधि-मरण का प्रधान केंद्र है।

जिनचन्द्रजी की वाणी में आवेगा का कपन स्पष्ट था।

गुरुजी, तब आप मुझे भी वह व्रत दे दीजिए। मैं आप का अनुचर हूं। जीवन भर आप के मुह से कभी न नही निकला है। पूजा समय साथ देनेवालो को क्या कोई प्रसाद बाँटते समय खाली हाथ वापिस कर देगा? मुझे भी सल्लेखन की दीक्षा दे दी जाय।

नागमय्य आँसुओ से मुनि के चरण धो रहे थे।

अरे नागमय्य, उठो। मैं तपस्वी हू और तुम भाव तापसी हो। तुमने साधु-सता की सेवा करते करते कर्म को मगल स्रोत बना लिया है। कवियो के भाग्य का कल्पवृक्ष बन कर तुमने लोभ को कुचल डाला है। दीनो के लिए कामधेनु बनकर तुमने विश्वानुकपा की साधना की है। उस दिन जब तुम्हारी पोतियो ने गर्भावतरण का अभिनय किया था तुमने सचमुच की रत्न-वृष्टि करके पुराणो में लिखी बात को प्रत्यक्ष कर दिखाई थी। तुम बडे महानुभाव हो। यदि मैं चल बसू तो मुझ जैसे दस-एक विरक्त तुम्हारे आश्रय मे आ सकते हैं।

अब धैर्य पूर्वक मुझे सल्लेखना की अनुमति मिल जाय।

मुनिजी ने धीरज बंधाया।

मुनी! आप का कहना यथार्थ है। पर आप मिरतन करते करते मुझसे जायें और मैं देखता रहूं। यह नहीं हो सकता।

नागमल्ल की वाणी कांप रही थी।

नागमल्ल! अनन्त काल से मेरे अनन्त जन्म हुए हैं। न जाने कितनी बार जन्मा और कितनी बार मरा हूँ। मरने के लिए जन्मा। जन्म लेने के लिए मरा। कितने भवों में कैसे कैसे निकृष्ट जीवन बिताए हैं? स्त्रियों के पीछे मरनेवालों की क्या कमी है? जमीन जायदाद के लिए हाय-हाय करनेवालों की क्या गिनती है? कनक के पीछे काल के कवल बननेवाले कापुरुष कितने नहीं होंगे? किसी ने इनका हिसाब लगाया है? पर धर्म के नाम पर मरनेवाले कहाँ मिलते हैं और मिले भी तो कितने मिलते हैं? जब मरना अनिवार्य है तो धर्म के नाम पर क्यों न मरें। आत्मोद्धार के निमित्त मृत्यु को क्यों न गले लगायें। मनोदौर्बल्य को दूर करो। उठो! हृदय से इस सल्लेखना का अनुमोदन करो। अनुमोदन पुण्य तुम्हारा हो!

जिनचन्दजी ने सांत्वना दी।

सुनिए! मैं आप के स्वार्थ का रोना नहीं रो रहा हूँ। मैं तो केवल अपने लिए सल्लेखना व्रत की दीक्षा मांग रहा हूँ। यदि उस महाव्रत से आप की भलाई होगी तो क्या मेरी भलाई नहीं हो सकती? आप के साथ मैं भी अलौकिक त्याग कर बैठ जाऊँगा। अर्जुन के साथ रहकर कायर उत्तरकुमार भी साहसी बन गया था। उसी भांति आप के साथ रह कर मैं भी वही बनना चाहता हूँ। आप अनुग्रह कीजिए। मेरी कामना पूर्ण हो!

पति के साथ चितारोहण करनेवाली स्त्री के समान नागमल्ल अनुमति के लिए गिड़गिड़ा रहे थे।

जिनचन्द्रजी आवाक् बने। क्या किया जाय ? नागमय्य को सल्लेखन दीक्षा दें तो उस के परिवार के लोगो पर क्या बीतेगा ? वे क्या कहेगें ? ऐसे सोचते सोचते फिर भी नागमय्य की थाह लेने के सकल्प से बोले।

नागमय्य ! मैं तुम्हे सल्लेखन नही दे सकता। तुम गृहस्थ हो। तुम्हें अनवरत साधना करते करते क्रमश महामुनि का पद प्राप्त करना होगा। तभी महाव्रतो के अनुष्ठान का अधिकार प्राप्त होगा। क्षणिक आवेश में आकर सहसा व्रत ले बैठना ठीक नही। सल्लेखना का अर्थ केवल अन्न जल का त्याग नही है। रागद्वेश का सर्वथा त्याग करना होगा। मृत्यु को प्रेयसी के समान गले लगाना होगा। विना साधना के ऐसे महाव्रतो की दीक्षा नही लनी चाहिए।

नागमय्य ने दृढता से उत्तर दिया —

गुरुदेव ! क्या मै कोई बच्चा हूँ ? भसुर कुल में मेरा जन्म हुआ है। क्षात्र में जीवन बिताया है। मन जैन धम की श्रेष्ठता पर मुग्व हुआ है। मेरे चारो ओर सदा धार्मिक वातावरण रहा है। उसीसे मेरा जीवन ओत-प्रोत है। तिसपर आप गुरु होते हुए अपने शिष्य पर सदेह करें तो मैं क्या कहूँ ? न जाने मेरी क्या दुर्गति होगी !

नागमय्य ! तुम्हारा आग्रह माना भी जाय तो एक वात विचारणीय है। सल्लेखन देने के सबध मे अनेक बातो पर विचार करना पडता है। जब चाहे तब दें या ले – ऐसा यह व्रत नही है। यदि देश में अकाल पडा हो या शरीर में असाध्य रोग घर कर बैठा हो या शरीर अत्यत दुर्बल हो गया हो तो साधक सल्लेखन ले सकता है।

ठीक है। यह तो सामान्य नियम है पर जिनचन्द्रजी के शिष्यो के लिए यह नियम लागू नही हो सकता। इसका अपवाद भी अवश्य होगा।

तुम्हारे पुत्र मानें तो मेरी कोई आपत्ति नही।

महाराज ! क्या यह ठीक है ? कटघरे में पडे हुए शेर को

छुटकारा पाने के लिए क्या [illegible] अनमोल [illegible] नहीं होती? मौका [illegible] में भी दुर्लभ [illegible] है। आपने मुझे भिन्न-भिन्न [illegible] आना जानी क्यों [illegible] मन ही मन [illegible] साथ [illegible] भी सोचिए क्या आप [illegible] जो कर्मारण्य में भटकने छोड़कर आप [illegible] जाय — [illegible] शांति है?

[illegible] मौन रहा। चिन्ता-मग्न से बैठे रहे। [illegible] नाससम्य की आँखों में [illegible] देखा। अपने अन्तर्ज्ञान से [illegible] लिया कि नाससम्य की आयु भी समाप्त होने आई है। तब वह [illegible] मस्कुराते बोले।

[illegible] चिन्ता न करो। मैं तुम्हें भी सल्लेखना दूंगा पर कुछ सुधार के साथ। [illegible] आहार का प्रमाण कम करते जाना चाहिए। बत्तीस [illegible] से [illegible] आरम्भ कर और एक एक कौर कम करते जायें। इसी भांति पानी का प्रमाण भी कम होते जाय। साथ ही आत्मचिंतन में मन लगाते जाना चाहिए। देह की [illegible] पर दृढ़ विश्वास रखना चाहिए। परमात्मा के अतिरिक्त अन्य सब वस्तुओं का स्नेह छोड़ देना होगा। अनुभव में यह रखना होगा कि [illegible] रागद्वेष रोग आदि परम ज्योति स्वरूप आत्मा पर [illegible] कर्म [illegible] हैं। इस देह की ममता का त्याग कर परम ज्योति के चिंतन में मन लगाए रखना होगा। ऐसा करते करते स्वयं परम ज्योति रूप बन जाओगे।

[illegible] यह सुनते ही नाससम्य ने भक्ति भाव से चरणों में दण्डवत किया और चरण धूलि लेकर उसे अपने माथे पर लगा लिया।

⊠ ⊠ ⊠

जिनचन्द्रजी के सल्लेखन की वार्ता हवा के साथ साथ चारो ओर फैल गई। लोगो ने नागमय्य के लघु - सल्लेखन की बात भी सुनी। मल्लप और पुन्नमय्य ने उन ... की कठोरता के कारण उसका न रहना ही उचित समझा, यहा तक कि उसे स्वीकार करने के सबन्ध मे अपना विरोध भी ...न किया। मल्लप के परिवार का परिवार ही आ कर जिनचन्द्रजी के सामने गिडगिडाया। अन्त मे कम मे कम, अपने दादा को इस धार्मिक घोर अत्याचार मे मुक्त कर देने की प्रार्थना की। नागमय्य के आठ पोते थे। अपने दादा का धर्म के नाम पर अन्न-जल लिए बिना मर जाना उनको भी अच्छा नही लगा। उन्होने नागमय्य पर भर पूर दबाव डाला। रोए! कलपे। सन्यासियो की बात अलग है। दादा तो गृहस्थ है। गृहस्थो को इस प्रकार कठोर दीक्षा देना सरासर अन्याय है — इस प्रकार जिनचन्द्रजी के सामने विरोध व्यक्त किया। जक्किमव्वे ने आग्रह पूर्वक कहा — दादाजी चाहे तो काषाय धारण करे उन्हे सल्लेखन की आवश्यकता नही है। हम कभी इसे नही मानेंगी। गुड्डमव्वे ने स्वय दादा के साथ अन्नजल त्यागकर बैठजाने की धमकी दी।

नागमय्य के परिवार रूपी नंदनवन पर भयकर आधी बह निकली। ऐसा लगा कि नाग ... उपवन उजड जायगा। मल्लप को जैन धर्म की यह निष्ठुरता खटकने लगी। पुन्नमय्य ने कहा दाना-पानी छोड आत्महत्या करे और उसे भी सल्लेखन महाव्रत कहकर सम्मान दे यह अनर्थ है, और अधर्म भी! गुड्डमव्वे ऐसे चुपचाप बैठे रही मानो सिर पर बिजली टूट पडी हो। ...मय्य ऐसे चटपटा रहे थे मानो उसे झपकी लगी हो। हारे हुए जुआरी की भाति चिक्कपोन्नमय्य सिर झुकाये बैठे थे। आहवमल्ल सोच रहे थे कि किस प्रकार इस धार्मिक अत्याचार को रोका जा सकेगा। मल्ल ने समझा कि अब दादाजी नही रहेंगे। इस कारण से एक ओर खिन्न बैठे थे। औरो को रोते

कलपते देखकर नागकन्या भी रो पड़ी। अब्बक्का को इतना दुःख हो रहा था मानो अपनी माता का देहान्त अभी अभी हुआ हो।

सहसा जल्दी आने की सूचना पाकर दोनों कवि पुणनूर दौड़े आए। पंप महाकवि सरपट चले आए मानो हवा में उड़ते उड़ते आए हों। सारी परिस्थिति समझ में आ गई। जिनचन्द्र मुनि जी और नागमम्म के अंतरंग की बातें समझने में देर न लगी। इन दोनों कवियों को एकांत में बुलाकर नागमम्म की अंतिम दिन की सूचना जिनचन्द्रजी ने दी। संस्कार संपन्न दोनों कविवरों ने सल्लेखना का अनुमोदन किया। सल्लेखना के पूर्व जिन नियमों का पालन करना ही था उन की ओर जिनचन्द्रजी का ध्यान पंप कवि ने खींचा। सल्लेखना अनिवार्य मानी गई पर जानबूझ कर पंपकवि ने एक सप्ताह भर उस को किसी बहाने टला दिया। निश्चय हुआ कि अभयचेल्लमोल से नागमणय के मातापिता अर्थात् मल्लपय्य और कालब्बा दंपती को बुलाया जाय। नागमम्म के परिवारवालों को विरोध कर मोहियों को समझाने में सांत्वना देने में पंप और पोन्न दोनों को जमीन आसमान एक करना पड़ा। अंत में रहस्य में जिनचन्द्रजी ने अवधि ज्ञान से जानकर जो कुछ आयुर्दाय के बारे में बताया था उसका भी उल्लेख करना पड़ा। पोन्नमय्य अभयचेल्लमोल गया और मल्लप पुणनूर में सल्लेखना के लिए आवश्यक प्रबंध करने लगे।

जिनचन्द्रजी दैवज्ञ थे। उन्होंने सल्लेखना के लिए शुभ तिथि वार, लग्न आदि का निश्चय किया। भक्ति पूर्वक अंतिम आहारादि की विधि पूरी की गई। मध्याह्न के पूर्व जिनचन्द्रजी भिक्षा के लिए निकले। उनकी बगल में पिंछ था। बाएं हाथ में कमण्डलु था। और दाहिना हाथ कंधे पर था। मार्ग भर के सभी जैन गृहस्थों के यहाँ उत्साह उमड़ आया था। सब ने द्वार-द्वार धूप जलाए रखा था। दरवाजे खड़े रहे थे। एणोली से घर द्वार की शोभा अवर्णनीय

बनी थी।स ब ने मुनि जी को भिक्षा देने मृष्टान्न बनाया था। पानी और पक्वान्न लिए द्वार पर प्रतीक्षा करते खडे रहे। मगलद्रव्य लिए सुहागिनें खडी थी। पता नही रहता कि किसके यहाँ मुनिजी भिक्षा स्वीकार करेंगे। भाग्यवश अपने घर आ जायँ तो ? क्योकि श्रावको का विश्वास है कि जैन मुनि को भिक्षा देने से गोम्मटेश्वर को महामस्तकाभिषेक कराने के बराबर पुण्य प्राप्त होता है। तब सोचिए कि श्रावको का उत्साह क्यो न उमडे ?

इधर जिनचन्द्रजी निर्विकार भाव से रास्ते पर चले। कौन जाने ये कहाँ खडे होगे। सब की दृष्टि अपने अपने घर उनका स्वागत कर रही थी। धीरे धीरे मुनि जी आगे बढते गए। एक गृहस्थ के द्वार पर आ खडे हुए। दपति ने आकर पाद-प्रक्षालन किया पर न जाने क्या हुआ, वे आगे बढे। भिक्षादान का भाग्य यो अचानक खिसकते देख कर वे खिन्न हुए। पर करें क्या !

ऐसे ही दो-एक जगह और हुआ। अत मे जिनचन्द्रजी की सवारी नागमय्य के यहाँ आई। मल्लप और उनकी धर्म पत्नी अब्बकब्बे ने आगे बढकर अर्घ्य-पाद्यो मे मुनिवर्य की पूजा की। प्रतीक्षा कर ही रहे थे। झटपट जो कुछ करना था किया। तिष्ठ तिष्ठ कहते हुए मुनिजी की परिक्रमा की। दंडवत किया। न्योछावर किया और हृदय से स्वागत किया।

घर के अदर ले जाकर पादपूजा की। विधि है कि मुनि खडे खडे अन्न स्वीकार करें। विधि का पालन हुआ। घर के सभी लोगो ने आ आकर मुनिवर्य के हाथ में एक एक कौर अन्न दिया और अपने जन्म को ही सफल माना। मुनिजी बाईं हथेली पर दाहिनी हथेली रखकर, अगूठे मे छान छानकर, परीक्षा करके, कौर मूँह में रख लेते थे। नागमय्य पप, आहाव, मल्लप एव उनके परिवार के सब लोगो ने अन्न-दान दिया। जो जो गृहस्थ अपने घर पर मुनि

को मिला न पाए। भक्त दौड़े दौड़े वहाँ आए और मुनिजी की हथेली पर खीर रख कर कृतकृत्यता का अनुभव करने लगे। मेघधर कन्याओं के समान मधुर अग्निमत्र और गन्धमय । इस अन्न-मन्त्र में सम्मिलित हुई। किसी पर अपनी आसक्ति न दिखाते हुए केवल अनासक्त भाव से मुनिजी अन्न स्वीकार करते जा रहे थे। यथा अध्यात्माओं के लिए गए अनुभव में क्या लिप्तता हो सकती है? नहीं पर उस महर्षि के स्पर्श से अन्न का दिया तथा अन्तरंग माना सिद्धरस में ओतप्रोत सा बना। जैसे ही महर्षि ने अपनाए वैसे ही अपनी दाहिनी हथेली उठा ली। श्रावकों ने कलश से पानी दिया। उस से हाथ मुँह धो लिया। कुछ ही क्षण में अन्तर्मुखी हुए। उस मुद्रा में उसी प्रकार अचल दिखाई दे रहे थे जिस प्रकार जड़ सफेद में लगी मूर्ति रहती है।

⚜ ⚜ ⚜

बहिर्मुख होते ही जिनचन्द्रजी ने चन्द्रप्रभतीर्थंकर की पूजा की। भक्ति सहित जिनगन्धोदक का सेवन किया। उसे सिर आँखों पर लगाया। तीर्थंकर को साष्टांग प्रणाम किया और परमात्मा के सम्मुख समर्पण संकल्प किया। जिनालय के सभा-मंदिर में मल-मूत्र त्याग कर धर्मोपासना में तन्मय बैठ गए।

यह कैसा साहस है ! इसे देखने के लिए आसपास के गाँवों से लोग आने लगे। जैसे जैसे यह समाचार दावाग्नि के समान फैलते गया वैसे ही देश पर दूर से श्रावकों और आर्यिकाओं का दल आने लगा। साधु संतों का मेला पुनपुर में जम गया। जिनचन्द्रजी के बारे में प्रतिदिन समाचार प्राप्त कर लेने का प्रबन्ध इर्द गिर्द के राजा महाराजाओं ने कर लिया। चारों ओर भक्ति की बाढ़ सी उमड़ पड़ी। नकापुर से भक्ति सेनाचार्य भी आए। श्रवणबेलगोल के नेमिचन्द्राचार्य

जी पधारे। तलकाडु से महाबलय्य और उस की पत्नी काळलादेवी भी आई। उनके आने तक दो सप्ताह बीत गए थे। प्रथम सप्ताह में महाव्रती जिनचन्द्रजी को कभी कभी दिन-चर्या के लिए उठना पडता था। वे हँसते हँसते धार्मिक चर्चा मे भी भाग लिया करते थे। मुख पर मदस्मिति अकित रहती थी। भव्यात्माओ से पूण अनुकपा से मिलते रहते थे। नेमिचन्द्राचार्य एव अजितसेनाचाय जी को जैन-धम तथा जैन सस्कृति के प्रसार के लिए कटिबद्ध रहने की आज्ञा दी। महाबलय्य को अपने निकट बुलाकर अहिसा-वृ र की जड की रक्षा करते रहने का आदेश दिया। काळलादेवी के कानो में कहा देखो बेटी, तुममें धार्मिक महत्वाकाक्षा की कमी नही है। वह और बढती जाएगी तुम कृतयुग मे भरतेश द्वारा स्थापित 520 चाप प्रमाण बाहुबली की मूर्ति की कल्पना करके नित्य उसकी मानसिक पूजा किया करो।

ऐसे ही राष्ट्रकूट सावभौम मुम्मडी कृष्णराय को बुला कर समझा दिया कि सार्वभौमत्व की अपेक्षा आत्मज्ञान का साधन ऊँचा है अतएव आत्मसिद्धि में मन लगाते जायें। गग मारसिग को बुलाकर आदेश दिया कि निस्सग बनने का अभ्यास किया करें।

सल्लेखन के प्रारभिक दिनो में बारी बारी से आकर पोन्न, पप नागमय्य आदियो ने तीर्थंशो के दिव्य चरितो को सुनाया। इन पुण्य-चरितो का श्रवण करके जिनचन्द्रजी दैहिक कष्ट भूल कर आनद सागर में तन्मय हुए। सतान का मूँह देखकर जिस प्रकार दारुण प्रसव पीडा को माताएँ भूल जाती हैं इसी प्रकार परज्योति स्वरूप अपनी आत्मा के चितन में मगन मुनि जी क्षुत् पिपासादि परिषहो को भूले। तीथ कर पुराण श्रवण के बाद कुदकुदाचार्य के समयसार को सिद्धात चक्रवर्ति नेमिचन्द्राचार्य से पढवाया। अजितसेन से और एक बार उसे पढवाकर चाव से सुना। इस प्रकार शुद्ध जिन धर्म में तन्मय बने। जिस प्रकार शिकार के लिए तैयार खडे हुए साही

के पास कोई भटक नहीं सकता उसी प्रकार महर्षि के पास माया मोह मान लोभ आदि नहीं भटक सके। धीरे धीरे सदा निर्विकल्प समाधि में रहते हुए ज्ञानसागर की ज्ञानधारा की भांति बन गए।

सल्लेखना का तीसरा सप्ताह बीता। अब उठना बैठना कष्टकर प्रतीत होने पर सोए रहते थे। पर उनका चित्त पंचपरमेष्ठियों में लीन था। शरीर कृश बना पर दृष्टि तेज थी। कभी कभी ओठों पर मुस्कान खिल जाती थी। जिस मंदिर में मुनिजी बैठे थे वह औरों के लिए एक बड़ा पवित्र तीर्थ बना। हजारों की संख्या में लोग आ आकर भक्ति पूर्वक दूर ही से मुनि जी के दर्शन पा कर सदा उमड़ उमड़ कर आनेवाले जनसमूह को जगह देते हुए जा रहे थे। एक ही आसन पर सोए हुए मुनि जी की देह ठठरी मात्र बनी रही।

इधर नागमम्म नित्य मात्र संयम क्रम करने का अनुष्ठान किया करती थी। मल्लप्प और पोशमम्म अन्य सभी व्यवहारों का त्याग करके पितृ-सेवा में ही रहने लगे। उन्हीं के साथ सोते-जागते पहले उनको खिलाकर आप खाते। षोडशवर्षीय शांतिमल्ल और कुमुमल्ल रायाजी को अध्ययन करके बाद को माताजी के साथ मित आहार किया करती थी। एक ओर सदा अन्न-जल का त्यागकर पड़े हुए जिनचन्द्रजी थे। दूसरी ओर प्रतिदिन नियत रीति से एक एक कौर कम सेवन करनेवाले नागमम्म थे। इस कठिन व्रत के अनुष्ठान को देखते रहने पर भी धीरे धीरे शांतिमल्ल जीवन के परम रहस्य को समझने का सफल प्रयत्न करती रही। उधर भोगोपभोग पर उसके मन में विरक्त भाव दृढ़ होता गया। इधर कुमुमल्ल की दृष्टि में मोह बढ़ानेवाला नहीं रही।

जिनचन्द्रजी के सल्लेखना किए तीतीस दिन बीत गए। नागमम्म का पक्ष पूर्ण हुआ। अंतिम दिन पूर्ण निराहार बीता। पर उनके चित्त में जरा भी क्षोभ नहीं था। समयसार को पढ़वाकर सुना करते

थे और आत्मचिन्तन का अभ्यास किया करते थे। अब उनकी भी समाधि लग रही थी। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे वीणावादन सुनाती थी और जिन-स्तुति का पाठ करती थी। इन कन्यामणियो के कलकठ ने ध्वनिरूप में परज्योति के प्रकट होने का अनुभव नागमय्य करते थे। एक बार नागमय्य उस नादमाधुर्य मे आत्मरूप से लीन हो गए। वीणावादन के अत मे जब इन्होने दादाजी के मुँह की ओर देखा तो वहाँ केवल मुस्कुराहट थी। शरीर निश्चेष्ट था। दोनो के मुह से सहसा 'दादा दादा' शब्द निकल पडा। मल्लप और पोन्नमय्य दौड आए। देखभाल की। तब निश्चय किया कि अब प्राणज्योति शात हुई है। पप पोन्न आदि सबने आ घेरा। इस झमेले मे क्षणभर के लिए जिनचन्द्रजी को वे भूल बैठे। मध्याह्न का सूर्य सिर पर चमक रहा था। उधर जिनजन्द्रजी के प्राण भी उडे। पहले अपने शिष्य को मुक्ति मार्ग का पथिक बना कर आप पीछे से गए।

सब के आँसू बह निकले। नागमय्य के परिवार में खलबली मची। चालुक्यो का ध्वज उतर गया। राष्ट्रकूटो का ध्वज भी उतरा। गगो का ध्वज झुक गया। मल्लप पर मानो बिजली ही टूटी थी। पोन्नमय्य रणधीर था पर अब अधीर बन अबला-सा रो पडा। नागमय्य की भतीजी यो रो रही थी मानो उसके पिता ही चल बसे हो। सब के सब पोते आकर दादा के कलेवर से लिपट कर चीखने चिल्लाने लगे। अत्तिमब्बे की दशा ऐसी थी कि मानो उस पर वज्रपात हुआ हो। गुडुमब्बे छाती पीट पीट कर रोने लगी। नागमय्य की मृत्यु से जैन समाज की रीढ टूट सी गई थी। वेंगिमडल नायक विहीन बना। सब लोगो का दुख एक पलडे पर हो तो अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे का दुख दूसरे पर था। क्योकि इन दोनो का शैशव, बचपन और तारुण्य माता-पिता के पास नही दादाजी के पास बीता था। दादा की गोद इनका सिहासन था। दादा के साथ सैर सपाटे के

जाती तो भी उनकी कमरपर चढ़कर। बाबाजी के साथ खातीं पीतीं बाबा की गोद सोतीं। यों कहूं कि बाबा ही उनके लिए सब कुछ था। ऐसे बाबा से विहीन यह लोक उनको कुंभीपाक सा डरावना दिखाई दे रहा था। अभी अभी यौवन में पदार्पण करनेवाली इन नव तरुणियों पर बाबा की मृत्यु वज्राघात बन कर आई।

महामुनि का पवित्र कलेवर उठाया गया। उठानेवाले थे मारसिंह, पप और राष्ट्रकूटों के कृष्णराय एवं नागमय्य। भक्ति भाव से उस कलेवर को ढोए जा रहे थे मानो जिनेश्वर की उत्सव-सामग्री ले जा रहे हों। और एक बात थी। भक्ति के क्षेत्र में राजा और रंक का भेद कहां? यहां यह बात चरितार्थ हुई थी।

इस अर्थी के पीछे पीछे नागमय्य की अर्थी निकली। अत्तिमब्बे गुंडमब्बे अब्बकब्बे और मल्लप उसे ढो रहे थे और किसी को छूने तक नहीं दिया। स्त्रियों को हटाने का सब का प्रयत्न व्यर्थ हुआ। जुलूस का मार्ग आंसू से सिंचित था। जनता पीछे पीछे आ रही थी और भक्ती बाप्पावकी बढ़ी जा रही थी।

श्मशान में चन्दन कर्पूर की चिताओं पर रखकर दोनों की अन्त्येष्टि की गई। जिनचन्द्री की चिता को पप कविने अग्निसात् कर दिया नागमय्य की चिता को मल्लप ने। इस कार्य में उनके पुत्रोंने भी हाथ बँटाया।

जिनचन्द्र और नागमय्य दोनों महात्मा थे। जब तक जीवित थे तब तक लोकहित की साधना में तत्पर रहे। जब मृत्यु आई तो तत्पूर्व ही लोक हित साधना में अपने शिष्यों को नियोजित किया। और मृत्यु के पश्चात भी अपनी उसी लोक कल्याण कामना-की सुगंध फैलाकर चल रहे थे।

लोक हित कामना की सुगंध कोसों तक महक उठी थी।

नागमय्य के मरण से सारा पुगनूर अनाथ बना । लोग रो रहे थे । पर जनता की स्मरण-शक्ति बहुत शीघ्र क्षीण हो जाती है। जिसका जितना निकट सबध रहता है उतना ही अधिक उसका दु ख होता है। पर काल का लेपन सब दु खो को भुला देता है। मल्लप तथा पुन्नमय्य को पितृ-वियोग का दु ख भूलकर राजकाज सभालना पडा। अव्वकव्वे का दु ख अवश्य इन दोनो के दु ख की अपेक्षा अधिक दिनों तक बना रहा। कारण यह कि नागमय्य उसके ससुर नही थ मानो पिता थ, पिता से भी अधिक थे। सर्वाधिक दु ख अत्तिमव्वे और गुडुमव्वे को था। दादा ही मानो इनके जीवन का सवस्व था। दादा के कमरे में जाती तो आँसू फूट निकलते। दादा के साथ ही खाया करती थी, अब भोजन के लिए बैठती तो खाते नही बनता था। उठकर बिना खाए यो ही चली जातीं। दिन दिन कृश बनती गई। शरीर की कांति फीकी पडी। जीवन में अब कोई आकर्षण नही रहा। उत्साह तो बिलकुल नही था। प्राय दादा की चिता पर ही जीवन के उत्साह को भी जलाए आई थी। इनको देखकर अव्वकव्वे की चिता बढने लगी। सोचा करती कि उनका शोक कैसे दूर करें ? उसे भय था कि कही शोक के मारे कुछ और अनर्थ न हो। अतएव मन-बहलाने का प्रयत्न करने लगी। अपूर्व रत्नाभरण बनवा कर दिया। आशा थी कि और लडकियो के समान ये लडकियाँ भी इस पर मुग्ध हो जाएँगी और अपने दादा को भूलती जाएँगी। पर बात उलटी निकली। उन गहनो को देखते ही रत्नवृष्टि करानेवाले उस दादा को स्मरण करके फूट-फूटकर रो उठीं मानो अपने दादा पर मोतियो की वृष्ठि करने में लगी हो। नाना प्रकार के दुकूल मगवाकर पहनने का आग्रह करते हुए अव्वकव्वे कहती कि लो ये तुम्हें फबते हैं। इन्हे पहनो

पर अतिमब्बे कहती कि अब कौन हमें सजी हुई देखकर फूले न समानेवाला है। कुसुमब्बे शोक करती अब यह सब व्यर्थ है। दादा ही नहीं रहे तो इन्हें लेकर क्या करें। माता ने आग्रह कर के एक बार चमेली की कलियों से वेणी पिरोई। वे दादा को दिखाने के लिए मुड़कर, उनके कमरे की ओर दौड़ पड़ी। वहाँ जाने पर ही इनको होश आया कि दादा जी अब इस संसार में नहीं। धड़ाम से कटे हुए पेड़ के समान गिर पड़ी। आहार की मात्रा प्रति दिन कम होते देख अम्मामम्मे चिन्तित हुई। सोचने लगी क्या ये भी दादा जी के समान ही अनशन कर देने का संकल्प कर बैठी हैं। जब से दादा जी की मृत्यु हुई तब से मूककर उन्होंने वीणा पर हाथ नहीं फेरा। मधुर स्वर में गानेवाली इन युवतियों ने अब मौन धारण किया। मयूरी सी मस्त होकर मयूर-नृत्य करनेवाली इन को दादा की मृत्यु ने पंगु बना दिया था। वे अब घुंघुरू देख कर कांप जातीं। दादाजी के कमरे में दादाजी के चबूतरे पर वीणा घुंघुरू आदि पड़े-पड़े धूल धूसरित हो गए थे।

पति से एक बार अम्मामम्मे ने कहा—

देखो! दादाजी के शोक में बच्चियाँ कैसे घुलती जा रही हैं। इनका क्या होगा?

क्या करें? कुछ समझ में नहीं आता।

— मल्लप्प ने निरुपाय हो कर उत्तर दिया।

पर क्या यों ही छोड़ दें?

छोड़ना नहीं चाहिए। मैं भी मानता हूँ। पर बताओ तो सही कि क्या किया जाय?

देखो तुम्हारा सारा समय बाहर कट जाता है। तुम इनका दुःख क्या जानो! आठों पहर घर में पड़ी हुई मैं जानती हूँ। मुझसे यह देखा नहीं जाता। कहीं कुछ अनर्थ हो जाय तो पछताओगे।

क्या ऐसी बात है! ऐसी चिन्ताजनक स्थिति है?

क्या और कुछ बताना होगा ? `न ही रहे हो कि पह
जैसे खाती नही और पहनती भी नहीं । गहना देखते ही इनका गल
बैठ जाता है। हमेशा चुपचाप बैठी रहती हैं । वसत भारत के शीत
स्पश से इठलानेवाली माधवी लता सी ये लडकियां अब भूलकर भी
नहीं हँसती । इनकी ऐसी दशा हुई है कि मैं क्या करूँ, सदा मैं इसी
शोक में घुल रही हूँ । सोचा करती थी कि इनका विवाह बडी ध.
से करूंगी। पर न जाने हमारे भाग्य में क्या बदा है ?

क्या विवाह कर दें !

देखो, जो चाहे करो । मैं केवल यही चाहती हूँ कि वे पह
जैसे थीं वैसे बन जाय ।

योग्य वर कहां हैं ?

क्या बिना पूछ-ताछ किए वर हमारे पास आप आएँगे ?

हां, आप ही आएंगे । पर समय चाहिए। जल्दबाजी में यह
काम नहीं होगा ।

जी हो, पहले ऐसा कुछ तो करो कि ये शोक भूल जाय
नहीं तो अवश्य ये पागल हो जाएगी ।

---- दृढता के साथ पति को चेतावनी दी ।

और एक कार्य आ पडा है न, नही तो —

लडकियो के विवाह से भी अधिक जरूरी काम है क्या ? वह
कौन-सा है ? सुनूं तो ।

जरा असमाधान सूचक ध्वनि में पूछा ।

जिनचद्रजी की इच्छा थी कि कन्नड में शांति-पुराण सुनें ।
जीते जी आप की इच्छा पूरी नहीं हुई । कम से कम अब उस
महात्मा की इच्छा पूर्ण करनी होगी ।

करो । कौन मना करता है ? पर लडकियो के विवाह और
इस को एक ही पलडे में न रखो । किसी कवि को बुलवाओ और

मिमबाओ पर न भ्रम । म अजग रा

म भा मानता पर माओ तो सही क्या काम्य मिलवाना कोई साधारण बात है ? क्या हम सुलभ मानती हो ? क्या जब चाहे तब हमें चाहनी मिलेगी ? औरत ने इच्छानुसार कभी स्मर भी सुधार करते ? किसी के कहने मात्र मे वसन मारन वह निकलती ? यदि चाहो तो एक पल के अ भी व्याह कर सकता हू पर मानी मर्यी के अनुसार नियतवाले नवि को कहा से लाऊँ ?

म क्रम ने बरामी बात कह दो ।

क्या कह । किसी के पर मस्तान हो तो भी यह भी के लिए तरसता रहे तो उसे कहा से समझ आ दे ।

म रा मतलब ? तुम्हारा मतलब ?

तुम एक बार भाई पत्र मे कह दो क्या वे नहीं मानेंगे ? पोप जी से प्रार्थना करन पर यह काम नही बन सकता ?

— मम्मवन्द ने मार्गदर्शन किया ।

ठीक है ! इन दोना रा लें । दोना की मर्यादि की अतिम अभिलाषा ज्ञात हो ब्याग दबार । वो हो शातिपूर्वक की रचना म बिना नाम तब उन्ही जाएगी ।

मल्लप न म र 1

काम तर र

साथ ही हो र्कें त

जो सी बिम रहे

जल्दी ?

किसी क

ताना म ? पा द

ऐमी मौस

तार

देखो तुम्हारी सांत्वना के लिए एक ही या। ना विवाह कर देने की बात कही थी, उस बात को लेकर अब मुझ पर ताना मारती हो और पूछती भी हो नादान सी, कि मैंने क्या कहा!

ताना नहीं मारा! मैंने केवल तुम्हारी शक्ति का स्मरण दिलाया।

जैसे कैकेई और द्रौपदी ने स्मरण दिलाया था?

शांत पाप! शान्त पाप!! कैसी बात कहते हो! यह अन्याय है।

ओहो! अब तक कवयित्री बनकर बोल रही थी। अब

ठीक है, जब तुम मेरी स्फूर्ति का स्रोत हो और सामने हो तो मैं क्यों न कवि बनूं?

अब्बकब्बे की बातों में उल्लास की दृढ़ता थी। और उसी धुन में मल्लप वहाँ से उठे।

✿ ✿ ✿

पपकवि और पोन्नकवि दोनों पुगनूर पधारे। उनके सामने मल्लप ने चंद्रसागर की मनीशा कह सुनाई। उस दिगंबरयति की बात वेद विधि के समान मान्य है। कुछ भी हो शांतिपुराण की रचना हो जानी चाहिए। जब यह कार्य समाप्त हो तब मैं उसकी सौ प्रतियाँ लिखवा कर बेटियों के विवाह के अवसर पर सुवासिनियों में वितरित करूंगा।

—मल्लप ने विनम्र पूर्वक निवेदन किया।

इस युग के महाकवि पंप जी हैं। आप ही को शांतिपुराण लिखना होगा। जिनचन्द्र जी भी यही चाहते थे।

— पोन्न ने कहा।

महानुभाव! आप मेरे मर्म पर क्यों मारना चाहते हैं? अरिकेसरी के साथ ही मेरी लेखनी की शक्ति चली गई है। उस महाप्रभु के पीछे मेरी प्रतिभा लुप्त हो गई है। मेरी कल्पना शक्ति

कठिन है । मन सदस स्थिर नहीं बनता। फिर भी आप त्यागी हैं महात्मा हैं। आप का चित्त निर्विकार है। आप समभाव से सुख दुःख सहते हैं। आप स्थितप्रज्ञ हैं। इस युग के कवि चक्रवर्ति भी आप हैं। अतः आप ही शान्तिनाथ के भव्य चरित गाइए। मैं केवल उस वृद्ध गायक के लिए वाणी का काम करूँगा। जिस व्यापारी का बेड़ा डूब गया हो और दिवाला निकला हो उस के पास माँगना उचित नहीं। इससे उसे दुःख मात्र होगा। आप कविचक्रवर्ति हैं। शान्तिनाथ तीनों लोकों में चक्रवर्ति हैं। आप उस पुण्य गाथा के कवि हों गायक हों— यही मेरी प्रार्थना है।

—पम्प कवि ने निवेदन किया।

पम्पमय्य ने नमस्कार किया और कहा— जब तक आश्वासन नहीं मिले तब तक यहाँ से न उठूँगा पोन्न जी के सामने बैठ गया।

ठीक उसी समय पोन्न जी अलौकिक प्रेरणा का अनुभव करने लगे। जिनचन्द्र जी की आशा-पताका फहराती हुई दिखाई दी। पर लोक कल्याण-कामना से शान्तिनाथ पुराण लिखवाने की इच्छा उस त्यागी महात्मा में जागी उस घड़ी का महत्व समझने में उस सद्भावना में तल्लीन होने में पोन्न जी को देर न लगी। उस समय जटाधारी समस्त भक्ति भाव से पुलकित हुए। जटा विकंपित हुई। आँखों के सामने मानो समवसरण उतर आया। उनके गले से मानो संगीत स्वयं झर ने लगा।

वे आग्रह पूर्वक बोले—

ठीक है। मैं शान्तिनाथ पुराण रचूँगा। जिनचन्द्र जी की अंतिम अभिलाषा पूर्ण हो। और साथ ही साथ पंपजी की इच्छा सफल हो। सज्जन की मनौती पूर्ण हो। पम्पमय्य की मनीषा सार्थक हो। अत्तिमब्बे और जन्मभूमि के जीवन में शान्तिनाथ पुराण से धार्मिक क्रांति का बीजारोपण हो।

नागमय्य के घर पर पडा हुआ शोक का कुहरा पप और पोन्नजी के आगमन से दूर हुआ। ससार सारोदय नाम से विख्यात पप के रहते समय उदासी कहाँ रह सकेगी ? निराशा के लिए जगह कहाँ ? अत्तिमब्बे और गुडमब्बे के लिए मानो पपजी के पास रहते समय अपने दादा के पास रहने का सा आनदानुभव होता था। पप जी से विक्रमार्जुन विजय और आदिपुराण सुने। सुन सुनकर कठ पाठ किया। पप महाकवि के चरणो में रहकर इन दोनो ने भारतीय नारी के कर्तव्य का ज्ञान सीखा। कला मे कला सी तन्मय बनी नीलाजना के पात्र की गरिमा से अवगत हुई। नव यौवन में पदार्पण करती हुई इन दोनो लडकियो ने समझा कि अपना सौंदय, अपना लावण्य, अपनी प्रतिभा, अपना ज्ञान, अपना धनकनक आदि की सार्थकता तभी है जब वे परमात्मा के चरणो में अर्पित हो। यौवन के प्रारभ मे योग्य धार्मिक सस्कार नही मिले तो मानव दानव बन जाएगा। पप कवि ने इस रहस्य का भी निरूपण किया कि यदि दैहिक सौंदर्य पर पारमार्थिक सस्कार का रग नही चढे तो सुरसुदरी भी विषकन्या बन जाएगी। यदि यौवन की मस्ती पर भक्ति का अकुश नही हो तो ये इद्रियाँ हमे पथभ्रष्ट करके गड्ढे मे गिरा देगी।

उन्होने यह पाठ भी पढाया कि पहले व्यक्तिगत रागद्वेष को कुचल देना चाहिए नही तो, स्त्री का जीवन आसू का समुद्र बनेगा।

एक ओर पोन्नकवि काव्य-कन्या को नचा रहे थे। दूसरी ओर पप कवि कर्नाटक के स्त्री रत्नो को कर्नाटक सस्कृति के चाक पर चढाकर चमका रहे थे, उनके जीवन को रत्नकलश बना रहे थे।

इधर मल्लप योग्य वरो के अन्वेषण मे लगे रहे। पढी लिखी गुणवती कन्याओ के अनुरूप वर पाना बडा कठिन है। अत्तिमब्बे और गुडमब्बे बडे घराने की लडकियाँ ठहरी। चालुक्य महारानी की लाडली [illegible] थी। [illegible] की बात कौन कहे। कहीं ये पूर्ण [illegible] [illegible]

से सजधज कर खड़ी हो जाती तो आकाश के खेचर विमान रुक जाते हो जाते और इनका अनुपम सौन्दर्य देख कर खेचर बालाएँ मोहित हो जाती। इन दो तरुणियों को देखने से ऐसा लगता था मानो कला और कमनीयता की सजीव प्रतिमा हैं। यदि नृत्य करते समय इनको देखें तो ऐसा लगता मानो इन्द्रधनुष पर चढ़कर मयूरी नृत्य रही हो। इन की चाल नृत्य की गति थी। इनका बोल संगीत बना। तिस पर ये काव्य और शास्त्र दोनों में पारंगत थी। ऐसी लड़कियों के लिए योग्य वर पाना सुगम-साध्य नहीं था।

पट्टदेवी! हमारी कन्याओं के योग्य वर चाहिए न?

एक बार मल्लप ने विचार किया।

राजकुमारों में से देखना होगा। कम स्तरवालों को नहीं।

पर हम कहाँ और राजकुमार कहाँ! यह कैसे होगा?

देखो! तुम्हारी इन कन्याओं से विवाहित होकर कोई भी राजकुमार अपने को धन्य मानेगा। समझे?

आप सच ही अपने पास के सोने को कसौटी पर कसें पर इस का मूल्य ग्राहक समझें तब न?

पर खरा सोना कहीं भी रहे खरा ही लगेगा!

और! राजकुमारों में ही सही। बताइए। इन के योग्य कौन है? कोई नहीं दिखाई देता!

क्यों? राष्ट्रकूट के कर्ण युवराज हैं। ऐसे ही गंग वंशज मारसिंह के छोटे भाई राजमल्ल भी हैं। पुरातन काल से राष्ट्रकूट और गंग सगे संबंधी रहे हैं। परस्पर गौरव रखते हैं और आदर भी देते हैं। अतएव सदियों से दोनों वंश समृद्ध बन सके हैं। तिस पर ये दोनों राजघराने जैन-धर्म के आधारस्तंभ से हैं। इनके राज्य में अहिंसा की जड़ जम गई है। ऐसे राजकुमारों के होते हुए हमारी सम्यक्त्व चूड़ामणी-सी ये कुमारियाँ क्या घर पर पड़ी रहें?

देखिए, वे क्या हमारे यहाँ विवाह करने के लिए तैयार है?

सुनो। पहले पूछ लो कि अत्तिमब्बे और गुड्मब्बे उनसे विवाहकर लेने के लिए तैयार है या नहीं।

— ऐसा कहकर हम पड़े।

दो-एक दिन बीत गए। एक बार एकाएक चालुक्य महामन्त्री दल्लप पुगनूर आए और सीधे मल्लप के यहाँ पधारे। दोनों में कुशल प्रश्न हुआ। खान पान का प्रबन्ध अतिथि के योग्य श्रीमत ढंग से किया गया। अत्तिमब्बे और गुड्मब्बे ने मिलकर परोसा। भोजन करनेवालों को लग रहा था कि कहीं देव लोक से सुरसुन्दरियाँ आकर अमृत परोस रही हैं। इसी कल्पना में दल्लप ने कुछ अधिक ही खा लिया। पर कवि के मन में पुरानी स्मृति जागृत थी। अरिकेसरी और आप एक साथ जेवनार करते तो महारानी अपने हाथ से परोसा करती थी, आज फिर ऐसा ही अनुभव किया।

भोजन समाप्त हुआ। पान दिया गया। तब दल्लप ने मल्लप से अपने सन्ताप को व्यक्त करते हुए कहा—

मल्लप, नागमय्य की मृत्यु से अपार नष्ट हुआ है। इस दुख में हम सहभागी हैं।

हाँ। यह बात सही है। पर हमारा क्या बस है? एक बात अवश्य है। आप ही अब हमारे समाज के बुजुर्ग हैं। आप के मार्ग-दर्शन की प्रतीक्षा हम लोग कर रहे हैं।

— मल्लप ने विनय-पूर्वक उत्तर दिया।

आप मेरे मार्ग-दर्शन की प्रतीक्षा में हैं! खूब, खूब!

क्या हँसते हैं? आप मुझसे वयोवृद्ध हैं और अनुभवी भी। न केवल आप मार्ग-दर्शन दें आप अनुग्रह भी करें। आप की आज्ञा सिर आँखों पर रखकर पाली जाएगी। घर पर एक बुजुर्ग व्यक्ति का रहना योग्य है। उन पर सारी जिम्मेदारी रहती है। और हम लोग

मांसाधारी बन कर आराम से रह सकते हैं।

मरतप्प ! मेरी समझ में आप ही दुर्जन हैं। अपनी समझ के अनुसार चलिए। नागमय्य जैसे धार्मिक प्रवृत्तिवाले महापुरुष की संतान मत्स्य मांस को ही पवित्र रखेगी। आप और आप के छोटे भाई स्वतंत्र बनें। पोतमय्य हमारे समाज की दो आँखें हैं। आप दोनों हमारे राजकाज के दो पक्ष हैं।

दण्डप जी ! आप हम को बना रहे हैं। और ! आप की बात मान हम आँख और पक्ष हैं तब भी आप हमारे समाज के मस्तिष्क हैं इस बात को न भूलिएगा। नेत्र हो चाहे पक्ष हो मस्तिष्क के इशारे पर ही वे काम कर सकते हैं।

—मरतप्प ने उत्तर दिया।

मम्मसजी कौन आप से समाधान में जीत सकता है ! पोतमय्य जैसे युद्ध के मैदान में तलवार के धनी हैं

वैसे मैं बातों का धनी हूँ ?

—मरतप्प ने वाक्य पूरा किया और हँसे। दोनों खूब हँसे।

सुनिए मम्मय्य जी मैं अपना कार्य ही भूल बैठा था।

कहिए ! क्या काम है ?

आपने हमारे नामदेव को देखा है

हाँ हाँ ! देखा है।

वह विवाह के योग्य है। कहने के नाते आप हैं। पर एक बात है। स्वर्गीय नागमय्य ने एक बार हम से कहा था कि हमारा समधी आप को बनना ही होगा। तब मैंने भी कहा था कि बिना आप की सहाय मैं लड़के की शादी छोड़ ही करनेवाला हूँ। आज नागमय्य रहते तो बात ही दूसरी थी। आज आप से मिलकर नागमय्य की इच्छा कह देने और आप की इच्छा भी जानने के लिए मुझे आना पड़ा।

दल्लप ने बडे सकोच मे अपनी बात कह सुनाई।

दल्लप जी, आप का मतलब समझ गया। पर एक बात है। यदि हमारे पूज्य पिताजी ने कुछ कहा हो तो हम क्या उसे टाल देंगे? हा। दो-एक दिन आप यही ठहरिए। एक बात मैं अपने घर मे पूछ लू। लडकियो की इच्छा भी जान ल। आप का आना बडा ही अच्छा हुआ। आप मौके पर आए है। बात तै हो जाय। इससे बढकर और क्या चाहिए।

दूसरे दिन चामुडराय पुगनूर पधारे और मल्लप से मिले।

राव जी, आप के आगमन की सूचना मिली होती तो राजमर्यादा पूर्वक आप की अगवानी कर सकते थे। आप गगराजा के राजगुरु है। वीरमार्ताण्ड है, महामत्री है, रण-कलि है। ऐसे महानुभावो का बिना पूर्व सूचना दिए आना केवल आप का सौजन्य और वात्सल्य का द्योतक है पर हम तो स्वागत करने के सदवकाश से वचित हुए।

— मल्लप ने कहा।

देखिए। जब आप के पूज्य पितृपाद स्वर्गस्थ हुए तब हम युद्ध के मैदान में व्यस्त थे। वहा से आ न सके। केवल हमारे-माता-पिता ही आ सके थे। नागमय्य की मृत्यु ने हमारे समाज ने एक अनन्य रत्न ही खोया है।

— चामुडराय ने सताप व्यक्त किया।

हाँ, हाँ, फिर भी आप जैसे हितैषियो के होते हुए हम पितृ विहीन हो कर भी अनाथ नही बने है -- यही सात्वना की बात है।

—मल्लप ने निश्वास पूर्वक कहा।

नागमय्य के गुणगान मे हमारी माताजी थकती ही नही। हमारे पिताजी का तो कहना है जीना है तो नागमय्य जैसे जीना चाहिए क्योकि वे जीना और मरना दोनो जानते थे। उन की याद मे दोनो ही अभी भी रहते है। सचमुच ऐसा व्यक्ति जो न रहा हमारे

कर्नाटक के लिए अपार नष्ट हुआ है। हमारा दौर्भाग्य है।

आप जैसे महापुरुषों से सान्त्वना पाने के कारण मैं तो यही कहूँगा कि हमारे पिताजी मरे नहीं अमर हुए हैं।

— यह कहते समय मल्लप की पलकें भीग गईं। अपने दौर्बल्य को छिपाने के लिए बात बदलकर बोले —

क्षमा कीजिए। मुझे क्या हुआ है! दूर से आए हुए आप को बातों में फँसाए रहा आतिथ्य का समुचित प्रबन्ध तक नहीं किया! उठिए उठिए! कृपया स्नानादि से पहले निवृत्त हो जाइए।

रसोई घर में हलचल मची थी। कल ही चालुक्य प्रधान का सत्कार समारम्भ हुआ था। आज गंगों के प्रधान चामुण्डराय के स्वागत सत्कार के योग्य प्रबन्ध करना था। मसान कम्मा बलि होता ही है। पर श्रीमन्तों का भाग्य उन्हें इस कहीं अमरपुरी का भोग देता ही है।

कर्नाटक के महान व्यक्तियों का वह प्रीति भोज था। उस प्रीति भोज में रन्न अभी अभी आए चामुण्डराय थे। बहुत दिनों से रहनेवाले पंपकवि भरतय्य पोन्नमय्य एवं मल्लप के सभी पुत्र सम्मिलित थे। मल्लप की पत्नी अक्कम्मा और पोन्नमय्य की स्त्री दौरसम्मा परोसने लगीं। अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे भी यथा समय इनके साथ हाथ बँटा रही थीं। सोने की थाली में भरा हुआ अन्न मानव मोती सा चमक रहा था। सोने के बर्तन और चाँदी के कलश आदि थे। इनमें भरे भोज्य पायसादि पकवानों को ऐसे सजाकर लाती थी कि देखने में आँखें अघाती नहीं थीं। कभी कभी अत्तिमब्बे और गुंडमब्बे चपला सी चमककर चली जाती थीं। इन के आगमन में ऐसा लग रहा था मानो फुलझड़ी चमचमाती अपनी ओर खुली आ रही हो। अतिथि सोने की थाली में खा रहे थे। उन के चारों ओर सोने की कटोरियाँ थीं। उन में चाँदी के चम्मच रखे गए थे। सम्भ्रम और प्रेम का मधुर वातावरण था। परोसनेवालों का प्रेमपूर्ण

मृदु भाव और उनके नूपरो की मधुर ध्वनि से सुदर सगीत का ठाट जम गया था और आनद भी मिल रहा था।

ससार का सच्चा सुख भोजन ही है।

— चामुडराय ने पप से कहा।

केवल भोजन ही सच्चा सुख नही दे सकेगा। आप जैसे महानुभावो की सहपक्ति प्राप्त हो तो मुझ जैसा अभागा कवि भी सचमुच ससार सारोदय का नाम सार्थक मान सकता है।

—पप के होठो पर मुस्कुराहट खिली, पर ध्वनी में खिन्नता थी।

पप जी आप महाकवि है। फिर भी अपने को अभागा कहते है! आप कृपाण-हस्त बनकर चतुरग बल भयकर रूप दिखा चुके हैं। कठ उठाकर विश्व कविश्रेणी मे अग्रणी बने हैं। आप के श्रीमुख से निस्सृत काव्य दुन्दुभिनाद है। भोजन समारोह मे तो सचमुच ससार सारोदय है। विश्वकवि, हमारी हस्ती किस गिनती मे है बताइए?

— चामुडराय ने तक किया।

आप की हस्ती? चिरस्थाई है! आप अजर और अमर है। आप का साहस, आप की सहृदयता, इस से बढकर आप की जिन-भक्ति — हमारे जैसे दसो कवियो की वण्य वस्तु है। आप का साहस देश के कोने कोने मे शिला फलको पर अकित मिल रहा है।

पप कवि ने चामुडराय के वास्तविक गुणो का उल्लेख किया।

आप दोनो की बातो मे एक बात स्पष्ट हुई।

— दल्लप बीच में बोल उठे।

स्पष्ट हुई? कौन सी बात?

— चामुडराय का मुह दल्लप की ओर था।

आप के शब्दो मे पप जी महाकवि है और अमर है। पप जी के कथनानुसार आप साहस, सहृदयतादि के कारण अजर और अमर है। आप महानुभावो के साथ रहने का सौभाग्य पाकर हम पुनीत बने है।

कर्नाटक के लिए अपार नष्ट हुआ है। हमारा दौर्भाग्य है।

आप जैसे महाशयों से साधुवाद पाने के कारण मैं तो यही कहूंगा कि हमारे सिपाही मरे नहीं अमर हुए हैं।

— यह कहते समय माचप्प की पलकें भीग गईं। अपने दौर्बल्य को छिपाने के लिए बात बदलकर बोले —

क्षमा कीजिए। मुझे भूल हुआ है! दूर से आए हुए आप को बातों में फंसाए रखा। आतिथ्य का समुचित प्रबंध तक नहीं किया! उठिए उठिए! कृपया स्नानादि से पहले निवृत्त हो जाइए।

रसोई घर में हलचल मची थी। जल्द ही भोजनमय प्रबन्ध का सत्कार समारंभ हुआ था। आज नगर के प्रधान चामुण्डराय के स्वागत सत्कार के योग्य प्रबन्ध करना था। यथानुरूपो बलि होता ही है। पर भोजनों का भाग्य उन्हें हर कहीं अमरपुरी का भान देता ही है।

कर्नाटक के महान व्यक्तियों का वह प्रीति भोज था। उस प्रीति भोज में बल्लप्प आदि सभी आए चामुण्डराय वहीं बहुत दिनों से रहनेवाले नयनादि नरसप्प पोन्नमय्य एवं मसण्ण के सभी पुत्र सम्मिलित थे। मसण्ण की पत्नी [illegible] और पोन्नमय्य की स्त्री [illegible] परोसने लगी। अत्तिमब्बे और गुण्डमब्बे भी यथा समय इनके साथ हाथ बँटा रही थी। सोने की थाली में भरा हुआ जल मनोहर मोती सा लग रहा था। सोने के कलश और चांदी के कटोरे आदि थे। इनमें भक्ष्य भोज्य पायसादि पकवानों को ऐसे सजाकर रखी थी कि देखने में आँखें अघाती नहीं थी। कभी कभी अत्तिमब्बे और गुण्डमब्बे चपला सी चमककर चली जाती थी। इन के आगमन से ऐसा लग रहा था मानो पुष्पभरी कल्पलता अपनी ओर झुकी आ रही हो। अतिथि सोने की थाली में खा रहे थे। उन के चारों ओर सोने की कटोरियाँ थीं। उन में चांदी के चमच रखे गए थे। संभ्रम और प्रेम का मधुर वातावरण था। परोसनेवालों का प्रेमपूर्ण

मृदु भाव और उनके नूपरो की मधुर ध्वनि से सुदर सगीत का ठाट जम गया था और आनद भी मिल रहा था।

ससार का सच्चा सुख भोजन ही है।

— चामुडराय ने पप से कहा।

केवल भोजन ही सच्चा सुख नही दे सकेगा। आप जैसे महानुभावो की सहपक्ति प्राप्त हो तो मुझ जैसा अभागा कवि भी सचमुच ससार सारोदय का नाम सार्थक मान सकता है।

—पप के होठो पर मुस्कुराहट खिली, पर ध्वनी में खिन्नता थी।

पप जी आप महाकवि हैं। फिर भी अपने को अभागा कहते हैं! आप कृपाण-हस्त बनकर चतुरग बल भयकर रूप दिखा चुके हैं। कठ उठाकर विश्व कविश्रेणी मे अग्रणी बने हैं। आप के श्रीमुख से निस्सृत काव्य दुन्दुभिनाद है। भोजन समारोह म तो सचमुच ससार सारोदय है। विश्वकवि, हमारी हस्ती किस गिनती मे है बताइए।

— चामुडराय ने तर्क किया।

पर अवश्य अवध म पारस-पत्थर को ना पचा पाया आहा माहा-कला रह सकेगा ?

—वत्सप हस

मुझे मान है । आप अवश्य मोर की मति है । वन्द्र में आप के पत्रे में आए हुए नाम ही म पढ़ना चाहिए । आप उनके स्वप्न मे भी निमिगिश म लगाते है ।

—चामुण्डराय कुछ मुस्कराये ।

हाँ । मैं अवश्य मानता हूँ कि आप नीमा स्वयं अपने क्षेत्र म तिमिगिल ह । पपदेव कवि तिमिगिल ह तो चामुण्डराय जी और मार्ई वत्सप न तिमिगिल हैं ।

— मस्कर न चटकी ली ।

वाह के वनी ! म ने क्या सौभाग्य हास्य रस का प्रभा ही बहा दिया !

— पप न हँसते हँसते कहा ।

देखिए कवि चक्रवर्ती जी ! मुझे केवल पदरस का ज्ञान है ।

—वत्सप हस ।

ठीक तो है अन्य रसो का आधार पद्‌रस ही है ।

— वत्सप का पौष्टिक छन्द ।

ऐसे हास्य और विनोद म सब का भोजन समाप्त हुआ । सब के मुख पर प्रसन्नता झलक रही थी ।

दुपहर की तपती धूप ढलने लगी । और एक बार मल्लप के यहाँ सभा भवन म सब एकत्रित हुए । सब के बीच मे पप महाकवि जिनका प्राय शोभा ब रहे थे । आप की बगल मे तकिए के सहारे गद्दी पर चामुण्डराय विराजमान थे । दूसरी बगल मे ऐसे ही वत्सप बैठे थे । मस्कर सब की दृष्टि का केन्द्र बन बैठे थे । जलपान का प्रबन्ध हुआ था । इधर वह समाप्त हुआ उधर पोन्नचन्द्र भी पधारे । उन का अच्छा स्वागत किया गया । व विराजमान होते हुए ही पप महाकवि ने

पोन्न को साष्टाग पणाम किया क्योकि वे जटाधारी समण थे। उनके पीछे उपस्थित अन्य सज्जनो ने भी नमस्कार किया।

धमवृद्धिरस्तु

—यह आशीवचन गज उठा।

पोन्न ने चामुडराय से पश्न किया—

नेमिचद्राचाय जी कैसे हैं ? स्वस्थ है न ?

जी हां ! सानद है। आप के कुशल-क्षेम की वार्ता लाने की आज्ञा हुई है।

— चामुडराय ने उत्तर दिया।

नेमिचन्द्रचाय जी आज के साधु समाज के तिलक है। जैन सिद्धात के पारगत आचाय हैं। जैनागमो पर उनकी जैसी अधिकारवाणी और किसकी है ? वे हमारे युग के वीरसेन महर्षि है।

-- पोन्नकवि आचाय जी के गुणगान करने मे अघाते नही दिखाई देते थे।

आप जानते होगे कि हाल ही मे नेमिचद्राचाय जी ने गोम्मटसार नामक ग्रथ की रचना की है। इस में जीव और कम के विचित्र एव निगूढ सबध का वैज्ञानिक विवरण दिया है।

— चामुडराय की ध्वनि में अभिमान था।

जी ! वहुत अच्छा। आप कब यों ही बैठे रहने देते है ! कुछ न कुछ महत्व का काय कराते रहते हैं। कहिए, क्या हमारे लिए भी उस ग्रथ-रत्न की एक प्रति मिलेगी ?

अवश्य, अवश्य मिलेगी।

— पोन्न कवि के प्रश्न का समाधान जनक उत्तर देते हुए चामुडराय ने कहा —

लेकिन अब नहीं। उस की एक सौ प्रतियां बनाई जा रही है। मेरे पुत्र जिन्न के विवाह के शुभ अवसर पर उस का प्रकाशन

करूँगा। आशा है कि उस शुभ अवसर पर आपका पत्र आशीर्वाद हमें अवश्य प्राप्त।

राजजी आपका आदर्श बहुत ऊँचा है और अनुकरणीय है। यदि जिन भक्त अपने अपने घरों में विवाह, यज्ञोपवीत आदि शुभ अवसरों पर ग्रंथ प्रकाशन का संकल्प भी करेंगे तो जन-जागृति का भविष्य उज्ज्वल ही बना रहेगा। विवाह काम पाप है पर धर्म के गंभीर वातावरण में काम प्रेम बनेगा और सात्त्विक भी। यहाँ हम से न लिखना रहे हैं।

धन्य भाग ! आप का मार्मिक गाथा मय और चरित्र के विक्रमार्जुन विजय ग्रंथों में हम पुनः प्रभावित हुए आदमी भी हम सके हैं। हमारा विश्वास बढ़ा है। ओह ! यह कैसा ग्रन्थ है। और इस का कथन पढ़ते पढ़ते मन खीच उठा था। उसी धुन में हमारा संकल्प किया था कि सब अंग दुष्ट-शक्तियों का दमन किया था। इससे सिद्ध हुआ कि पुरुष बड़ा कर कर्म है। जहाँ तक हो सके उसमें पूर्ण ही रहना चाहिए। शासन की बागडोर धर्मात्माओं को हम राज्य-शासन अवश्य चाहिए। और कृपया बताइए कि आप कौन सी रचना कर रहे हैं?

— बाबूराम ने कुतूहल व्यक्त किया।

जिनचन्द्रजी शांतिपुराण सुनना चाहते थे पर आपकी इच्छा जीवित रहते समय पूर्ण नहीं हुई। परोक्ष में ही सही यह कार्य समाप्त करके उनको अर्पित करूँ इस उद्देश्य से सांख्य और सौभाग्य इस से शांति पुराण लिखता रहा हूँ।

ग्रंथ कहाँ तक आया है?

अब तो समाप्त ही समझिए। अभिमन्यु के पुनर्विवाह के अवसर पर इस ग्रंथ का प्रकाशन होगा। शांतिनाथ पंचकल्याण मूर्ति है। उन की गाथा का प्रकाशन अपनी पुत्रियों के कल्याण महोत्सव पर कराना चाहते हैं। यह बहुत ही योग्य संकल्प है।

पोन्नकवि की मधुरस्मिति ने वातावरण मे मधुरता घोल दी।

क्या अत्तिमब्बे की सगाई कही पक्की हुई है? वह भाग्यवान वर कौन है?

चामुडराय ने आश्चर्य से मल्लप मे जिज्ञासा की।

अभी सगाई पक्की नही हुई है। पर दल्लप की सवारी उसी उद्देश से आई है। उनके स्वनामधन्य पुत्र नागदेव भी हमारी लडकी के योग्य वर है।

मल्लप की बाते सुनकर दल्लप फूले नही समाए।

आप दसरी लडकी का भी विवाह कर दीजिए। यो तो ये यमज कन्याएँ हैं। इनका जन्म एक साथ हुआ है विवाह भी एक साथ हो जाय।

चामुडराय ने गभीरता से सुझाया।

योग्य घर मिल जाय तो वह भी सभव है।

— पप महाकवि ने कह ही दिया।

क्या आप की लडकियो के लिए वरो की कमी है? विलब करने से वचित रहने का भय सब को बना ही रहता है। यही सोच कर हमारी मातृश्री ने हमें यहाँ भेज दिया है। जब बहुत दिन पहले एक बार हमारे माता-पिता यहाँ आए हुए थे तब सुनते है कि श्रीमती अब्बकब्बे ने प्रस्ताव किया था, और हमारे माता-पिता ने इस सबध को स्वीकार भी किया था। आप की दो कन्यामणियो में आप जिसे चाहे दीजिए। हम सतुष्ट होगे। अत्तिमब्बे दल्लप की पतोहू बने, योग्य ही है पर गुडुमब्बे हमारी पतोहू बन जाय। हमारे माता-पिता वृद्ध हैं। पोते के विवाह के लिए आग्रह कर रहे है। यदि आप महानुभावो की अनुमति मिले तो दोनो विवाह श्रवणबेलगोल में ही हो। पवित्र क्षेत्र मे शुभ कार्य सपन्न हो। सारा प्रबध हम कर देंगे।

सकेगा। आशा है कि उस शुभ अवसर पर आपका पावन आशीर्वाद हम अवश्य पायेंगे।

रावजी आपका आदर्श बड़ा ऊँचा है और प्रशंसनीय है। यदि जिन भक्त अपने अपने घरों में विवाह, प्रभावना आदि शुभ अवसरों पर ग्रंथ प्रकाशन का सम्प्रदाय भी करते तो जन-साहित्य का भविष्य उज्ज्वल ही बना रहता। विवाह राग प्रधान है पर धर्म के गंभीर वातावरण में काम रोग शमन और नाशक भी। यही हम मन में लिखता रहा हूँ।

धन्य भाग! आप का भवभक्त चामुण्डराय और नयरवि के विक्रमार्जुन विजय ग्रन्थों से हम खूब प्रभावित हैं। मारसिंगी भी उन सके हैं। हमारा विश्वास बढ़ा है। ओह! यह कैसा ग्रन्थ है। वीर रस का वर्णन पढ़ते पढ़ते मन जोश उठता था। इसी धुन में हमने संकल्प किया था कि पर धन दुष्ट-व्यसनियों का दमन किया करें। इससे यह विदित हुआ कि युद्ध बड़ा क्रूर कर्म है। जहाँ तक हो सके इससे दूर ही रहना चाहिए। शासन की बागडोर सम्भालनेवालों को इस का ज्ञान अवश्य चाहिए। और कृपया बताइए कि आप कौन सी रचना कर रहे हैं?

— चामुण्डराय ने कुतूहल व्यक्त किया।

जिनचन्द्रजी शान्तिपुराण सुनना चाहते थे पर आपकी इच्छा जीवित रहते समय पूर्ण नहीं हुई। परोक्ष में ही सही यह कार्य समाप्त करके उनको अर्पित करूँ इस उद्देश्य से मल्लप और पोन्नमय्य रूप में शान्तिपुराण लिखवा रहा हूँ।

ग्रन्थ कहाँ तक आया है?

अब तो समाप्त ही समझिए। मल्लिमय्य के पुत्रीविवाह के अवसर पर इस ग्रन्थ का प्रकाशन होगा। शान्तिनाथ पंचकल्याण मूर्ति हैं। उन की गाथा का प्रकाशन अपनी पुत्रियों के कल्याण महोत्सव पर करना चाहते हैं। यह बहुत ही योग्य सम्बन्ध है।

पोन्नकवि की मधुरस्मिति ने वातावरण मे मधुरता घोल दी।

क्या अत्तिमब्बे की सगाई कही पक्की हुई है? वह भाग्यवान वर कौन है?

चामुडराय ने आश्चय से मल्लप से जिज्ञासा की।

अभी सगाई पक्की नही हुई है। पर दल्लप की सवारी उसी उद्देश से आई है। उनके स्वनामधन्य पुत्र नागदेव भी हमारी लडकी के योग्य वर हैं।

मल्लप की वाते सुनकर दल्लप फूले नही समाए।

आप दसरी लडकी का भी विवाह कर दीजिए। यो तो ये यमज कन्याएँ हैं। इनका जन्म एक साथ हुआ है विवाह भी एक साथ हो जाय।

चामुडराय ने गभीरता से सुझाया।

योग्य घर मिल जाय तो वह भी सभव है।

— पप महाकवि ने कह ही दिया।

क्या आप की लडकियो के लिए वरो की कमी है? विलब करने से वचित रहने का भय सब को बना ही रहता है। यही सोच कर हमारी मातृश्री ने हमें यहाँ भेज दिया है। जब बहुत दिन पहले एक बार हमारे माता-पिता यहाँ आए हुए थे तब सुनते हैं कि श्रीमती अब्बकब्बे ने प्रस्ताव किया था, और हमारे माता-पिता ने इस सबध को स्वीकार भी किया था। आप की दो कन्यामणियो में आप जिसे चाह दीजिए। हम सतृष्ट होगे। अत्तिमब्बे दल्लप की पतोहू बने, योग्य ही है पर गुडुमब्बे हमारी पतोहू बन जाय। हमारे माता-पिता वृद्ध हैं। पोते के विवाह के लिए आग्रह कर रहे हैं। यदि आप महानुभावो की अनुमति मिले तो दोनो विवाह श्रवणबेलगोल मे ही हो। पवित्र क्षेत्र मे शुभ कार्य सपन्न हो। सारा प्रबध हम कर देंगे।

चामुण्डराय बोल रहे थे उनकी भावुकता पर सब के सब स्तम्भित से थे।

मल्लप सोचने लगे अचानक दोनों कन्यारत्नों की मांग का योग्य वरों से हो रही है – इसका क्या जवाब दें? दल्लप को नागमय्य से वचन मिला है तो अत्तिमब्बे ने काळलादेवी को वचन दिया है। दोनों वचन बद्ध हैं। चामुण्डराय भी गंग राज्य की रीढ़ हैं राष्ट्रकूट साम्राज्य के अनधिकृत महामात्य हैं। दूसरा घर दल्लप का है ये गंगराज्य के आधारस्तम्भ हैं और नागमय्य के बचपन के साथी हैं। लड़कियों का भाग्य है कि ऐसे घरों से मांग आई है। धन्य भाग!

और यदि ये दोनों विवाह सम्पन्न हो जाय तो कर्नाटक के सभी राज घरानों को स्नेह सूत्र में बंध जाने का मौका मिलेगा। जैन संस्कृति के फूलने और फलने का सु-अवसर भी प्राप्त होगा।

मल्लप यह जानकर मन ही मन फूले नहीं समा रहे थे। पर आत्म-संयम दिखाते हुए औचित्य पूर्ण उत्तर दिया —

आनन्द की बात है फिर भी मुझे एक बार घर में विचार करने दीजिए।

क्या विचार करना है? मान लो। बधाई है बधाई! तुम्हारा और तुम्हारी लड़कियों का महाभाग्य है। अत्तिमब्बे दल्लप के घर की शोभा बढ़ाये और गुण्डमब्बे चामुण्डराय के घर की। कर्नाटक में शांति स्थिर होगी और अब युद्ध ही नहीं होगा। गंग और राष्ट्रकूट पक्के दोस्त हैं। ये राजा मूक-मूर्ति से हैं। दल्लप और तुम दोनों चामुण्डराय के रक्षाकवच हो। अहिंसा सूत्र में अब सारा कर्नाटक बंध जाय।

एक कवि की भावना मूर्तिमान हो उठी।
एक कवि की मैं मनवांछित विदाई दे रहा हूँ।
— पोन्न ने हँसते हुए कहा।

नव्य चैतन्य! सच है। इस विवाह की बात से मैं अवश्य पुलकित हो उठा हूँ। इतना आनंदित हूँ कि कुछ कह नहीं सकता। क्योंकि हमारे महाप्रभु की इच्छा उससे पूर्ण हो जाएगी। कर्नाटक में अब शांति और सुभिक्ष नामावशेष हो गये हैं। महाप्रभु अरिकेसरी का दिवंगत होना क्या था क्षुद्र शक्तियों का सिर उठाना था। वे अंतिम दिनों में मुझसे कहा करते थे। पप, कुछ तो करो पर व्यर्थ के रक्तपात से कर्नाटक की रक्षा करो। कर्नाटक की नदियों में वीर पुत्रों का रक्त प्रवाहित हो रहा है, इसे यत्न-पूर्वक रोक दो। राजा-महाराजाओं की झूठी प्रतिष्ठा की बलि वेदी पर सारी प्रजा की सुख-शांति चढ़ाई जा रही है।

ऐसे ही विचार करते करते वे चल बसे। इन विवाहों से मेरे प्रभु की वह अंतिम आशा पूर्ण हो जाएगी, जो संधि-विग्रह से भी पूर्ण नहीं हो पाई थी। विवाह से वह संपन्न होते देख कर मैं कृतकृत्य हो रहा हूँ।

इस प्रकार पप जी ने एक व्याख्यान ही दे दिया। और कर्नाटक के राजकीय जीवन पर इन विवाहों से पड़नेवाले प्रभाव का स्पष्टीकरण किया।

आप का कहना यथार्थ है। मैं भी यही सोचकर आनंदित हूँ। फिर भी मल्लप जी घर में एक बात पूछ लें।

—चामुंडराय ने कहा। यह सुनकर मल्लप का मन उल्लसित हुआ।

मल्लप अपनी पत्नी से मिले। उसके चेहरे पर विचित्र शांति विराज रही थी। जीवन्मुक्त के समान वह दिखाई दे रही थी। अपने जीवन की सब समस्याओं का उत्तर पाकर कृतकृत्यता का अनुभव कर रही थी। इस धुन में बैठी हुई अब्बकब्बे को तबतक पति के आगमन का पता नहीं चला जबतक उन्होंने उसका

नाम नहीं लिया। मरता नाम मनवार वह बोली।

भाव समाधि से बहिर्गत होते ही उस के मुंह से निकला —

ओह! तुम!

और कौन यहाँ आएगा?

नहीं नहीं मैं कुछ और ही ध्यान में थी।

मुंह ही बना रखा है।

क्या मुंह पर कुछ लगा है?

[illegible] ने आंचल से मुंह पोंछ लिया।

ऐसा कुछ नहीं लगा है। जो पोंछने में आनेवाला हो। क्यों व्यर्थ कष्ट उठाती हो!

एकाएक कई बड़े बड़े मेहमानों के आ जाने पर भोजनादि का प्रबंध करना पड़ा। इस भगदड़ी में संभव है कि कुछ न कुछ मुंह पर आ लगा हो।

ये किस लिए आए हैं जानती हो?

मैं क्या जानूं?

जानती हो। फिर भी छिपाती हो।

भला तुम से भी छिपाऊं?

सुना कि तुमने कालकादेवी को वचन दिया था।

वचन? नहीं तो।

राजजी के पक्ष से सगाई की बात कभी तुम औरतों में चली थी और तब सुनते हैं कि तुमने अपनी बेटी देने की बात मानी थी। अब बात पक्की करने के लिए ये आए हैं। क्यों हम से इसे छिपा के रखा?

यह बात है! वह तो कोरी बात थी। यदि तुम्हें पसंद न हो तो बन्द करो यह नहीं हो सकता। हमारी कोई आपत्ति नहीं।

हम वचन दे कर फिर मुकर जावें और मैं ना कहकर निष्ठुर

वनू। खूब।

तुम लोग राजा महाराजाओ से सगाई पक्की करने की धुन में हो? मैं तो रावजी का स्तर अपने योग्य मानती हूँ।

तुम जो मानती हो वही हमारे लिए भी मान्य है।

उस समय की बात है। उस समय मानने न मानने का प्रश्न नही था। अब विचारलो।

क्या ? नही मानती हो !

मानती हूँ। अब भी मुझे यह सबध पसद है।

अगर मैं नही मानूं तो ?

जब नही मानते हो तो मेरा क्या बस है ! यो ही मैंने वाग्दान किया था। अब वह पूरा नही हो सका। मैं थोडे ही जीभ काढे बैठी हूं। पति ही बात न रखें तो नारी क्या कर सकेगी ? अधिक से अधिक आंसू बहायेगी और आप ही मन को सात्वना दे कर चुप हो जायेगी। सोचा था कि बेटी के ब्याह में मेरा भी हक रहेगा।

— अब्बकब्बे की पलकें भीगी सी दिखाई दी।

क्या मेरी बेटी नही है ?

है। किसने ना कहा।

तब तुमने पहले इस का जिक्र मुझसे क्यो नही किया ? मेरी भी सलाह ले लेती।

ऐसा कौन बुरा काम मैंने किया है ? अच्छे कार्यो में सलाह मशवीरा क्यो ? मैंने बात की है तो काळलादेवी से, न कि रावजी से स्त्रियो की बात है। जब परस्पर मिलती हैं तो ऐसी बातें आती रहती हैं। यों ही बात आई थी मान लिया था। अब लाज रखना न रखना तुम्हारे हाथ है। यो तो दूसरी लडकी है। उसे जिसे चाहे दे दो मैं चू तक नही करूंगी।

— अब्बकब्बे ने हताश भाव से कहा।

तुम जानती हो स्वरूप जी क्यों आए हैं

मैं क्योंकर जानूँ ?

सुना है कि पत्र लिखा था में उन के घर कन्यादान करने का वचन दिया था। अब दूसरी बार दिमाग आए हैं। एक के बारे में लड़की के दादा ने दूसरी के बारे में लड़की की माँ ने निर्णय कर लिया है। अब लड़कियों का बाप कुछ करना भी चाहेगा तो क्या कर पाएगा ! मानो उसकी हस्ती ही नहीं।

स्वरूप ने गंभीरता का स्वांग भरते भरते कहा।

देखो ! मेरे ससुर ने कितना अच्छा वर चुना है ! पहले से ही लड़कियों का कितना ख्याल रखते थे। और यहाँ तक सोचा है कि लड़कियों के विवाह के समय में उनके पिता को लेश मात्र भी चि न छून पावे।

मन जी का मन गान लगी।

तब क्या दोनों वर तुम्हें पसंद हैं ?

पहले तुम अपना अभिमत बताओ।

मेरा अभिमत ? लेकर क्या करोगी ? एक ओर स्वरूप ने वचन दिया है दूसरी ओर दादी की माँग है। इन में से किसको इनकार करते बनता है बताओ तो सही ? तुम भी तो पूरी की सोचनी है।

क्या मारे मन के लड़की देना चाहते हो ?

नहीं समझो। अब अपने आप भाग आई है। वर की खोज में धूल फाँकने की नौबत नहीं आई। फिर भी तुम शशिमणि और मृगनयनी से एक बार पूछ लो। उनकी स्वीकृति मिल तो ये शुभ विवाह [illegible] में सम्पन्न हो जाय।

सच ? नहीं बना रही हो !

नहीं जी। [illegible] में ही होवें।

तब तो हमारी लडकियो का अहोभाग्य है। अच्छा घर मिला है और पवित्र तीर्थ में विवाह होनेवाले हैं। धन्यभाग।

कहती हुई हिरन सी चौकडियाँ भरते अब्बकब्बे अदर गई और लडकियो को आवाज दी। दो-एक बार बुलाना पडा तब लडकियाँ दुमजिले पर थी उतर आई। ऐसा लग रहा था मानो देवलोक से देवकन्याएँ आ रही हो। इनकी आँखो से चपला सी दृष्टि इधर उधर पट रही थी। उनका हाव-भाव बडा मोहक था। इठलाती हुई आकर माताजी के समीप खडी हो गई।

बेटा! क्या कर रही थी इतनी देर?

— अब्बकब्बे के स्वर मे वात्सल्य घुल रहा। उसने लडकियो के मुँहपर लटकी घुघुराली अलको को पीछे सवारा, मानो चाद से कलक पोछने का प्रयास किया! और आगे बोली —

अब तक रावजी तुम दोनो की राह देख रहे थे।

लडकियाँ घवडा गई।

कौन? चामुडरावजी? क्यो माँ?

— अत्तिमब्बे ने चकित होकर प्रश्न किया।

नही हमारे रावजो।

क्या पिताजी?

गुडुमब्बे ने स्पष्ट किया। पर उनके मुँहपर हँसी खिल उठी।

हा बेटा।

पर बताओ माँ। पिताजी कब से राव जी बने?

अत्तिमब्बे ने परिहास करते हुए पूछा। अब्बकब्बे भी उसकी बातो मे छिपी ध्वनि को समझकर हँस पडी।

चामुडराव भी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

अब्बकब्बे हँसते हँसते बोली।

हमारी? क्यो? अभी विदा हो रहे हैं?

आश्चर्य का अभिनय करते हुए अलिमञ्जु ने पूछा।

आज ही तो आए! आज ही जाने लगे क्यों? पिताजी ने दो-एक दिन ठहराने का आग्रह नहीं किया

किया और करते भी। पर क्या तुम जानती हो वे किस लिए आए हैं?

अलकनन्दे हँसी नहीं रोक सकी। उस हँसी का आशय समझकर भी अनसमझी सी अलिमञ्जु बोली —

मैं क्योंकर जानूँ। हम लोगों का आना जाना बन्द है। किसीसे बोलना तक मना कर रखा है। जिस दिन हमारे दादाजी गए उन्हीं के साथ हमारा स्वातन्त्र्य भी चला गया। अगर वे रहते तो आ कर वामनराव से ही सीधे बातें करके जान लेती।

हाँ हाँ अवश्य ही ऐसा करती। वामनराव का क्या उनके बाप का भी भय हमें नहीं। हाय! हम इन नारियों का स्वातन्त्र्य ही क्या रहा है। दादाजी के पीछे ही चला गया।

— रुआँसी हो अलकनन्दे बोली।

वामनराव जी को क्या समझ रखा है बहन! आप सब साम्राज्य के कर्णधार हैं!

भले ही कर्णधार ही हों। इससे हमारा क्या बिगड़ेगा? क्या हम उनसे लोहा लेना है! जो ही युद्ध-क्षेम की बात करना है?

— अलिमञ्जु ने गम्भीरता से कहा।

लोहा बजाने के लिए भी तैयार दिखाई देती हो। तुम दोनों शायद हो।

— अलकनन्दे ने ओठ काट लिया।

पुरुष लोग स्वार्थी हैं। हमारे हाथ में वीणा देकर विवश किए रखा है। नहीं तो लड़ने में भी पुरुषों की बराबरी कर सकती

थी। या तो मर कर वीर स्वग पाती या जी कर अमर कीर्ति पाती।

-- गुडुमब्बे वीरमहिला-सी गरज उठी।

यह सब तुम्हें सिर चढाए रखा है न, उसका परिणाम है।

—अब्बकब्बे झूठा क्रोध दिखाते बोले।

दादा जी रहते तो इससे भी अच्छा परिणाम निकलता।

— अत्तिमब्बे ने निस्सकोच कह दिया।

जाने दो। अब हम मतलव की बात करें।

— अब्बकब्बे ने बात काटकर कहा।

हाँ हाँ, अवश्य करें। किसने मनाकर रखा है?

— गुडुमब्बे बोली।

देखो बेटा। दल्लपजी नागदेव की सगाई पक्की करने आए हैं और

अब्बकब्बे की बात काट कर अत्तिमब्बे बीच मे ही बोल उठी।

रावजी अपने बेटे की।

फिर तीनो अपनी हँसी नही रोक सकी।

तुम दोनो डाइन हो डाइन। पहले ही ताड लिया है।

— अब्बकब्बे ने कहा।

माँ, हम क्या तुम्हारी? बेटियाँ नही हैं। यह भी नही समझ सके!

— हँसते हसते गुड्डुमब्बे ने कहा।

इनकी वातो से अब्बकब्बे को अतीव आनद मिल रहा था। फूली न समाती हुई वोली —

बेटा, हमारा विचार है कि नागदेव से अत्तिमब्बे की और जिनण्ण से गुडुमब्बे की वात पक्की कर दें।

— लडकियो के भाव पढने लगी।

मेरी कोई आपत्ति नही। इन दोनो में से चाहे किसीने वाते पक्की कर लो।

बालिम ने न स्वीकृति दी।

इस न माँ प्रसन्न हुई। मुझम ने की आ देना।

क्या मेरी बात मानी जाएगी

— गदमस्वे ने उलटा प्रश्न किया।

क्या बात। मुझ पर भी सन्देह है? हम लोग चाहते क्या हैं। तुम्हारा सुख ही हमारा सुख है। तुम जिसे चाहे पसन्द कर लो।

माँ हम दोनो यमज-सन्तान हैं। साथ साथ जन्म लिया। साथ ही साथ विवाह म । कर सकेगा?

गुड तुम्हारी बात समझ म नही आई। और कितने दिन तुम साथ रह सकोगी? उसर बाद वास्तव म भी क्या हो उस जीवन के लिए तुम्हें ससुराल तो जाना ही है।

सम्बन्ध ने कन्याओं को जीवन धारा की गतिविधि स्पष्ट कर दी।

ठीक है! जहाँ जीजी की सगाई पक्की हो वहीं मेरी भी हो जाय माँ

गुड्डन ने गंभीर ध्वनि मे कहा।

क्या कह रही हो गुड! क्या ऐसे अवसर पर भी मजाक करती हो?

— सम्बन्ध ने जरा क्रोध स कहा।

मजाक नही कर रही हूँ माँ! जीजी के बिना मैं पल भर भी जीवित नही रहना चाहती। जीजी के साथ एक ही दिन एक ही मुहूर्त मे एक ही पुरुष के हाथ सौंप दो।

क्या कहती हो गुड? दिल्लगी की भी कोई हद होती है। सच सच बताओ।

दिल की बात ही कर रही हूँ। दिल्लगी नही।

तब तो तुम नादान हो बेटा। इसने बिना तक तुम्हारा पालन पोषण किया। अब तुम्हें विदा करना ही पड़ेगा। बिछड़ना है बेटा।

संसार का नियम जैसा है वैसे हमको चलना पड़ता है। लड़कियों को ससुराल भेजना ही है क्योंकि वही उनका घर है। दो-एक दिन तुम जीजी के विछोह में अवश्य दुखी रहोगी पर जैसे जैसे पति से प्यार पाकर घर गृहस्थी में फंस जाओगी तब सब ठीक हो जाएगा।

मां, तुम्हारा कहना सच है। मैं मानती हूँ। पर मैं नहीं चाहती। क्या हम दोनों तुम्हारी कोख में नौ महीने साथ न रहीं? क्या एक ही पालने में रहकर शैशव और बचपन नहीं बिताया? साथ ही साथ इतने दिनों तक आनंद में रहते आई। अब भी मां, जो जीजी का पति होगा वही मेरा भी पति होगा यह निश्चय मानो।

गुड्डमब्बे ने दृढ़ता से कह दिया।

यह तुम्हारी भावुकता है। बेटी, क्षणिक भावावेश में क्या जीवन भर पछताते रहना चाहोगी। तुम नादान हो। चाहे जो कहो पर हम जानबूझ कर ऐसा क्यों कर देंगे? एक म्यान में दो खड्ग रखने की मूर्खता कौन करे।

अब्बक्कब्बे ने समझाया।

मांजी। यह मेरी व्यक्तिगत बात है। औरों की बात लेकर मैं क्या करूं। मानती हूँ पूरी जिम्मेदारी मेरी ही होगी। पर यह तो निश्चित है कि जीजी का पति मेरा भी पति होगा।

बेटा अब रहने दो। तुम्हारा यह आदर्श प्रेम सराहनीय है। पर जब सौत बन जाओगी तो यह बात नहीं रहेगी। समझी?

अब्बक्कब्बे ने भविष्य का चित्र स्पष्ट किया।

सौत बनकर भी हम यह नीति निभा सकेंगी।

गुड्डमब्बे ने दृढ़ता से कहा।

पगली कहीं की! चुप रहो। जिंदगी खेल बालना नहीं जहाँ आराम से सो सको। तुम सचमुच पगली हो। समझी!

-- गुड्डमब्बे पर तरस खाते हुए फिर से समझाया।

अबतक अनिमक्का सब सुन रही थी। पर कुछ न बोली थी। बहन के प्रति उसका प्रेम उमड़ पड़ा। बोली —

मां! कुछ के कहने के अनुसार ही हो जाय। हम दोनों साथ जाएंगी। एक दूसरे का सहारा बन कर रहेंगी।

लो! एक और पागल निकल आई। समझ रही थी कि यही एक पागल है। देखो यह सब न चलेगा। सब तो लड़के हैं। उनमें से अपनी अपनी रुचि का पसंद कर लो और आराम यही प्रीति दूर रह कर भी निभाती हुई सुखी रहो। दोनों को एक ही घर हम नहीं भेज सकते। समझी।

अम्मकम्मे निर्णायक स्वर में दृढ़ता से कह दिया।

तब तो हम किसी को पसंद नहीं करती हमें विवाह नहीं करना है।

— दोनों के मुंह से एक साथ निकल पड़ा।

दस साल पड़ी रहो तो जानोगी।

— अम्मकम्मे ने दांत पीसते हुए कहा।

बस हो गया। चाहे जितने साल पड़े रहना पड़े पड़ी रहूंगी। विवाह करेंगी तो एक ही घर में। नहीं तो ऐसे ही रहेंगी।

दोनों ने अपनी अभिलाषा को दृढ़ता पूर्वक बता दिया।

— अम्मकम्मे स्तब्ध रह गई। कुछ देर बाद बोली —

क्या यही तुम्हारा अन्तिम निर्णय है।

जी हां! यही अन्तिम है। यह कभी नहीं बदलेगा।

— दोनों ने उसी दृढ़ता से दुहराया।

अम्मकम्मे पर मानो आसमान ही टूट पड़ा। कुछ देर तक सिर झुकाये बैठी रही। मुख पर चिंता की रेखा खिंच गई थी।

अब तुम चली जाओ।

— दोनों सस्मिता से कहा।

वे दोनो चली गई । उनके चेहरे पर प्रसन्नता नही थी।

जब मल्लप ने यह सुना तो वज्राहत सा बैठ गया। कैसे इस जटिल समस्या को हल करें। यह टेढी खीर है। ऐसे सोचते सोचते रात भर करवटें बदलते रहे। नीद नही आई। अतिम पहर में झपकी सी आई।

मल्ल! अतिमब्बे और गुडुमब्बे एक सिक्के के दो पहलू हैं। उनकी इच्छा पूरी करो बुरा नही होगा दोनो को एक ही वर से ब्याह दो।

नागमय्य मानो कह रहे थे। मल्लप की आँखे सहस उसके खुली। सूरज निकल आया था। धूप चढ रही थी। उठकर हाथ मुँह धोया। सीधे पप कवि के पास गया। अपनी लडकियो की नादानी और अपना स्वप्न दोनो कह सुनाया। सुनकर पपकवि का रस-सपुट खिल उठा! भाव तरग उठने लगी। ऐसी बहनें! धन्यभाग। इन्हें आँखो देखने का सौभाग्य हमे प्राप्त हुआ। तुम धन्य हो मल्लप। यह परमात्मा की लीला है। लडकियो की इच्छा के अनुसार ही करो।

खैर। लडकियो की इच्छा हो रहो क्या यह बात इतनी सीध है? सोचिए तो सही। लडकियो को मागते हुए दो सज्जन आए हैं। किसको दें और किस को नही दे? दल्लप चालुक्य साम्राज्य की नीव हैं। उधर रावजी गग साम्राज्य-लक्ष्मी के सर्वस्व हैं। इन दोनो मे से किसी का भी मन दुखाना नही चाहता। यदि यह बात नही आती तो दो लडकियाँ थी। दोनो को देकर सतुष्ट रह जाता। वह सौभाग्य मेरे भाग्य में नही बदा।

यो कहते कहते सिर पर हाथ धरे बैठ गया।

मल्लप, वह ससार है। थोडे ही सारी बातें हमारे इच्छानुसार बनेगी हमें विधि के इच्छानुसार नाचना पडता है।

अब क्या करें?

वह मैं सोचूंगा। मुझ पर छोड दो। आज भोजन के पश्चात्

कुछ रास्ता निकाला जाय। अब और किसी के कानों में इसकी भनक तक न पड़े समझे ?

अतिमब्बे और गुडमब्बे पर ही यह भार डाल दें तो —

यह ठीक नहीं ! हम जान बूझकर क्या अपने को खतरे में डालें। सीधे रास्ते से यह काम नहीं बनता। ऐसी युक्ति करें जिससे बुरा परिणाम न निकले और दल्लप तथा रावजी भी बुरा न मानें। तुम निश्चिन्त रहो।

इन शब्दों से पोन्नकवि ने मल्लप को सान्त्वना दी।

भोजन से सब निवृत्त हुए। पिछले दिन का सा ही वैभव और सम्भ्रमपूर्ण था। अतिमब्बे और गुडमब्बे सबने समान थीं। उनमें इतना साम्य था कि कभी कभी माता पिता भी गुडमब्बे और अतिमब्बे में गड़बड़ा कर बैठते तब और लोग कैसे पहचानते ! चामुण्डराय के मन में इन बहिनों को देखकर यह भाव उठ रहा था कि कैसे इनको अलग करें ? यह भी सोच रहे थे कि यदि इन दोनों का विवाह एक ही व्यक्ति से ही जाय तो ! यही सोचते सोचते चिन्तन कर रहे थे।

मल्लप के यहाँ दुपहर को यथावत बैठक हुई। सब एकत्रित हुए। मल्लप और चामुण्डराय आये और दोनों कुछ व्यस्त से थे।

मल्लप ! और कितने दिनों तक यों ही खा-पीकर रहा जाय ?
मुस्कुराते हुए दल्लप ने जिज्ञासा की।

चाहे जितने दिन। पर आप को कोई कष्ट तो नहीं हो रहा है।
बप ने उत्तर दिया।

ऐसा भोग मिलता रहे तो कौन अभागा जाना चाहेगा ?
चामुण्डराय ने हँसते हँसते कहा।

तब जल्दी क्यों। कुछ दिन और ठहर जाइए।

हाँ मैं आराम करना चाहता था। इधर कई वर्षों से इतना आराम नहीं मिला था। युद्ध और कोलाहल के मारे नाकों दम थी।

यहा क्या आया, बस, सब चिताओ से मुक्त होकर निश्चिन्त हूँ।

ध्वनि में हार्दिक प्रसन्नता झलक रही थी।

मल्लपजी अब हम मतलब की बात करें। कहिए कब विवाह निश्चित करेंगे। और कहाँ करेंगे ?

दल्लप ने जिज्ञासा की।

जी हाँ ! मुझे भी लौट जाना है। बताइए लौट कर मैं माता जी से क्या कहूँ ?

— चामुडराय बोले।

मल्लप पप की ओर कातर नेत्रो से देखने लगा।

राव जी, एक बडी समस्या उठ खडी हुई है

मल्लपजी ! यह क्या ? निस्सकोच बताइए न ! घरगृहस्थी की सैकडो झझटें होती हैं। क्या घर मे कुछ प्रतिकूल परिस्थिति है ?

सहानुभूति पूण आश्वासन देते हुए चामुडराव जी ने कहा।

ऐसी कोई खास बात नही। अत्तिमब्बे और गुड्डमब्बे यमज सतान हैं। साथ साथ पाली पोसी गई हैं। अब वे बिछुडना नही चाहती।

पप ने सूचित किया।

उनकी ओर देखते समय मुझे भी यही लगा। तरस आई। आम के जोडे सी लगती हैं। इनको अलग अलग रहने के लिए कहना बडा कठिन काम है। पर करे क्या ? लडकियाँ कै दिन साथ रह सकेंगी। बिछोह उनके भाग्य मे बदा हैं। एक बात हो सकती है प्रारभ में कुछ दिन के लिए वे चाहे यहाँ या वहाँ साथ साथ रहें। धीरे धीरे ससुराल का मोह बढेगाता तब बिछोह नही अखर यह प्रकृति का नियम है।

— चामुडराव जी ने सहज ढग स कहा।

पर उनकी बात समाप्त होते ही पप जी बोले —

यह बात नही है। और जो है वह इतनी मीधी भी नही है।

लड़कियों का विचार कुछ और है। वे सोच रही हैं कि साथ साथ मैके में रह रही हैं तो ससुराल में भी साथ साथ रह सकेंगी?

यह समझकर श्यामराव भी स्तब्ध हो गए। उस मौन में इतना भयभीत हुआ। किसी ने मौन भंग करने का साहस नहीं किया।

सच कहता हूँ न जाने आज भोजन करते समय मेरे मन में भी क्या ऐसी ही बात उठ रही थी। सोच रहा था कि इन कन्याओं को एक ही घर पर रहने का सु अवसर प्राप्त हो तो क्या ही अच्छा होगा। इन सुन्दर बालिकाओं को एक साथ एक ही मण्डप में एक लग्न में दिया जाय तो कैसे रहेगा! एक ही टहनी के दो फूलों सी रहनेवाली इन दोनों को अपने घर की शोभा बढ़ाते देखकर कौन अपना अहोभाग्य नहीं मानेगा? वास्तव तो यह है कि लड़कियों का विचार भी ऐसा ही है।

श्यामराव ने भावावेश में कहा। उन की मुद्रा में ऐसा भाव रहा था कि वे इन दोनों को अपनी पतोहू बनाने पर तुले हुए हैं।

यह सुनकर दत्तप बोले

सत्य रावजी! इसी से पहले मैं यहाँ आया था।

दत्तप ने मन् सम्प्रदाय की शरण लेकर कहा।

देखिए, यहाँ आप पीछे की क्या बात है? जिसे कन्याएँ पसन्द करेंगी उसी घर में।

श्यामराव बोले। उनका विश्वास था कि लड़कियाँ अवश्य उन्हीं के घर आना पसन्द करेंगी।

कन्याओं ने तुम पर ही यह भार सौंप दिया है। सो तो उनके सामने दो घर हैं। दोनों में तुम जिसे चाहो पसन्द कर लो वे करने को तैयार हैं। पर दोनों किसी एक ही से ब्याह करना चाहती हैं। मल्लिकाम्बा और कुसुमाम्बा की बात स्पष्ट है और सीधी-सी लगती है। पर हमारी समस्या बड़ी टेढ़ी है। क्यों कि दत्तप जी भी हमारे

आत्मीय है और आप भी। हमारी लडकिया दोनो के वात्सल्य-भाजन बनी है। और आप महानुभाव हमारे समाज के जगम हिमालय है। हमें तो कुछ नही सूझ रहा है। समस्या आप के सम्मख रख चुके। अब आप जो भी मार्ग निकाल दे उस पर चलने को तैयार है।

पप जी ने मल्लप की ओर से निवेदन किया।

दल्लप और रावजी दोनो एक दसरे की ओर देखते हुए अवाक बठ गए। दोनो की इच्छा थी कि इन कन्या-रत्नो से अपने अपने घर की शोभा बढा लें। पर बात बडी जटिल थी। उन दोनो के जीवन में ऐसी समस्या अब तक कभी नही आई थी, क्योकि यह शक्ति और समथ्य की बात नही थी। युक्ति भी काम नही दे सकती थी। सधि-विग्रह में दोनो नामी थे पर इनकी बुद्धि यहाँ काम नही दे रही थी।

दल्लप जी और चाम्डराव जी! आप दानो की दुहाई है। मैं अत करण की बात कहता हूँ। आप दोनो मे मेरे मन मे किचित् भी भेदभाव नही है। चाहता था कि आप दोनो के घर कन्यादान कर मैं कतकृत्य हो जाऊँ। पर मेरी आशा की जड कट गई। मैं आप दोनो में किसी को भी ना नही कह सकता। अक्तिमब्बे और गुडुमब्बे मेरी कन्याएँ नही है, समझ लीजिए कि आपकी हैं। आप दोनो विचार कीजिए और जो भी निणय दीजिए वह हमारे सिर-आँखो पर होगा। केवल हम यही चाहते हैं कि आप दोनो की कृपा बनी रहे।

• मल्लप का गला रुँध गया।

मल्लप! छि! क्यो इतना व्यग्र होते हो? समस्या उठी है तो हल करना ही होगा। व्यग्र होने से थोडे ही काम बनेगा। हम पपजी पर यह भार छोड देना चाहते हैं। वे ही मार्ग-दशन करें। वे वयोवृद्ध है और ज्ञानवृद्ध भी। उनकी बात मान ले। कम से कम मैं सहर्ष उनका निणय स्वीकार करूँगा।

चामुण्डराय ने न अपना निश्चय सुनाया।

रन्नप को भी यह बात पसंद आई।

पंप ने नहीं सोचा था कि निर्णय देने का भार उन पर आ पड़ेगा। अतएव क्षण भर मन ही मन विचार करते रहे। बोले —

यह मेरा अहोभाग्य है कि आप महानुभावों ने मेरा विश्वास किया है। इस के लिए मैं सदा आप का कृतज्ञ रहूँगा। अब मेरा सलाह है कि ——

पंप की बात रुक गई।

कहिए, कहिए— एक ही स्वर में चामुण्डराय और रन्नप बोले।

पंप ने अपनी सलाह सुनाई। दोनों ने स्वीकृति दी।

तब पंप जी ने चामुण्डराय और रन्नप का नाम अलग अलग पुर्जों पर लिखा। एक सा मोड़ा और एक कटोरी में शांतिजिनेंद्र के सम्मुख रख कर पूजा कराई। उस कटोरी को ढक कर दूर छिपाया। फलफूल से उस की भी पूजा की। रन्नप और चामुण्डराय ने श्रद्धा भक्ति के साथ उस पर फूल चढ़ाए। तीन साल का एक बालक बुलाया गया। उसने कटोरी से एक पुर्जा उठाकर पुरोहित जी के हाथ में धर दिया। पुरोहित जी ने उसे खोलकर सब को दिखाया। उस पर रन्नप का नाम लिखा था। दैव ने रन्नप का साथ दिया।

रन्नप मैं भाग्य-परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ।

चामुण्डराय ने खिन्न होकर स्वीकार किया।

रावजी अब दैव ने इन दोनों कन्याओं को मुझे दे दिया है। अब इन पर मेरा अधिकार है। आप खिन्न न हों। अब भी क्या बिगड़ा है? आप की प्रसन्नता के लिए मैं इन दोनों को आप को सौंप सकता हूं। आप खिन्न न हों। आप सहर्ष मेरे प्रस्ताव स्वीकार कीजिए।

रन्नप ने निवेदन किया।

दल्लप की उदाग्ता से चामुडराव की खिन्नता दूर हुई। वोले--

दल्लप जी, हमे दैवेच्छा के सामने सिर झुकाना ही पडेगा। व्यक्तिगत लाभ-अलाभ की वात अलग है। पप देव के सामने, इस उम्र में कैसे झूटा निकलूं? असभव है। और एक वात है। नागमय्य की पोती मेरी भी पोती है। पतोहू न वन सकी तो क्या हुआ? मैं चाहता हूं ये दोनो सुखी रहे। अधिक क्या कहूं? आप भाग्यवान है।

चामुडराव की वातो मे सच्चाई की झलक थी।

दल्लप ने दोनो हाथ जोडकर उनको प्रणाम किया। यह निश्चय हुआ कि अतिमव्वे और गुडुमव्वे का विवाह दल्लप के एक मात्र पुत्र नागदेव से हो। चारो ओर चामुन्डराय का गुणगान होने लगा।

४

इस विवाह मे मल्लप अपनी सारी सपत्ति पानी की तरह वहा देने को तत्पर था। पोन्नमय्य की अपनी सतान नही थी। वह स्वभाव मे भी वडा उदार था। अव्वकव्वे की सपत्ति भी कुछ कम नही थी। इस के अतिरिक्त नागमय्य ने पोतियो के नाम पर काफी सपत्ति रख छोडी थी। मतलव यह कि आज कल विवाहो में जो दहेज की वात उठा करती है वह वहाँ उठ ही नही सकी।

विवाह की तैयारी इस पैमाने पर हो रही थी कि राजा महाराजाओ के यहाँ भी कदापि सभव नही हो। सारा पुगनूर विवाह मडप वन गया था। हाट वाट सब वदनवार से शोभित हुए। कस्तूरी, केसर, चदन आदि सुगध द्रव्य से सारा वायुमडल महक उठा। प्राय जगल में एक भी वृक्ष या एक भी फूल नहीं वचा होगा क्योकि पुगनूर की सजावट में सव खप गए थे। खभे के स्थान मे सुपारी के

पेड़ लगाए गए थे इन पर पान की लताएँ भी लगाई गई थीं। देखने में
ऐसा लग रहा था मानो किन्नर ही धरती में इस विवाह के ही
उपलक्ष्य में यह मण्डप तैयार कर रहे हो। जगह जगह आम के पेड़
और लिए ऐसी शोभा दे रहे थे मानो कामदेव रति-वसंत के साथ आ
पधारे हो। इन पर लगी हुई मधुर लताओं में दाम्पत्य जीवन का आदर्श
व्यक्त हो रहा था। आम-से वृक्ष अवलम्ब पाकर लताएँ इठला रही थीं।
वसुधकला की शोभा वर्णनातीत थी। रंग बिरंगे फूलों को इस ढंग से
सजाकर रखा था कि वहाँ सदा ही वसन्त का भ्रम बना रहता था।
फूलों की सजावट में कई विचित्र विचित्र आकर्षण थे। अधिक क्या,
कहें जहाँ वहाँ सजीव हो रही थी। इन फूलों के मकरन्द से आकृष्ट
मधुमक्खियाँ जगह जगह छत्ता बनाकर मंडरा रही थीं। और इन के
द्वारा एकत्रित मकरन्द की महक से वायुमंडल का प्रत्येक ग्राम सार्थक सा लग
रहा था। इन की गुंजन से सारा वातावरण मधुर और सरस संगीत मय बना
हुआ था। विवाह मंडप की बात कौन कहे! कलिंग के प्रसिद्ध कलाकार
उसके निर्माण में लगे हुए थे। रत्न-जड़ित शिला से मंडप बनाया गया था।
कलिंग की सारी कला और कमनीयता का वह अनुपम नमूना था। प्राय:
इन्द्र का सभा भवन भी इस के सम्मुख कम ही आकर्षक रहा होगा।

विवाह शुभ मुहूर्त में सम्पन्न हुआ। कैलाशगिरि पावापुरि
चंपापुरि, सम्मेद शिखर एवं ऊर्जयंत जैसे पवित्र तीर्थों से जिनमंदिरोदक
मंगवाया गया। वधू वर की शोभा देखनेवालों को विस्मय
होकर विधाता की कौशलता पर था क्योंकि बसन्त तो ही आने की
थी। कामदेव के दाहिने में रतिमग्न और बाएँ में कुसुमश्री विराज रही
थी। नागकन्याओं के समान इन कन्यारत्नों को सजाया था। जब
सौन्दर्य का अवलोकन हो तो रसराज का प्रवाह क्यों न उमड़े?
नखशिख सिंगार से ये दीप शिखा सी लग रही थी। कामदेव
की आँखें एक ओर कुसुमश्री को दूसरी ओर रतिमग्न को

देखकर खिल उठी। ज्योतिलना-सी शोभायमान् इन कन्याओं की कान्ति ने दीपशिखा को मलिन कर दिया था।

पप कवि ने चामुडराव से कहा —

देखिए। आदि देवजी के भी दो रानियाँ थी। ये दोनो यशस्वती और सुनन्दा सी लगती है। बीच में बैठे हुए यह नागदेव साक्षात आदिदेव लगते है।

कवि चक्रवर्ती जी! क्या ही अच्छा होता यदि आप इनको देखने के बाद आदिपुराण की रचना करते। उनको भी यमज सतान बना सकते थे।

— चामुडराव ने हसते हुए कहा।

उधर दल्लप की पत्नी पद्मब्बे जक्कब्बे से बोली।

— तुम धन्य हो बहन! न जाने कितने जन्मो का सुकृत-फल इस रूप मे प्राप्त है। तुम बडी भाग्यवती हो।

पर बहिन आज स हमारा भाग्य समाप्त समझो। इन चादनी की पुतलियो को केवल तुम्हारे घर की शोभा बढाने के लिए ही इतने दिनो तक मैंने धरोहर के रूप मे रख लिया था। अबतक जो कुछ हमारा था वह सब तुम्हारा बना।

जक्कब्बे की आँखें बरसने लगी।

यह क्या? रो रही हो बहन! मगल अवसर पर आसू बहाना नही चाहिए। जब चाहो तब इन्हे भेज दिया करेंगे। आप की चादनी की पुतलियो पर ठडी हवा का झोका तक लगने नही देंगे। हमारे आँगन की शोभा बढाने के लिए तुम्हारे यहा से इस दीपशिखा की जोडी लिए जा रहे है। इनकी लौ कभी मद नही पडेगी!

पद्मब्बे ने सतोष की साम ली।

फिर भी हम अभागो की ये ही सतानें थी। अबतक हमे सतान-हीनता नही अखर रही थी जब सचमुच हम अभागे बने।

का गर्भावास प्रारंभ हुआ। तब देवगणो ने अव्यक्त रहकर ऐरादेवी की सेवा की थी। महल मे प्रतिदिन सुवर्णवृष्टि होने लगी थी। नव मासो के पूर्ण होते ही ऐरावती के गर्भ-सुधानुधि से शांतिनाथ भुवि पर अवतीर्ण हुए। ईश के दर्शन के लिए देवगण इस पृथ्वी पर उतर आए और उन्होंने जन्माभिषेक महोत्सव मनाया। धीरे धीरे शांति देव का शैशव और बाल्य समाप्त हुआ। यौवन में पदार्पण करते ही शांतिनाथ नव मन्मथ से मोहक दिखाई देने लगे। हजारो कन्यारत्न उनके पदतल पर आ लुटे। शांतिनाथ ने दिग्विजय करके छओ खंडो मे अपना सिक्का जमाया। इस उपलक्ष्य मे वृषभाचल पर विजय स्तंभ पर विजयगाथा लिखवाने का संकल्प करके जैसे ही वहा गए तो वहा तल से लेकर चोटी तक पूर्ववर्ती चक्रेशो की विजय गाथाए पाई। एक ओर आश्चर्य हुआ। दूसरी ओर मन मे यह विचार उठा कि आखिर मैंने कौन सा बडा कार्य किया है ! मेरे पूर्ववर्ती राजा-महाराजाओ ने यह कर ही दिया था। ऐसा विचार कर बिना अपनी विजयगाथा खुदवाए लौट चले।

इस घटना का बडे सुंदर ढंग से पोन्नकवि ने वर्णन किया।

शांतिनाथ चक्रवर्ती के रनवास मे कोई छियानवे हजार ललनाएँ थी। शांतिनाथ चतुर्दश रत्नो के अधिनायक थे और षट्खंड के शासक। इस महानुभाव को पूर्व पुण्य से दश निध भोग प्राप्त था। महाकवि ने इस का ऐसा रोचक वर्णन किया कि श्रोतागण फूले नही समा रहे थे। शीतल महासागर के बीच मे जिस प्रकार उष्णोदक का प्रवाह बहता रहता है उसी प्रकार शांतिनाथ के जीवन के नसरग की नसो मे ही विरागभाव भी छिपा हुआ था। सम्यग्दृष्टिवाले पात्र महाकवि ने इस का बडा मार्मिक वर्णन सुना दिया।

एक बार जब शांतिनाथ दर्पण मे मुख देख रहे थे तब उनके मन मे अपने जन्मजन्मान्तरो की स्मृति जाग उठी। समुद्र

वराजमान हुए। इस का वणन सुनते सुनते श्रावक इतने खिल उठे मानो स्वय भी मिद्धशिला के दर्शन कर चुके हो और अलौकिक आनद का आस्वादन करते हूए रोमाचित हो उठे।

'विवाह ममारोह मे सम्मिलित मुमगली-वृन्द को भेंट के रूप में अत्तिमब्बे और गुडुमब्वे ने शातिनाथ पुराण की प्रतियाँ दे दीं कोई सौ एक प्रतिलिपियो बनी थी, अतएव सब को प्रतियाँ नहीं मिल मकी। जिन्हे प्रतियाँ नही मिली वे अत्यत उदास दिखाई दे रही थी। उन के उतरे हुए चेहरे को देखकर अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे भी खिन्न हो उठी। मल्लप ने यह सहा नही गया। उन्होन सब के सम्मुख हाथ जोडकर निवेदन किया कि कृपया कोई निराश न हो। शीघ्र ही हजारो प्रतिलिपियाँ कराई जाएँगी और प्रत्येक के घर भेजी जाएगी।

यह देखकर और सुनकर पप कवि की आत्मा फडक उठी वे कहने लगे —

'अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे कर्नाटक-जननी की दो आँखें है।

अपनी कृति की, अपनी आँखो के सामने ही हजारो प्रतिलिपियाँ बनते देखकर पोन्नकवि फूले नही समा रहे थे।

अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे दोनो ने सब सुहागिनो के आँचल को मोती और हीरो से भर दिया। इनके भाग्य से अक्षय धनराशि प्राप्त थी। अत करण उदार था। इस अक्षय पात्र को रिक्त करने मे उदारमन असमर्थ बन गया कि फिर भी ये दानचितामणि कहलाई। इन का अतरग समबसरण से अंकित था अतएव ये सम्यक्त्व चूडामणि कहलाने लगी।

५

फलो से सजी हुई थाली लिए जब अपनी प्रियतमा को कमरे

दोनों के माथे पर घूँसा दूँगा?

—नागदेव ने अपनी बात स्पष्ट की।

हमें हिसाब पढ़ाने के लिए एक ओझाजी आया करते थे। अपने विषय के नामी पंडित थे। हमारा अहोभाग्य है ऐसे विद्वान के चरणों में बैठकर गणित शास्त्र पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त था। हमारे घर पर एक बहुत ही सुंदर बिल्ली थी। उस बिल्ली और उसके बच्चों को हमने प्यार से पाला था। जब कभी हम गणितशास्त्र पढ़ने बैठती तब वे आकर म्याऊँ-म्याऊँ करते ऊधम मचा देते थे। एक दिन ओझा जी को इतना क्रोध आया कि तुरंत बढ़ई को बुलाया और दरवाजे में दो छेद बनवा दिए — एक बड़ा और एक छोटा। दूसरे दिन हमने ओझाजी को प्रसन्न देखकर पूछा कि क्या एक ही छेद से काम नहीं चल सकता था? उस पर बोले— देखो तुम अभी लड़की हो। क्या इतना भी समझ में नहीं आती कि बड़ा बड़ी बिल्ली के लिए है और छोटा छोटों के लिए है। उनकी गंभीरवाणी सुनकर हम अपनी हँसी नहीं रोक सकी थी फिर भी किसी तरह हँसी दबा कर बोली—

क्या पंडित जी! बड़े छेद से छोटे नहीं निकल सकते?

इससे पंडित जी का चेहरा तमतमा उठा। बोले— क्या मुझे मूर्ख समझती हो? देखो वाचस्पति चक्रवर्ती ने मुझे गणितशास्त्र पारंगत माना है और सम्मान किया है। ऐसा कहते हुए अपने जेब से सुवर्णपदक निकाल कर दिखाया। चेहरे से उनका आत्माभिमान टपक रहा था। वे बोल ही रहे थे कि एक बात हो गई। बड़ी बिल्ली बड़े छेद से कमरे के बाहर चली गई और उसके बच्चे उसी छेद से माँ के पीछे चल पड़े। फिर उसी प्रकार आकर मेरी गोद में खेलने लगे। हम अपनी हँसी नहीं रोक सकी पर ओझाजी आपे से बाहर हो गए। बोले— ये भी मूर्ख हैं और तुम भी हो! मेरा मतलब ही इनकी समझ में नहीं आया तो क्या करूँ — कहते कहते घर चले गए।

कहानी सुना कर मुस्कुराते बैठ गई।

तुम्हारे ओझाजी का व्यावहारिक ज्ञान थोथा था।

—नागदेवने ओझा जी की मूर्खता पर तरस खाते हुए कहा।

खैर, वे इस दृष्टि से कुछ भी हो, पर आप तो व्यवहार कुशल हैं?

— फिर मुस्कुरा उठी।

इस क्षेत्र में कौन मेरे टक्कर का है?

बिलकुल सही बात है। इसी लिए तो आपने दोनो के माथे पर नाम खुदवाने की योजना बनाई है?

कुछ तो करना ही था। अगर यह बन जाय तो दोनो को पहिचानने में बिलकुल दिक्कत नही रहेगी।

— नागदेव ने दृढता से दुहराया।

जी, क्या एक के माथे की खुदवाई मे दोनो को पहिचानते नही बनता?

कैसे? बताओ तो सही?

खूब! खूब!! आप हमारे गणितशास्त्र विशारद के बडे भाई साहब है!

यह बात सुनते ही नागदेव को अपनी बेवकूफी समझ में आई। खुद हँस पडे। तब तक दसरी भी आकर उसकी बगल में बैठ गई। नागदेव के आनद का पारावार उमड ने लगा। सौंदर्य-राशि के बीच में अपने को पा, फूले नही समा रहे थे। एक को देखने के लिए दो नेत्र कम थे तब दोनो के सौदय देखे कैसे? दोनो ललनाओ ने महीन साडी पहनी थी। ऐसा लग रहा था मानो नन्ही सी लताएँ चादनी के परिधान मे इठला रही हो। दोनो चादनी को साचे में ढालकर बनाई गई पुतलियो सी लग रही थीं। नागदेव के दोनो हाथो में सौंदर्य की दो पुतलियाँ थी। कस्तूरी पर सान चढाए कुसुम-शर के समान ये दोनो कुसुम कोमल लतागिनियाँ थी। अत्तिमब्बे और गुड्डमब्बे के

साथ नागदेव ने भी [illegible] सम्मान किया। दक्षिण कन्या थी। [illegible] तक सरकनेवाली इन की नागवेणी थे साथ नागदेव खेल रहा था। उन दोनों ने नागदेव को नृत्य रमाया। दोनों जब नागदेव के कंधों पर [illegible] कर बैठ गई तो नागदेव दोनों के सिर पर अपनी मधुली फिराने लगे [illegible] हो उठे और वे भी आपाद-मस्तक सिहर उठीं।

६

विवाह के पश्चात् एक महीना बीता। मन्मथ ने उनके आग्रह को आग्रह-पूर्वक घर पर ठहरने के लिए राजी कर लिया था। इधर बसन्तश्री और मुग्धश्री नित्य नए नए ढंग से उनकी रतिक्रीडा में रस बना रही थीं। इस विद्या में दोनों में होड़ लगी हुई थी। पति के साथ हर बात में प्रतिस्पर्धा करती हुई दोनों रमणियों ने उन्हें अपने हृदयमन्दिर बना लिया। कभी पति के साथ वन विहार करती और कभी जल-क्रीड़ा करती जिस से कि उनका प्रणय सूखने न पाये। इन प्रणय रसिकाओं ने एक बार धनुष से ऐसी टंकार निकाली थी जिससे नागदेव का साहस भी एकदम उड़ गया था। इसी प्रकार दोनों कृपाण-हस्त होकर अपनी विद्या दिखाने लगीं। नागदेव को ऐसा लगा कि ये देवियाँ तलवारों की छाँह में खड़ी होकर उन्हें बुला रही हैं। जब कभी दोनों वीणा के तारों से विविध स्वर छेड़तीं तो नागदेव फूले नहीं समाते थे। उनके कण्ठ से निकलनेवाले स्वर लहरियाँ मल्लिका प्रसून से लिपट कर आनेवाली ठंडी हवा सी सुगन्ध फैलाती थीं। वे इस प्रकार मूर्छनाएँ छेड़तीं मानो पारिजात की जड़ हिलाकर चारों ओर

सामान्य सीमा करा के भीतर तक नहीं था। नव दम्पतियों का रसरंग अभी दिन दूना रात चौगुना बढ़ रहा था। ऐसे समय में पुन्नमय्य की मौत आई। विवाह मंडप में ही अरथी उतारी गई। मल्लय्य ने पिता को तो खोया था अब भाई से भी वंचित हो गया। अपने को असहाय समझने लगा। मल्लय्य के लड़कों के लिए पुन्नमय्य पिता से भी बढ़कर प्यारे थे। अब वे रो रहे थे। पुन्नमय्य कौसल्याम्बा का देवर था। पर उनमें भाई बहन का-सा प्रेम था। उस के शोक का पारावार प्रक्षुब्ध हो उठा। कौसल्याम्बा शिशु-सी रो रही थी। छाती पीट पीट कर रो रही थी। अलिमय्य और गुरुमय्य फूलों की शय्या से उठकर बाहर आये। आते ही इन्हें यह सीकर दुःख झेलना पड़ा। उन पर मानों वज्र ही टूट पड़ा। गौरवपूर्ण पद प्रतिष्ठाओं को भोगकर परिणाम आँखों देखा गया। वे सोच रही थी कि गरीब भी मरते हैं पर उनकी मृत्यु सहज होती है। पर पद प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति भी मरते हैं कहाँ? कैसे? और कब? — यह कहना कठिन है। उनको अकाल में ही मौत आ जाती है। यह कैसी विडम्बना है। वे रो रही थी। उन कन्याओं का रोना सुनकर पत्थर भी पिघल जाता। स्वभावतः दुःख संक्रामक होता है एक का दुःख दूसरे का दुःख बढ़ा देता है।

नागदेव अपनी प्रेमसियों के दुःख से दुःखी थे। वे भी आँसू बहा रहे थे।

पुन्नमय्य की चिता सजाई गई। कौसल्याम्बा सहगमन की तैय्यारी करने लगी।

क्या बहिन हमें छोड़कर चले जाओगी?

— कौसल्याम्बा को छाती से लगाकर अक्कमाम्बा शोक कातर हुई।

दीदी! मुझसे कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा कर देना।

कौसल्याम्बा निर्विकार चित्त से विनती कर रही थी।

वहन ! तुम सचमुच मेरी सगी वहिन ही थी । मुझसे कुछ अपराध हुआ हो तो क्षमा करो । भूल जाओ ।

अव्वकव्वे का गला रुंध गया । दुख अपार था ।

अत्ति ! विदा दो ।

इतना कहते कहते कौसल्व्वे का गला बैठ गया । आगे बोल नही सकी ।

मां ! क्या हमे अनाथ छोड दोगी ? हमे ससुराल भेज देने तक कम से कम रह जाओ ।

— अत्तिमव्वे ने रोते रोते प्रार्थना की ।

गुड्डू बुम्हें तो छोडते नही बनता । पर क्या करूँ ?

— कहते कहते कौसलव्वे चटपटाने लगी ।

चाची ! दादा के बाद तुम ही हमारे लिए सवस्व थी । अब हमें अनाथकर जाना चाहती हो !

— कह गुड्डमव्वे रो पडी ।

मल्लप की अन्य सतानो ने भी ऐसे ही दुख शोक मे चाची को विदा किया ।

चिता पर पुन्नमय्य की पार्थिव देह धरी गई ।

मल्लप ने अग्निस्पश करा दिया । सूखी लकडी धाँय धाँय कर जल उठी । कौसल्यव्वे ने चिता की परिक्रमा की और हँसते हँसते उस पर चढकर पति की बगल मे गलबाही देकर सो गई । चिता की लपटो ने थोडे ही समय में सति-पति के दोनो शरीर को स्वाहा कर दिया ।

अत्तिमव्वे और गुड्डमव्वे ने समझा कि नारी-जीवन का अर्थ आँसू है । अभी विवाह की हल्दी सूखी तक नही थी दोनो ललनाओ को स्त्री जीवन के भयकर परिणाम से अवगत होने का मौका आ पडा । दादा के मरण से ही दोनो खिन्न थी । उसे किसी तरह भुलाने का प्रयत्न कर रही थी कि चाचा की मौत हो गई । इससे भी भयकर

था पार्क का मसूमसा। दादा ने दाना-पानी डालकर मन्य का स्वागत किया था। अब तो पाखी को हमने हमसे उसकी चिता पर चढ़ते देखा। इनसे यह सहा नहीं गया और जब पाखी को राख के उद्देश्य से दे आग बढ़ी तब और आगा ने इन दोनों को कसकर पकड़ लिया। ये कुछ नहीं कर सके। एक को धर्म के नाम पर मरते देखा था तो दूसरे को सम्प्रदाय के नाम पर। क्या मौत जिन्दगी से भी प्यारी है!

७

चूड़ियाँ वाली चूड़िया! लाल पीली काली नीली चाँदियाँ।
सुहागिनियों की सुहाग बढ़े — चूड़ियाँ।

यह ध्वनि सुनकर पद्मभूषण ने नौकरानी को भेजकर चूड़ीवाले को बुला लिया।

कहाँ के रहनेवाले हो?

यह प्रश्न सुनते ही चूड़ीवाले मट्टी ने कंधे से अपना बोझ उतारा। लम्बी साँस छोड़ी और वहीं बैठा। चलने में बहुत ज्यादा माया लग रहा था।

क्या बहुत दूर से आए हो?

— पद्मभूषण ने फिर प्रश्न किया।

जी हाँ पेट के वास्ते भागना पड़ता है।

— उस गरीब ने उदास हो कर कहा।

मेरी बहुओं को चूड़ियाँ चाहिए। पहले आराम करो—

कहती हुई पद्मभूषण ने छाछ मँगवा कर पीने दिया।

मट्टी को बड़ा आनन्द हुआ। उसे पीकर असीस दिया

मा ! तुम्हारा घर फूले फले । सदा जश रहे ।

तब तक पद्मव्वे ने अन्ति' कह आवाज दी । नौकरानी के बिछाए गए मखमली दरी पर जगिमव्व आ बैठी । उस के हाथ में किसी तेल की दो चार बूंद लगा कर अच्छी तरह मल लेने की सलाह दी गई । उस सर-सुंदरी का हाथ अपने हाथ में लेकर खूब मल मल कर मुलायम किया । हाथ पर ठीक बैठनेवाली चूड़िया छान कर रख दिया । उसके पसंद की चूड़िया को लेकर चढ़ाने लगा । एक साथ चार चार चूड़ियां चढाता था । और मन बहलाने के लिए इधर उधर की बातें भी खूब कर रहा था । यों ही सहज कोमल हाथ पर ओषधि मिश्रित तेल डाल देने से और भी कोमल बने थे । चूड़िया चढ़ा देने में कोई कष्ट नही हुआ । हाथ भर चूड़िया पहनाई ।

देख ! इन दिनो में कैसी चूड़िया बनती है । घड़ी दो घड़ी भी हाथ पर नही टिकती ।

पद्मव्वे ने कहा ।

लेकिन माँ जी, मेरी चूड़िया ऐसे नही होतो । देख लीजिए ।

— सेट्टी ने उत्तर दिया ।

हाँ, ऐसे ही तो हर कोई कहता है और पैसे ले जाता है ।

— पद्मव्वे ने अनुभव की बात बताई ।

इस बार परीक्षा कर देखिए । पहली बार मै यहा आया हूँ ।

कहाँ से आ रहे हो ?

बहुत दूर से । क्या जमखंडी का नाम सुना है ? उसके पास मुदुवोळलु नामक गांव है — वही मेरा जन्मस्थान है ।

ओहो ! दूर से आए हो ! क्या चूड़ियाँ ढोकर इतनी दूर पैदल आए हो ?

ढोकर तो नही आए । हमारे पास एक बैल है । उस पर चूड़ियां लादी जाती है और हम तीन आदमी उसके पीछे पीछे जाते है ।

— कहते कहते अत्युत्तम चूडियाँ चुनकर चढाने लगा।

सुनो, आज शाम का भोजन हमारे यहाँ करो। अपने दोनो लडको को भी साथ बुला लाओ।

— पद्मव्वे ने न्योत दिया।

आप कितने अच्छे लोग है ! आप ही के यहाँ मेरे दुर्भाग्य ने मुझे झूटा ठहराया। खैर भाग्य का फेर है !

— जिनवल्लभ की ध्वनि मे आत्मग्लानि थी।

गुडुमव्वे चूडियाँ धर चुकी थी।

शाम को आओगे न ? कहते हुए पद्मव्वे ने दाम दिया।

भला आप की आज्ञा टाली जा सकती है ?

कहते कहते जिनवल्लभ जाने लगा। और रुककर बोला —

आपने दुगना दाम दिया है। जो टूट गई टूट गई , उनका दाम मै कैसे लू। धम-कम की बात तो सोचना चाहिए।

आधा दाम लौटा दिया। तब पद्मव्वे बोली —

रख लो। यह चूडी टूटी नही यह दोनो यमज संतान हैं।

क्या सच है ! मैं तो बिलकुल नही पहिचान सका। या आप की भानजी हैं ?

— बात काटकर जिनवल्लभ ने पूछा।

मेरे पुत्र नागदेव की बहुए हैं।

क्या दोनो सौत है ?

जी हा, हम अपने पुत्र के लिए कन्या मागने गई। हम इन में से एक को भी पाकर संतुष्ट रहते। पर भाग्य ने दोनो दिया। बात यह हुई कि दोनो बहिनो का आग्रह था कि हमारे पुत्र से ही विवाह करें। मेरा मन इनका परस्पर प्रेम देखकर पिघला और हमने स्वीकृति दे दी। हमारा बेटा कभी हमारी बात का उल्लंघन नही करता। ये सचमुच सोने की पुतलियां है और हमारी आँखो के तारे। मेरी बहू

नहीं बैठी है बेटी।

इस प्रकार पद्मभद्र ने स्त्री-स्वभावानुसार छोटा सा भाषण ही दे डाला।

माँ जी आप का महाभाग्य है! यशस्वती और सुनंदा सी बहुएँ मिली हैं।

— कह कर वह बूढ़ीवाला चल पड़ा। उसका मन आश्चर्य चकित था।

सूर्यास्त से घड़ी भर पूर्व ही जिनवल्लभ अपने दोनों बेटों के साथ वल्कल के यहाँ आया। वल्कल इनकी प्रतीक्षा कर रहा था। यद्यपि वल्कल महामात्य था अधिकार का मद इनके सिर नहीं चढ़ा था। मानवोचित गुणों से हाथ नहीं धो बैठा था। अपनी इन सुविधियों की बात रहने दीजिए कोई भी अतिथि भोजन के समय आता तो उसके साथ ही भोजन किया करता था। यदि अतिथि धर्म भाई भी होता तो उसके साथ पंक्ति में खाए बिना नहीं छोड़ता था। पद्मश्री पति के योग्य पत्नी थी। पति की मानवीयता का पोषण बड़े यत्न पूर्वक करती आई थी और अपने घर को सुसंस्कृति का केन्द्र बनाने में कोई कसर आने नहीं देती। बहुएँ जो आईं वे तो रत्नवृष्टि करानेवाले भाग्य की पोटलियाँ थीं। रूप गुण की पुतलियाँ थीं।

आओ जिनवल्लभ!

— वल्कल ने चिरपरिचित से उनका स्वागत किया।

तीनों ने हाथ मुँह धोया। जैसे ही हाथ मुँह धोकर स्नानागार से बाहर आए तो देखा कि वल्कल स्वयं थालियाँ लिए सेवा में उपस्थित है। महामात्य की इस सहृदयता ने जिनवल्लभ पर गंभीर प्रभाव डाला।

क्या यह दोनों तुम्हारे पुत्र हैं? — वल्कल ने प्रश्न किया।

जी हाँ यह जो बड़ा लड़का है धन्य है और यह छोटा रज।

ये ही दो संतानें हैं या और भी हैं?

जी ! इन दोनो के बीच का एक घर पर ही रह गया है।

— जिनवल्लभ ने कहा ।

राचय्य आजानुबाहु और गठीला बदन का था । रत्न केवल तेरह वर्ष का तरुण था। चेहरा बडा आकर्षक था। उस पर ध्रुवतारा से दो नेत्र चमक रहे थे। ये तीनो गरीब अवश्य थे पर दीनता उन्हें छू तक नही गई थी। इस कारण से स्वाभिमान उन में कूट-कूटकर भरा था।

दल्लप तीनो को घर के अदर ले गया। एक साथ भोजन करने बैठे। सोने की थालियो में खाना परोसा गया था। ज्वार के सफेद फुलके और कई प्रकार की साग-सब्जियां परोसी गई । अत्तिमब्बे ने जब ताजा घी परोसा तब भोजन प्रारभ करने की प्रार्थना की गई। सब भोजन करने लगे। ऐसा राजभोज पाकर रत्न अत्यत प्रसन्न हुआ था। उसके आनद को कौन कहे ? फुलको के बाद बढिया भात और रस परोसे गए । और उस पर दो चमच घी दिया गया। सब चुपचाप खा रहे थे।

रत्न को यह रस तीता लगा। एक बार रत्न के मूंह से सहसा ची ची शब्द निकला। तुरत अत्तिमब्बे आई और वात्सल्य भरे स्वर में पूछा —

कहो भैय्या क्या चाहिए ?

जीजी ! रस कुछ तेज लगता है। मुझे और कुछ घी दे दो।

निस्सकोच भाव से रत्न ने घी माँगा।

जिनवल्लभ को यह बुरा लगा। अपमानित सा आहत होकर रत्न की ओर कुछ क्रोध पूण भाव से घूरने लगा। दल्लप ने उसे ताडा। अत्तिमब्बे तब तक घी लिए आई।

दल्लप ने उससे कहा—

देखो बेटी ! बडो के साथ बच्चो को नही परोसना चाहिए। बच्चे निरातक भोजन नही कर पाते। इस बच्चे को साथ ले जाओ

और जल्दी ही खिलाओ।

मनिमञ्जरी अपने साथ रत्न का हाथ पकड़कर अन्दर ले गई। कामधेनु के पीछे चलनेवाले बछड़े के समान यह रत्न चला। रसोई घर में उसे बिठाया। वहीं उसका चौका लगा। वह देखता क्या है चारों ओर तरह तरह की मिठाइयां सजाकर रखी गई हैं। एक बार चारों ओर देखा। इतना प्रसन्न हुआ मानो कल्पवृक्ष की छाया में बैठा हो। मनिमञ्जरी के हृदय में सहज ही वात्सल्य उमड़ रहा था। वह पास ही बैठकर अपने हाथ से मुंह पर पड़े बाल संवारती हुई खिलाने लगी। बीच में एक जिज्ञासा की —

भैया तुम्हारा नाम क्या है?

मेरा नाम रत्न है। पर प्यार से मां रतन या रत्नी कहती है।

— बड़े ठाठ से जवाब दिया।

अच्छा! रत्न, रत्न ही बहुत सुन्दर नाम है।

— मनिमञ्जरी ने कहा था। और प्यार से बोली — भैया शर्माना नहीं। जो चाहो खाना। लड्डू पूरी पिरोठी पकौड़ा आदि यहां जो कुछ है उसमें जो चाहो निस्संकोच खाना। भैया अब क्या दूं?

रत्न को कुछ नहीं सूझ रहा था। अपने घर में अबतक ज्वार की रोटी के सिवाय और कुछ भी खाना नहीं देखा था। उसमें केवल कढ़ी की पकौड़ी बनती थी सो भी कभी कभी। दूध दही आदि का नाम सुना अवश्य था पर खाया नहीं था। आज अपने सामने अपरिमित भांति के पकवानों का ढेर देखा। क्या खाया जाय? पता भी नहीं था बेचारा क्या ले क्या नहीं ले! समझ लीजिए उस समय रत्न की दशा ऐसी ही थी जैसे कोई रत्नों की राशि के बीच गरीब पहुंच गया हो और उसे जो चाहे ले जाने की अनुमति मिली हो।

क्यों चुप हुए ? माग लो जो चाहे।

अत्तिमव्वे ने प्यार से फिर फुसलाया।

तुम जो अच्छा समझो खिलाओ बहन।

-- रत्न ने सहज ही उत्तर दिया।

अत्तिमव्वे उसकी मनोभावना से अवगत हुई। गुडुमव्वे से बोली-

देखो बहन, सब पक्वान्नो को थोडा थोडा चखा दो, बाद को जो भी पसद करे खिला देना।

दूसरे कमरे से एक थाली भर मिठाइयाँ आई। इनकी ओर देखते ही बनता था। क्या ही बढिया सजावट थी। रत्न के मुग्ध चेहरे पर निष्कलक आभा चमक रही थी जिसे देखकर गुडुमव्वे प्रभावित हो उठी।

जीजी! यह कितना सुदर है देखो।

कहती हुई बैठ गई और प्यार से एक एक का नाम और स्वाद बता बताकर खिलाने लगी। इन दोनो स्त्रियो को अपनी औरस सतान को खिलाने का-सा आनद मिल रहा था। उनका अतृप्त मातृत्व आज कृतकृत्य हो रहा था। इधर रत्न भी खूब खाकर अघाया। अपनी जिंदगी मे इतना घी कभी नही खाया था। इतना दूध भी नही पिया था।

रत्न तुम क्या पढ रहे हो ?

अत्तिमव्वे ने सहज ही प्रश्न किया। यह बात कानो पर पडी कि नही रत्न की आखो से आसू उमड पडे। दो-एक बूद गालो पर भी पडी जिन्हे अत्तिमव्वे ने देखा। वह चौकी। जो कल्पवृक्ष पर चढे हुए से आनन्द मग्न था। वह एकाएक वहा से फिसलकर गिरे हुए सा रोने लगा। [illegible] ? क्या बात है ? क्या हो रहा है ? अत्तिमव्वे [illegible] उठी। [illegible] आवाज [illegible] उसके [illegible] था। --

तभी ही अपनी बीबी के मुँह से ... गुरुमाता के मुँह से निकला —

बीबी! तुम इसे रत्न जैसा ... । मैं तुम्हारे साथ चली। चाहे ... कुछ कह दें।

गुरु मा ... । मैं ... जिन्हें ... यदि हम ... को नहीं छोड़ दें।

अपना मन का ... दिया।

तब तो हम ... की ... । ... पढ़ने की ... और ... काम में लगा ... तो बड़ा अन्याय होगा।

गुरुवर ... रहा।

रत्नकी खिन्नता दूर करने के लिए अतिमञ्जु ने ... आश्वासन दिया और कहा —

रत्न चिंता न करो। तुम हमारे यहीं रहकर आओ। हम पढ़ाई का प्रबंध करेंगे। ... के बारे मत सोचो।

रत्न की आँखों से आँसू का फव्वारा ही फूट निकला।

रत्न भोजन समाप्त कर चुका था। जैसे माँ बच्चों ... हाथ फेरती है उसी प्रकार अतिमञ्जु ने ... उसका ... पुचकारा। गुरुमाता ने अपने आँचल से पोंछा। इन भावनाओं के आगे रत्न विवश बन गया। उसने किसी बात का विरोध नहीं किया। वह जिज्ञासु के समान सब कुछ स्वीकार करता जा रहा था।

इधर जितशत्रु को ... भर स्वप्न में रहने का-सा अनुभव हो रहा था। एक तो राजकुमार की पंक्ति में भोजन हुआ। बाद को एक साथ ... ताम्बूल-चर्वण करने गये। बैठने के लिए बढ़िया मुलायम बेंत का कलात्मक आसन था।

... राजकुमार की ... हुई है

... ने रामायण आरम्भ किया।

जी, हुई है, अब छ सतानो के पिता भी है।

खिन्नता उसकी ध्वनि में थी।

बहुत अच्छा! हर्ष की बात है कि कुल-श्री बढ रही है और बढते जाय! दूसरे लडके का?

जी हाँ। पिछले ग्रीष्म मे उसका विवाह किया।

छोटा अभी पढ रहा होगा?

जी नही! कहाँ हम और कहाँ पढाई! गरीब हैं। सोचा कि अभी से अपने घधे का परिचय करा दूं और इसीलिए साथ लिए फिरता हूँ।

ओहो! यह तो ठीक नही। अभी बच्चा है। सर्दी-गर्मी में यो घुमाना ठीक नही है। — दल्लप ने करुणा मे कहा। कुछ देर बाद फिर बोले—जिनवल्लभ जी! आप हमारे अतिथि है। हमारे घर का सप्रदाय है कि पहले अतिथि को भोजनादि से सत्कृत करेंगे बाद को कुशल क्षेम पूछकर परिचय बढा लेंगे। मेरे दादा और परदादाओ के जमाने से यह बात चली आ रही है। अतिथि हमारे लिए देवतुल्य होते है। आप तो श्रावक है। योग्य सेवा करने का सु-अवसर दीजिए। निस्सकोच कहिए, मैं आप की क्या सेवा करूँ?

दल्लप ने कहा।

जी! अब कुछ नही चाहिए। आप के सत्कार और सौलभ्य से मैं सतुष्ट हूँ। अब लोभ न बढाइए। यह अनुचित होगा।

जिनवल्लभ ने उत्तर दिया।

आप अतिथि है। यो ही भूले भटके हमारे यहाँ पधारे हैं। लोभ बढाने की बात नही, दैव योग से कुछ ले देने की स्थिति में हूं। जान लू तो जो कुछ करते बने करूँ।

दल्लप ने आग्रह पूर्वक प्रार्थना की।

आप जैसे उदारियो को हमने देखा ही नही है। हाथ भी तो

की भाव या इस भाव म पधारे। आप महामात्य है। आपने हमारे जैसे सामान्य व्यक्ति को पंगत में बिठाकर भोजन किया और कृतार्थ प्रकट किया— इससे बढ़कर और क्या चाहिए। मोल की थाली में महामात्य के साथ भोजन करना ही सबसे बड़ा सौभाग्य है।

जिनदत्त हाथ जोड़कर बोल रहा था।

वह तो हो चुका। अब आगे की कहिए। हममें और आप में क्या अन्तर है। जो कुछ है वह केवल भाग्य का फेर है। वास्तव में देखा जाय तो क्या हम एक ही जाति के नहीं? जीवमात्र पर दया दिखाने का आदेश महावीर प्रभु ने दिया है। आज मैं धीवरत्व अवश्य हूँ! पर इस की बात कौन जाने? अब भी महावीर प्रभु के आदेश को ध्यान में रखकर दो-एक व्यक्तियों की सहायता नहीं की तो क्या बड़ा अपचार नहीं होगा? और एक बात मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। जो उपकार की बात कह रहा था वह किसी उपकार को कृतकृत्य करने के लिए नहीं इस में मेरा ही स्वार्थ छिपा है। अपने श्रेय के लिए करना चाहता हूँ। आप सचमुच अपने इच्छानुसार कुछ मांगकर मुझसे ले तो मैं अपना अहोभाग्य समझूँगा।

महामात्य की बात हृदय की सच्चाई को व्यक्त कर रही थी। जिनदत्त इस नम्रता-सरलता के सामने नत-मस्तक हो गया। क्या मांगे? कितना मांगे? कुछ नहीं सूझ रहा था। सोचा कि रत्न के भविष्य का कुछ ठिकाना बन जाय तो पर्याप्त है। ऐसा विचार कर बोला —

प्रभो! मेरे दोनों बच्चे कमाऊ हैं। अपना पेट भर किसी प्रकार कमाते हैं। सबसे छोटा जो है वह बड़े विलक्षण व्यक्ति है। उसे आप की गोद में रख दूंगा। आप जो चाहे कीजिए। उसका मार्गदर्शन आप पर है। मैं यह भी चाहता हूँ आप उससे कुछ काम लें और हम दोनों की आवश्यकता पूरा करने के लिए भी कुछ देते रहें दीजिए।

इस प्रकार जिनवल्लभ ने एक पत्थर से दो फल गिराने का यत्न किया।

किसको छोडने की बात कहते हैं? उस छोटे लडके को जो हमारे साथ खाने बैठा था?

जी हां!

छि! वह क्या काम कर सकेगा? यदि ऐसे बालकों को नौकर रख ले तो परमात्मा की आंखों मे हम अपराधी नहीं होगें? आप चाहे तो इस बडे लडके को ही यहां छोड जाइए। सेना में इस के योग्य पद दिला देंगे।

प्रभो, अपका कहना भी ठीक है। पर हम बडे गरीब हैं। यह नौकरी करेगा तो क्या पायेगा? अधिक से अधिक अपना पेट भर लेगा अथवा बडे बडे नगरो मे रहने के कारण संभव है कि अपने घर गृहस्थी को किसी भांति चला पाएगा। पर हम वृद्धो का क्या कर सकेगा?

ठीक है! आप का कहना यथार्थ है। पर इस मुन्नू को कैसे काम पर रख लें?

—दल्लप ने अपनी चिन्ता स्पष्ट की।

आप किसी भी काम मे लगाइए। चिंता क्यो करते हैं। जब वह कुछ सीख लेगा और जब आप समझेंगे कि यह कुछ योग्य बना है तब आप जो पसंद हो देना प्रारंभ कीजिए। तब तक हम कुछ नहीं मांगते।

अच्छी बात है। आप कम से कम इतना तो कह दें कि आप उसे क्या बनाना चाहते हैं?

हम क्या चाहेंगे! हम गरीबों को चाह करने के लिए कुछ फुरसत मिले तब न! हमारी चाह रोटी कपडे तक सीमीत रहती है इन दोनों के अतिरिक्त हमें और कुछ मङना ही नहीं।

— इन शब्दों में गरीबी की राम कहानी सुना दी।

तब साथियों क्या हम उसे रसोई घर में स्त्रियों के काम में हाथ बटाने के लगा दें। आप को कोई आपत्ति तो नहीं?

जिनवल्लभ के चेहरे पर का भाव पढ़ने की इच्छा से उस पर अपनी नजर दौड़ाई।

जी! आप उसे घर रख लीजिए और चाहे जो काम दीजिए। इस्लामपुर के महाराजा के दरबार में दीवान बनने की अपेक्षा दयालु के घर का दरबान बनना श्रेयस्कर है। कम से कम मैं तो यही समझता हूं।

— जिनवल्लभ ने अपना विचार सुनाया।

तब तो ठीक है। आज से यह हमारा बना। घर में पका नाश करके उसका वेतन ठहराएँगे। आप इस ओर फिर कब आएँगे?

दस्सम ने प्रश्न किया।

इधर उधर फेरी लगा कर अपने घर लौट जाने का विचार है। घर जाने के पहले यहीं आकर आप के दर्शन करूँगा।

जिनवल्लभ ने अपना कार्यक्रम सुनाया।

तो कल आप हमारे यहां भोजन करके जा सकते हैं।

— इतना कहकर दस्सम उठे।

जिनवल्लभ ने रम से अपना विचार कहा। रम का चेहरा खिल उठा। सोचा कि अपनी सारी समस्याएँ एक दम मिट गईं। इस कारण से वह कुछ नहीं समझ सका। पर इधर दस्सम ने जैसे ही इस बात का जिक्र किया तो पद्म श्री ने अपना विरोध व्यक्त करते हुए कहा—

क्या उस तरह से हम रसोई का काम दें? ये तो हमारे परिचित हैं हमें कुछ सोच समझ कर तो काम देना पड़ेगा न? कौन जाने किसके मन में क्या छिपा रहता है? सम्भव है कि यहीं आगे चलकर इस घर में अपने पांव महारूप बन सकता है। जरा सोच कर देखिए किसी काल पुरुष में पर नहीं मिलते?

ठीक कहती हो। मुझे भी यह बात सूझी। यह न समझना कि मैंने इतना भी नही सोचा। पर एक बात है। इस के पिता बडे कष्ट में है। यदि हम नही रख ले तो इसे और किसी के यहा नौकरी पर लगा देगा। उसको पैसा चाहिए। इस कारण से मैंने सोचा कि इस लडके से आखिर क्या काम करते बनेगा? फिर भी रसोई घर के काम का बहाना बनाकर रख लिया तो उसके पिता के अभिमान को ठेस नही लगेगी। चाहे तो तुम अपनी बहुओ से कहकर इसको पढवाओ लिखवाओ तब पता लगेगा यह सच्चा रत्न है या कोरा काच का टुकडा है। योग्य हो तो जो चाहे बने। हम उसके साथ रहकर दिला देंगे। कौन कहता है कि यह अत तक रसोइया ही बन कर पडा रहे?

दूल्हन की बात सुनकर पद्मब्बे ने अपनी स्वीकृति दी। रत्न को रख लेने की बात तै हो गई।

इधर नागदेव ने सबेरे का नाश्ता किया। अतपुर मे उसे पान लगाकर खिलाती हुई अत्तिमब्बे ने कहा—

आप से एक निवेदन करूँ? आप से मैं ना नही सुनना चाहती। आशा है कि आप अवश्य मेरी बात मानेगे।

इन बातो को अत्तिमब्बे ने इस ढग से कहा कि सुननेवाले का मन सहसा स्वीकृति दे बैठे। और एक बात थी। आज तक कभी इन दोनो बहिनो ने कुछ नही मागा था। क्या मागे? गहना कपडा तो ढेर का ढेर पडा था। छोटी-मोटी बातें पद्मब्बे से कहने पर पूरा हो जाती थी। नागदेव को कभी यह सौभाग्य या सु-अवसर प्राप्त नही था कि प्रेयसियो की माँग पूरी कर सतुष्ट हो। अब जैसे ही यह प्रार्थना सुनी वह खिल उठा उसे आश्चर्य भी हुआ और अपार हर्ष भी।

अत्ति! यह क्या मेरे सामने यो, क्यो गिड गिडाती हो? तुम्हारी इच्छा जान कर अब तक मुझे ही उसे पूरा कर देना चाहिए था। पर क्या करूँ, मैं योद्धा हूँ, रसिक नही हूँ। कहो तो

रमको मुम्हे क्या चाहिए ?

— प्यार से नागदेव ने उसका हाथ अपने हाथो मे लिए दबाया।

स्वामी ! आप इतना क्यो मन म ऊन मानते है ? जब से मै और गुरु इस घर मे आई है तब से हमे आराम ही आराम है। हम समझती है कि हम ससुराल म नही पीहर की छाया म है ! आप की मां हमारी भी मां है मां से बढकर प्यार करती है। आप के पिताजी तो हमारे स्वर्गीय दादा को मकान में समर्थ हुए है इतना लाड प्यार करते है। रही आप की रसिकता ! आप रसिक नही होते तो क्या दो दो स्त्रियो को सदा प्रसन्न रख कर सभाल सकते थे ?

प्रिये ! तुम और गुरु दोनो साध्वी की समान हो। और तुम्हारी यह भक्ति तुम्हारा सबक है। क्योकि देव भक्त कही भी होवे मरने को नरक की छाया म ही मानते है। अतएव यदि तुम यहाँ आराम से हो तो इसका श्रेय तुम दोनो के सात्विक स्वभाव को मिलना चाहिए न कि मुझे। यदि मुझसे कभी भूल चूक हो जाय तो तुम दोनो से कह देता हू कि दो ही मत सह लेना। मुझे बताकर सही रास्ते प से चलना। मेरा भार तुम दोनो पर है। दुनिया जानती है कि मै रणवीर हू और क्रूर हू फिर भी पूर्व जन्म के पुण्य का फल तुम्हारे रूप में मिला है। यही मेरी धारणा है। तुम मेरे भाग्य की कल्पलता हो।

—ऐसा कहते हुए मल्लिकाके के गाल प मीठी चुटकी ली।

बात करने में आप बडे कुशल है। इससे सिद्ध होता है कि आप केवल रणवट ही नही वाक्पटु भी है।

— कहकर मल्लिकाये हँस पडी।

अब तो असली बात पर आओ प्रिये।

— कह नागदेव भी हँस पडे।

हमारे यहाँ एक नया लडका आया है ........

हाँ हाँ आया है। वही जो आज स्नानागार मे तौलिया देने आया था। — नागदेव ने बात काट कर कहा।

जी हाँ वही।

अच्छा! अब कहो क्या बात है?

जानते होगे कि इसके पिता ने उसको हमारे यहाँ नौकरी पर छोड रखा है। क्या वह रसोई का काम सीखे?

यह बात है! तो सीखने दो। तुम भी सिखा दो। ऐसी बातो में मैं कभी दखल नही देता। घर के अदर की बातो को मैं क्या जानू? तुम लोग देख लो।

अपनी बात कहने देगे कि नही?

कहो कौन मना करता है। तुम चुप हो गई तब मैं बोला। क्या बात कुछ टेटी है? खैर, जो भी कहो तुम्हारी बात अवश्य मानी जाएगी।

नागदेव ने आश्वासन दिया।

बात यह है कि लडका पढना चाहता है। वे गरीब हैं, पढा नही सके। इसी लिए उसे हमारे यहा काम पर लगा दिया है। लडका तेज है। प्राय पढाई मे भी तेज निकलेगा। आप चाहें तो

क्या मै उसे पढाते जाऊँ? बस तुम्हारी बात मैं मानूं तो उसकी भलाई नही होगी। याद रहे यदि मैं कुछ पढाऊँ और वह याद नही करें तो मैं अवश्य आपे से बाहर हो जाऊँगा और कह एक जमा दू तो चारो खाने चित्त हो जाएगा। अस्तु, तुम अपने पति को जितना कोमल चित्त या मृदुल गात्र समझती हो वैसा वह और मे नही माना जाता। मेरे सैनिक मुझे देखकर थर थर काँपते हैं। महाराजा तक मुझसे बोलते समय सजग रहते है। मेरे साथ मनचाही

रमभा तुम्हें क्या चाहिए ?

प्यार के आवेश में उसका हाथ अपने हाथों में लिए दबाया।

स्वामी ! आप ऐसा क्यों मन में उन मानते हैं ? जब से मैं और सुत इस घर में आई हैं तब से हमें आराम ही आराम है। हम समझती हैं कि हम ससुराल में नहीं स्वर्ग की छाया में हैं। आप की माँ हमारी भी माँ है माँ से बढ़कर प्यार करती हैं। आप के पिताजी तो हमारे स्वर्गीय दादा को भगवान में समझे हुए हैं इतना अधिक प्यार करते हैं। यही आप की रसिकता ! आप रसिक नहीं होते तो क्या दो दो स्त्रियों को सदा प्रसन्न रख कर संभाल सकते थे ?

प्रिये ! तुम और सुत दोनों साध्वी की समान हो। और तुम्हारी पति भक्ति तुम्हारा संबल है। क्योंकि देव भक्त यहाँ भी होते स्वर्ग को स्वर्ग की छाया में ही मानते हैं। अतएव यदि तुम यहाँ आराम में हो तो इसका श्रेय तुम दोनों के सात्विक स्वभाव को मिलना चाहिए न कि मुझे। यदि मुझसे कभी भूल चूक हो जाय तो तुम दोनों से कह देता हूँ कि वो ही मत सह लेना। मुझे बताकर सही रास्ते पर ले चलना। यह भार तुम दोनों पर है। दुनिया जानती है कि मैं रसवीर हूँ और क्रूर हूँ फिर भी पूर्व जन्म के पुण्य का फल तुम्हारे रूप में मिला है। यही मेरी धारणा है। तब मेरे भाग्य की सफलता हो।

—ऐसा कहते हुए मणिरुद्ध के गाल पर मीठी चुटकी ली।

बात भला देर में आप बड़े कुशल हैं। इससे सिद्ध होता है कि आप केवल लम्पट ही नहीं वाक्पटु भी हैं।

— कहकर मतिमती हँस पड़ी

तब तो असली बात पर आओ प्रिये।

— कह नागदेव भी हस पडे।

हमारे यहाँ एक नया लडका आया है ——

हाँ हाँ आया है। वही जो आज स्नानागार मे तौलिया देने आया था। — नागदेव ने बात काट कर कहा।

जी हाँ वही।

अच्छा! अब कहो क्या बात है?

जानते होगे कि इसके पिता ने उसको हमारे यहाँ नौकरी पर छोड रखा है। क्या वह रसोई का काम सीखे?

यह बात है! तो सीखने दो। तुम भी सिखा दो। ऐसी बातो मे मैं कभी दखल नही देता। घर के अदर की बातो का मैं क्या जानूं? तुम लोग देख लो।

अपनी बात कहने देग कि नही?

कहो कौन मना करता है। तुम चुप हो गई तब मैं बोला। क्या बात कुछ टेढी है? खैर, जो भी कहो तुम्हारी बात अवश्य मानी जाएगी।

नागदेव ने आश्वासन दिया।

बात यह है कि लडका पढना चाहता है। वे गरीब हैं, पढा नही सके। इसी लिए उसे हमारे यहा काम पर लगा दिया है। लडका तेज है। प्राय पढाई मे भी तेज निकलेगा। आप चाहें तो

क्या मैं उसे पढाते जाऊँ? बस तुम्हारी बात मैं मानूं तो उसकी भलाई नहीं होगी। याद रहे यदि मैं कुछ पढाऊँ और वह याद नही करे तो मैं अवश्य आपे से बाहर हो जाऊँगा और कह एक जमा द तो चारो खाने चित हो जाएगा। अत्ति, तुम अपने पति को जितना कोमल चित्त या मृदुल गात्र समझती हो वैसा वह और मे नही माना जाता। मेरे सैनिक मुझ देखकर थर थर काँपते हैं महाराजा तक मुझसे बोलते समय सजग रहते है। मेरे साथ मनचाहे

कह कर हम किसी गुरुकुल मे छोड दे तो अपनी हैसियत देख कर दान देना पडेगा। इस प्रकार उस पढान मे खूब धन लगेगा। रसोई का नाम तो पाकशास्त्र है। भीम का नाम क्या इस शास्त्र मे पारगत होने कारण अमर नही बना है? आज तक उसका स्मरण करते है तो किस लिए करते है बताओ? वैसा ही आप का रतन पाकशास्त्र का रत्न बन जाय और कर्नाटक भर म सुनाम कर दे।

— नागदेव ने नाटकीय ढग से कहा।

अग्निमब्बे के बातो पर आग बरसाई जा रही पडी। वह दान करने की बात दुहराते हुए बोली

तो अच्छा ही हुआ। यदि इन लडको के कारण गुरुकुलो को दान देने का मार्ग खुला तो हमारा अहोभाग्य है। जरा भी चिन्ता मत कीजिए। मै देती हूँ। मगर जी म कह कर उस गुरुकुल पहुँचा देने का भार आप का है।

— अग्निमब्बे न निर्णायक स्वर म कह दिया।

पगली हो गई हो! क्या ऐरे-गैरे लडको को पढवाने लिखवाने जाना क्या उचित ह? क्या वह हमारा कोई सगा सम्बन्धी ह? उस दिन पानी भरनेवाले उस लडके को खूब धन देकर पढाने का प्रबन्ध किया। यद्यपि अपना ही धन दे रही हो। पर सोचो उस लडके को एक बार कुछ दे दिलाकर विदा किया था। पर अब की बात इतनी सस्ती नही है, समझी? क्योकि तुम तो पूरी जिम्मेदारी सर पर लेना चाहती हो! तिस पर पिताजी को राजी कराने की सलाह देती हो। पिताजी के सामने यह प्रस्ताव कैसे रखू। वे क्या समझेगे?

— नागदेव ने सदेहास्पद उत्तर दिया।

रतन जैसे छोटे छोटे लडको को काम पर लगा द और पढने नही दे तो क्या उनका जीवन नष्ट नही होगा? अपनी ही बात सोच कर देखिए। बचपन से लेकर आप की सुशिक्षा का प्रबध नही होता

तो आप क्या आज सेनापति पद पर नियुक्त रहते ?

और क्या कष्ट उठाकर सरस्वती की साधना की होती और अक्षर न सीखे होते तो सेनापति बन जाने पर भी तुम तो रसिका थोड़े ही मुझे वरण कर लेती !

— नागदेव अपनी बात पर आप हँस पड़ा।

औरों के संबंध में भी ऐसा ही मानिए। हम सुविधा उपलब्ध कर दें। सिर पर अपना अपना भाग्य साथ देगा ही।

— अत्तिमब्बे बोली।

अत्ति ! अब उस लड़के को इतना चाहती हो तो दत्तक कर लो।

आप के सामने भर की देरी है। हम तैयार हैं।

— अत्तिमब्बे बोल उठी।

हमारी कोई संतान नहीं होगी ?

— खिन्न होकर नागदेव ने जिज्ञासा की।

मैंने इस संबंध में तो कुछ नहीं कहा।

— अत्तिमब्बे ने सफाई दी।

क्या दत्तक लेने की सलाह मान ली ?

— नागदेव ने फिर प्रश्न किया।

देखिए, होनहार लड़कों को देखकर किसका मन नहीं ललचता ? वे समाज और राष्ट्र के अनर्घ्य निधि होते हैं। वे आगे चलकर क्या हों, ये उसे अभी कौन कह सकता है ?

— अत्तिमब्बे ने दृढ़ता से कहा।

अत्ति ! मैं तुम्हारी बात टालना नहीं चाहता। मैं एक बार जाँच कर देखता हूँ। अगर यह खरा निकला तो तब तक उसका ध्यान दूँगा कि जब तक वह कविचक्रवर्ती न बन जाए।

नागदेव की बात से वह फूल उठी।

रन्न घर पर कखहरा सीख चुका था। अक्षर सुदर थे। जहाँ कही से माँग कर ताडपत्रो पर ग्रथो का नकल भी किया करता था। उसके अक्षर स्फुट और मोती से लगते थे। प्रतिलिपि बनाते समय उन प्रतियो को पढने और समझने का भी प्रयत्न किया करता था। पप और पोन्न की कतियो की भी प्रतिलिपि बना चुका था और कभी कभी उन्हे पढते हुए स्वय कल्पना जगत मे तन्मय हो जाता था। उस की अभिरुचि पढने लिखने की थी। पर परिस्थिति इस के विपरीत थी। उन दिनो मे पढेलिखे लोग बहुत कम थे। जो थे वे राजा महाराजाओ के आश्रय मे रहते थे। नगरो मे निवास करते थे। रन्न की विद्या-दाह बुझा देनेवाले विद्वान मुधोल जैसे ग्राम में नही थे। रन्न के पिता अपने दारिद्र्य जनित सैकडो झझटो में इस ओर ध्यान ही नही दे सकता था।

नागदेव ने रन्न की परीक्षा ली। रन्न ने अपने हाथ से लिखे गए आदिपुराण, विक्रमार्जुन विजय, भुवनैक रामाभ्युदय, और शातिपुराण को दिखाया तो देखकर नागदेव दग रह गया। सुदर लिखावट थी। मोति की लडी सी सुदर पवितयाँ थी। और उनको उससे पढवाकर देखा। सिहगर्जन सा स्पुट कठ ध्वनि से एक दम प्रभावित हुआ। नागदेव यद्यपि रणपटु था। पर उस में सहृदयता की कमी नही थी। तलवार, भाले, तीर, कमान और गदाओ पर जैसा अधिकार रखता था वैसे ही काव्य सौष्टव समझने का भी अधिकार प्राप्त कर चुका था। कही वीर रस प्रधान काव्य मिलता तो पूरा पढवा लेने या खुद पढ डालने तक उसे कल नही पडती थी। पप और पोन्न इसके तकिए के नीचे सदा रहते थे। युद्ध के मैदान में भी अपने साथ कन्नड ग्रथो को रखा करता था। मौका पाते ही सैनिको के साथ बैठकर उन वीरगाथाओ को पढकर सुना देता था और उनकी व्याख्या भी करता था। ऐसे नागदेव ने रन्न की परीक्षा ली। रन्न के

को मिला हा।

दत्लप जी इस लेडके को बकापुर भेज दीजिए। वही अजित सेनाचार्य के चरणो में रह कर पढ लें। लडका होनहार है।

पप ने सलाह दी।

पपदेव ! यह अत्तिमब्बे की आँखो का तारा है। वह प्राणो से भी अधिक इससे प्यार करती है। इसके पिता हमारे यहाँ इसको रसोई घर मे चाकर छोड गया था। पर जैसे ही अत्तिमव्वे की कृपा दृष्टि उस पर पडी यह कवि रत्न बनने योग्य हुआ। यहाँ सब कुछ नाटकीय ढग से उसके अनुकूल बन रहा है। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे उसकी पढाई का खच अपनी ओर से देना चाहती हैं। इस पर नागदेव भी इस लडके का पक्ष ले बैठा है। मेरी पत्नी भी इसका पक्ष लिए बोला करती है। आशा थी कि कम से कम आप हमारे पक्ष में होगे ! पर बात उलटी निकली।

ऐसा कहते समय दल्लप के मुँह पर हँसी खिल उठी।

दल्लप, आप के घर मे सब के सब सुकृती हैं।

पपदेव के नेत्र आनदाश्र से सजल हो गए

जी हा, पर एक अपवाद भी है। सो मैं हूँ।

– दत्लप ने हँसते हँसते कहा।

आप ! आप तो इस कल्पवृक्ष की जड है। वह सदा गुप्त रहती है। पर उसी के बल पर फल-फूल-पत्ता आदि खिलते रहेंगे। तभी तो लोग इस पेड की शोभा देखकर फूले नही समाते !

पपदेव ने दत्लप को वास्तविक प्रशसा की।

पपदेव, क्या यह समझूं कि यह रत्न आगे चलकर आप का उत्तराधिकारी होगा !

दल्लप मुस्कुराए।

जी, हो सकता है। एसा ही हो ! यदि कोई भी योग्य व्यक्ति

इस सिंहासन पर विराजमान रहता था तो मैं आप उस सिंहासन पर आज भर देखना चाहता हूं। अब यह खाली पड़ा है। जीवन भर कवि चक्रवर्ती के लिए मैं इसकी धूल झाड़ पोंछ कर सजाता रहता हूं। पद्म के बाद पोता, पोता के बाद रत्न — इस प्रकार भिन्न भिन्न बना रहे! सरस्वती का सिंहासन कभी खाली न रहे। — यही मेरी प्रार्थना है।

पद्मदेव के शीश पर विषाद वाली लिखावट थी। मन मरा सा बाहर न मन रहा था।

जब वह कमरे से बाहर जिनवल्लभ दरबार के यहां लौट आया। भोजनादि से निवृत्त होकर जाजम बिछा कर और पलंग तकिए के सहारे बैठे थे। जिनवल्लभ तथा राघव को बुलाया और उनके बारे में परिचय दिया।

पद्मदेव! ये हैं जिनवल्लभ उस ... के पिता और यह राघव है उस के बड़े भाई।

फिर दस्तक से पद्मदेव का परिचय कराते हुए कहा —
*जिनवल्लभ जी आप हमारे के सारोवत पद्मदेव हैं महाकवि!*

इतना सुनते ही जिनवल्लभ का सिर उसके सामने झुक गया। इधर राघव ने धमधुर कर से माथिपाक पर विश्रामासन विषय शास्त्रों से एक एक पद बनाकर करपात्रता था।

जिनवल्लभ जी! यह राघव बड़ा सहृदय है।
— पद्मदेव ने मुस्कराते हुए कहा।

हम सहृदय हैं और सब कुछ है। पर हमारी सहृदयता दरिद्रता के आवरण में छिपी पड़ी है।

जिनवल्लभ की बातों में विनम्रता स्पष्ट रही थी।

जिनवल्लभ जी आप का रत्न हमारे यहां रहेगा। पर एक शर्त है। बताइए कि कितने दिन आप हमारे यहां से जोखम के लिए तय्यार हैं। पहले यह बात तय हो जाय तो बहू —

दल्लप ने प्रश्न किया

आप चाहे जितने दिन अपने यहाँ रख लीजिए।

— जिनवल्लभ ने उत्तर दिया।

खूब सोचिए, बीच मे कभी आकर यह तो नही कहेंगे कि लडके की माँ का आग्रह है कि बुलवा लें। इत्यादि।

प्रभो, मैं एक बार कहता हूँ तो सोच समझकर ही कहे देता हूँ। यह समझिए कि यह आप का लडका है। मेरा नही। आप जो चाहे कीजिए।

— दृढता पूर्वक जिनवल्लभ ने कहा।

राजय्य जी, तुम्हारा अभिप्राय क्या है?

।। आप के यहाँ रन्न को रख छोडने मे मेरी कोई आपत्ति नही। पर क्या वह कोरा रसोइया बन कर रहेगा?

राजय्य खिन्न होकर बोला।

बेटा! दल्लप जी कल्पवृक्ष हैं समझे। आप के पास हमारा रन्न चाहे जैसे रहे सुख मे रहेगा। आज भी और भविष्य में भी समझे न?

-- ऐसा कहते कहते जिनवल्लभ ने अपने बेटे की ओर घूर कर देखा।

तुम लोग व्यर्थ चिंता मत करो। रन्न रसोइया नही बनेगा। आज तक रसोइया नही था। आप की पत्नी अत्तिमब्बे इस को अपने छोटे भाई के समान मानती है।

कहते कहते 'इधर आओ रन्न! ओ कविरन्न' !! कहकर पपदेव ने आवाज दी। रन्न उसी प्रतीक्षा में आड में खडा था। चाहता था कि अपनी वेश-भषा पिताजी को दिखा दें। कोई न कोई बहाना निकाल कर उन लोगो के सामने आ जाना चाहता था। पप की आवाज क्या सुनी हर्ष से छलाग भरते हुए आ पहुचा। चियडो

के अपना रत्न अब सचमुच सबको प्यारा लग रहा था। जैसा कहा था। कानों में कुण्डल थे। उंगलियों में अंगूठी थी। और सिर पर अमरस्वामी टोपी थी। उसे देखकर जिनवल्लभ फूले नहीं समाए। गोद में उठाकर छाती से लगाकर प्यार किया। उसकी गोद में बिठाकर राघव की ओर करुणा से देखा।

उस को आज का … आई थी।

—कहते हुए उसकी गोद में रत्न को बिठाया। जिनवल्लभ की आँखों से आनन्दाश्रु टपक रहे। राघव आश्चर्य चकित हो उठा था।

अब कहाँ बेटा! रत्न तो यहीं … छोड़ अथवा मान ही से बच? … शहरों को … और भी … चाहिए। हमारे यहाँ ग्राम में … दूध … और … देता तक न था।

—इस प्रकार … पूछने लगा था जिनवल्लभ! क्योंकि आनन्द के मारे वह यह नहीं जानता था कि वह क्या बोल रहा है।

राघव! तुम्हारे छोटे भाई को पढ़ाने के लिए हम … भेजना चाहते हैं। जब तक हम आराम नहीं कर लेंगे तब तक कोई इसे नुकसान नहीं आए। पढ़ाई अधूरी नहीं होनी चाहिए।

— सेठ की स्वाभाविक अधिकार पूर्ण वाणी सुनकर राघव सहम गया। उसे अपनी पहले बिना सोचे कही गई बात पर लज्जा आ रही थी।

प्रभो! न जाने किस जन्म में मैंने उस साधु को सुखी … पहनाई। हमारा भाग्य ही बदल गया। सच मानिए अब से रत्न आप का बेटा ही है।

—कह कर जिनवल्लभ ने सेठ की गोद में उसे रख दिया। सेठ को अपार हर्ष हुआ। उसे अपने पास बिठा लिया। माँ-बाप का हृदय क्या कभी अपने पराये का भेद जानता है

जिनवल्लभ जी इसे स्वीकार कीजिए।

कह कर एक थैली उसके हाथ में थमाने का प्रयत्न दल्लप ने किया।

प्रभो ! मेरा दाम मुझे मिल चुका है। यह क्यो ? आप मेरे लडके के भरण का पोषण भार उठा चुके है। आपने मेरे वश का नाम ही उज्वल कर दिया है। आपने तो गरीब की झोपडी पर सुवण का कलश लगा दिया हैं। मुझे अब इसकी आवश्यकता नहीं है।

—इस प्रकार अत्यन दीनता और हर्ष दिखाते हुए जिनवल्लभ ने थैली लेने को इनकार किया।

जिनवल्लभ जी ! यह महामात्य का आशीर्वाद है और इस प्रसाद का तिरस्कार नही कीजिए।

कह पाने जब आग्रह किया तो विवश हो कर जिनवल्लभ ने राचय्य की ओर देखा। राचय्य ने भक्ति पूवक उस थैली को हाथ मे लिया।

अब आज्ञा हो तो लौटेगे। हम आप के ऋणी है। हमारा वश और हमारा रोवा रोवा आप का ऋणी रहेगा।

कह कर कृतज्ञता के भार से सिर झुका कर जिनवल्लभ खडे हो गए।

शुभ दिन मे रत्न को त्रकापुर भेजा जाएगा। मेरे पुत्र और पतोहू साथ जाएँगे। — दल्लप ने बताया।

रत्न जाओ। अपनी जी जी से कहो कि ये विदा होना चाहते ह।

दल्लप की आज्ञा मनकर रत्न अदर गया। और आदेश सुना दिया।

उधर पदमब्बे न कहा कि बहू, देखो कुछ कलेवा साथ दो। वह पाकशाला गई। पीछे पीछे रत्न भी गया। एक डली

नम्रता से अत्तिमब्बे बोली —

महाराज ! हमारी सारी सपत्ति क्या आप की पाद-धूलि की बराबरी कर सकेगी ?

भक्ति-भाव से झुककर आचाय के चरणो में नमस्कार किया। और पद रज को सिर आँखो पर लगाया। और अपने मागल्य मे भी लगा लिया। ऐसे ही गुड्डमब्बे के माथे पर इस का तिलक लगाया।

अत्तिमब्बे के भक्ति-भाव से वहाँ उपस्थित मुनिवृन्द गद्गद् हो उठा।

अब्बे ! तुम इस राष्ट्र की रक्षामणि हो। राष्ट्रकूट सम्राट के समकक्ष रह कर तुमने आश्रम की ओर सुवण-प्रवाह ही बहा दिया है। गगराजा के दान के बराबर है तुम्हारा दान ! अधिक क्या सचमुच तुम दानचितामणि हो !

अजितसेनाचाय ने मुक्त कठ से उस का सम्मान किया।

आचार्य जी, मैं केवल सामान्य स्त्री हूँ, अज्ञान की पुतली हूँ। सारी सपत्ति मेरे स्वामी की है। उदारता से आपने अनुमति दी हम मैं और यह मेरी छोटी बहन उसे यहाँ तक पहुचा देने के लिए आई है। — ऐसा कह अत्तिमब्बे ने कृतज्ञता-पूर्ण दृष्टि से पति की ओर देखा।

गुसाईं जी ! यह धन हमारे घर का नही है। मायके से अपने साथ लाई ह। आप जानते ही है कि हम इतने श्री सपन्न नही ह।

नागदेव ने स्पष्ट शब्दो मे यथाथ का परिचय दिया।

आचाय जी ! आप ही बताइए जिस दिन मैं और गुड्डमब्बे इन की दासी बन गई और इनके घर आई तब से हमारी स्थिर एव चर सभी सपत्ति के मालिक ये बने हैं कि नही ?

अत्तिमब्बे का तर्क अकाट्य था।

— अजितसेनाचार्य जी बोले

मैं क्या जानूं आचार्य जी! आप ही समर्थ हैं। आप परीक्षा कर देख लीजिए। यह जिसके योग्य निकले वही बने।

इतना कहकर एक बार नागदेव और दूसरी बार गुण्डमब्बे की ओर अत्तिमब्बे ने दृष्टिपात किया।

गुण्डमब्बे बोली --

आचार्य जी, मेरी इच्छा चाहती है कि यह अच्छा कवि बन जाए।

क्या इसे पप महाकवि का उत्तराधिकारी बनना है!

-- आश्चर्य सूचित करते हुए अजितसेन जी बोले।

हमारे मामा पपदेव वृद्ध हो गए हैं। इन के बाद कन्नड सारस्वत रिक्त नहीं होना चाहिए। आप आशीर्वाद दें कि यह रन्न कवि चक्रवर्ती बन जाय!

— अत्तिमब्बे के मुंह से हृदय की बात निकल पड़ी।

मुनिवर अजितसेन जी की दृष्टि रन्न पर जम गई। पल भर में अपना सिर हिलाते हुए मुस्कुराए। उसे गुरुकुल के व्यवस्थापकों के साथ अंदर भेज दिया। तब बोले -

बेटी, तुम्हारा यह लड़का कवि चक्रवर्ती बनेगा। चिन्ता मत करो।

अजितसेनाचार्य की भविष्यवाणी पर विश्वास करो। आप वाक्सिद्धि संपन्न हैं। आप के श्री मुख से आज जो बात निकली वह अवश्य सत्य होगी।

— अत्तिमब्बे को आश्वासन देते हुए गंभीरभाव से पपदेव ने कहा।

पपदेव की बात सच है बेटी। मुझे सब सिद्धियां प्राप्त हैं। पर एक बात की कमी है। पपकवि जैसे दो-एक महान व्यक्ति मेरी

शिष्यत्व [illegible] । अब यह सत्य नहीं है। तुम्हारे माता के माहात्म्य के स[illegible] सुशोभित अन[illegible] न बन गए हैं। प[illegible] मैं जो था वही हूँ। सबका मंगल इच्छा करता हूँ। अपना गर्विष्य [illegible] नहीं सका। तब जैसा था आज भी वैसा हो गए था।

[illegible] जो [illegible] हुए थे!

आचार्य जी! इतना [illegible] आपने [illegible] । जिनसे कि पम्पादि आप के शिष्य हैं।

— हमने कुछ न समझ था।

बालक। वे मेरे शिष्य नहीं थे। अब न भी हैं। विश्व कल्याण हैं। ऐसे व्यक्ति को अपना शिष्य कह कर मैं मेरा गौरव बढ़ाऊँगा न?

अजितसेन जी मस्करा [illegible]।

आचार्य जी अब भी आप का शिष्य कहने में मेरा [illegible] गौरव है। आप का स्थान मुनि समो से ऊँचा नहीं होगा। स्वयं ऊँचा है। क्योंकि आप कवि चक्रवर्तियों के बच्चा हूँ! [illegible]

[illegible] महाकवि न पर्याप्त होकर कहा।

अजितसेनाचार्य की भव्य रमाओं की सफता बढ़ते देखकर अत्यन्त उद्दीप्त और आत्मसात का अनुभव कर रहे थे। [illegible] का परिवार देखकर आनंद पुलक भाव से [illegible] कामधेनु के समान सुधा सदृश उपदेशामृत की धारा बहा दी।

८

देवन! तुम्हारे समधी को यहाँ बुलवा ला।

— गौतम ने सलाह दी।

पोम्मसम्म की मरण का भाव अभी हुआ है। वे दोनों भाई

वासुदेव और बलदेव जैसे थे।

दल्लप की ध्वनि शोक मे भारी थी।

हमारे ही कारण पोन्नमय्य की मृत्यु हुई। चालुक्य साम्राज्य की स्थिरता के लिए न जाने कितने वीरो को, कितने जिनधर्मावलवियो को प्राण न्योछावर करना पडेगा।

— ऐसा कहते समय तैलप की आँखो से दो-चार बूदे टपक पडी।

राष्ट्रनिष्ठा से बढकर और क्या धम है। राष्ट्र-रक्षा से बढकर और क्या कतव्य होगा, प्रभो। राष्टहित के लिए प्राणार्पण करना भी एक दृष्टि से समाधि-मरण ही मानना चाहिए।

यदि पोन्नमय्य नही होता तो उस परिस्थिति में गोज्जिग के कूटयुद्ध से बचना असभव बन जाता है। पोन्नमय्य की सेवा चिरस्मरणीय रहेगी। गोज्जिग के बाणो का निशान मैं ही था। बाण पर बाण बरसाए जा रहे थे। यदि पलभर भी पोन्नमय्य आगा-पीछा करते तो हम चारो खाने चित हो जाते। उस महात्माने हमारी मौत अपने गले लगाई। हम उनके चिर ऋणी है। सुनते हैं कि उनके कोई आठ तानें हैं — कभी उन्होने इस बात का जिक्र किया था।

— तैलप ने कहा।

उनकी तो औरस कोई सतान नही थी। हाँ, हाँ! पाय अपने भाई की सतानो के बारे में कहा होगा।

— दल्लप ने स्पष्ट कर दिया।

क्या यह सच है? उनकी निजी सतान नही है? तब क्या अपने भाई की सतानो को इतना चाहते थे। उनकी बातो मे हमने समझा था कि वे निजी सतान की बात कर रहे हैं।

जी हाँ प्रभो! जब उनकी पत्नी ने सहगमन किया तब अपनी सपत्ति को दल्लप के तीन पुत्रियो में बाँट दिया था। हर एक

को सोना था । [illegible] हाना [illegible] मिली कि हम इस गाड़िया पर ये चढ़ी । मेरी [illegible] निम [illegible] गाथी का स्मरण करके आज भी आंसू बहाती है। [illegible] का आदर्श परिवार था। और उस वंश का प्रति [illegible] या [illegible] में होड़ करनेवाला [illegible] ।

— [illegible] में वह [illegible] में कहा।

[illegible] नहीं करना चाहिए। नहीं तो अपराध होगा। हम [illegible] हैं कि [illegible] या नहीं पर हमारा कर्तव्य है कि पहले [illegible] यह काम आप को करना होगा। हमारे [illegible] में आप [illegible] और [illegible] प्रधान। [illegible] ने अपना सारा परिवार [illegible] आप। हम [illegible] में ही घर पधारें। हम अपने [illegible] उनके लिए दे दें।

— [illegible] ने अन्तिम निर्णय [illegible] सुनाया।

प्रभो! हम सोच समझ [illegible] काम करें। राज्य के [illegible] पर इस प्रकार [illegible] का रहना [illegible] वैरी को खटकने लगेगा।

— [illegible] की बात कही।

[illegible] यहाँ जाति या धर्म का प्रश्न कोई भी है। जो [illegible] हो गुणी हो उस की निष्ठा और गुण पर ही विचार कर रहे [illegible] । [illegible] साम्राज्य के [illegible] के लिए [illegible] अब तक [illegible] ने खून का पसीना बहाया है। [illegible] से ये लोग हमारे साम्राज्य की [illegible] में लगे हैं और आज भी [illegible] हैं। यदि समय [illegible] नहीं होते तो [illegible] के समय में ही [illegible] साम्राज्य का सूर्य अस्तंगत हुआ रहता। राज्य-लोभ ने [illegible] को अन्धा बना दिया था। उसने [illegible] के [illegible] उत्तराधिकारी [illegible] को पदच्युत करने के लिए क्या नहीं किया बताइए। उधर [illegible] का [illegible] किन्तु [illegible] था। इसलिए तो धर्म [illegible] की बात मानकर [illegible] बनने [illegible]

को चैन मे रहने नही दिया। ऐसे अवसर पर यदि समनभद्र की सहायता नही मिली होती तो पुलकेशी क्या कभी राज्य पा सकते थे? पुलकेशी के दो नेत्रों मे एक समनभद्र थे तो दूसरा रविकीर्ती! पुलकेशी की कीर्ति रविकीर्ती के कारण भूमण्डल भर मे फैल सकी। स्वयं पर्शिया तक जाकर रविकीर्ती ने पुलकेशी की कीर्ति फैलाई। नही तो वहा चालुक्य साम्राज्य का नाम कौन जान पाता? जब ही अचानक बादामी पर चोळों का सैनिक-आक्रमण हुआ तो पुलकेशी की रक्षा के लिए समनभद्र और रविकीर्ती दोनो ने प्राण पण से युद्ध किया और अन्त मे रणभूमि मे ही ढेर हो गए। वे दोनो जैन-धर्म के अनुयायी थे! वह बात गौण है।

जैन ही थे प्रभो! कौन इनकार करता है? फिर भी एक ही जाति या धर्मावलम्बियों के हाथ में राज्य की बागडोर दे देना उचित नही है। इससे अनावश्यक ही औरों का दिल खटकने लगेगा। संभव है कि इस असंतोष के परिणाम स्वरूप साम्राज्य का अस्तित्व ही पाप-ग्रस्त बन जाय।

राजनीति की दृष्टि से दल्लप ने सलाह दी।

दल्लप! आप फिर जाति पाति की बात पर विचार करते हैं। पर यह भूल जाते हैं कि हम केवल निष्ठा और नेकी पर ध्यान देते हैं। आप लोगों की नियुक्ति इसी आधार पर हुई है। जैन-धर्म के नाते नहीं। यहां धर्म की बात पर नही, कर्म पर दृष्टि है। पंप महाकवि अरिकेसरी के दाहिने हाथ थे। अरिकेसरी के रनवास तक पंपदेव की पहुंच थी। क्या कभी पंपदेव ने अपने पद या प्रतिष्ठा का दुरुपयोग किया था? महारानी के भाई, अरिकेसरी का साला और चालुक्य साम्राज्य के हितचिंतक बन कर जीवन बिताया। जाति पाति को लेकर क्या कीजिएगा? सब से प्रमुख स्थान योग्यता को मिलना चाहिए। योग्य व्यक्तियों की संख्या चाहे जितना बढ़े, उससे राष्ट्र का हित ही सिद्ध होगा। अधिक सोच विचार

की आवश्यकता नहीं है। शीघ्र ही दस्सप! मल्लर को हमारी ओर से न्योता भेजिए।

शैलप ने आग्रह पूर्वक कहा।

मैं समन्तभद्र का वंशज हूँ।

अभिमान पूर्वक दस्सर ने कहा।

यह बात है!

जी हाँ! महाप्रभो!

तब तो अच्छा ही हुआ।

हम धम्मकेशी के पास के पोते के पोते हैं। आप समन्तभद्र की पीढ़ी के हैं। पुलिकेशी के दरबार में समन्तभद्र की जो पद प्रतिष्ठा थी वही हमारे दरबार में आपकी होगी।

शैलप ने हर्ष विभोर होकर घोषणा की।

मल्लप को पुन्नूर छोड़कर अपने परिवार सहित चालुक्य साम्राज्य की राजधानी विजयपुर को आना पड़ा। राजमर्यादाओं से इनका स्वागत सत्कार हुआ। उपप्रधान का पद देकर शैलप ने उसका सम्मान किया। मल्लप के पाँचों पुत्रों की योग्यता के अनुरूप पद प्रतिष्ठा दी गई। चालुक्य साम्राज्य के प्रमुख केंद्रों में और महत्त्वपूर्ण स्थानों में मल्लप तथा उनके समधियों की नियुक्ति हो गई।

एक सहस्र मुनियों ने भिक्षा एक साथ कराकर अत्तिमब्बे कृतकृत्यता का अनुभव करने लगी। वह तो फूली नहीं समा रही थी। वहाँ से कुछ दूर चली आई तो अकस्मात् जिनालय मिला जहाँ हजारों दीपक ऐसे भासित हो रहे थे कि मन पुलकित हो उठा।

ऐसा लग रहा था मानो चादनी को ही साचे में ढालकर शीतल पवन के चाक पर चढाकर बनाए गए हो। अत्तिमब्बे ने उस समय अनगिनत शिशुमडली में रहने का-सा आनद पाया। उन सहस्र जिनबिबो को एक साथ क्षीराभिषेक करने का प्रबध था, जिसे देखकर वह आनद से रोमाचित हुई। नवरत्न के उन बिंबो से बण वर्ण की किरणें ऐसे बिखर गई कि मानो हजारो इन्द्रधनुष्श के झूलो पर एक साथ अनगिनत भव्यात्माओ को झूला रहे हो। जिनबिबो का अभिषेक देखकर अत्तिमब्बे विदेहक्षेत्र आई। अपराजितेश्वर के समवसरण के लिए मानो देव-ललनाओ ने उसका स्वागत किया। समवसरण में एक ओर दिव्य सगीत हो रहा था, देवागनाए गा रही थी। अत्तिमब्बे ने कभी ऐसा सगीत सुना ही नही था। वासती की सुगध मानो सगीत लहरी बन महक रही थी। आगे आगे चली। वहाँ खेचर कन्याओ का ननन हो रहा था। कभी लास्य, कभी ताडव। लास्य नृत्य की भगिमाओ में मलयानिल में इठलानेवाली माधवी लतासी खेचर कन्याएँ लगती तो ताडव में बिजली सी चमक कर वज्र सा टूट पडती और भयातक रस की बाढ उमडा देती। वहाँ से आगे बढने पर हजारो मुनिवृन्द मुक्त्यगना की गोद में शिशु से भोलापन लिए प्रशात चित्त विराज रहे थे। हजारो आर्यिकाएँ थी जो साक्षात् करुणा के कोमल पौधो के समान लग रही थी। इन पवाडो को देखने के लिए लक्षोपलक्ष भव्यात्मा एकत्रित थे। जिन्हे देखते ही लग रहा था मानो शशि का सौंदय देख मु ध बने चमकीले नेत्रो से देदीप्यमान नक्षत्र हो। वहाँ सहस्रदलवाले सुवण कमल पर धम-रूपी मकरद विराज रहा था। कमल पर जैसे भ्रमर आ आकर न्योच्छावर होते है उसी प्रकार अपराजित के चरणो पर भव्यवृन्द आ आकर न्योच्छावर हो रहे थे। अत्तिमब्बे भी परमात्मा के सन्निकट आई थी। तीर्थेश के पादारविद पर नतमस्तक हो गई। ऐसा लगा, मानो अपना त्रयताप वही फेंक चुकी हो। चरणस्पर्श से

उसके तनमन में पुलकावली प्रस्फुटित हो गई । लगता हुआ हुआ मानो दिव्य ध्वनि रूपी पयोधि में अवगाहन कर रही हो। वहाँ से उठकर मन मारुत सी इठलाती हुई सिद्धशिला के पास आ। सिद्धलोक में वहां भी देखा परमज्योति की मूर्तियां थी। मन्दिर दिखाई रही थी। ज्योति में ज्योति सी या दर्पण में प्रकाश के समान वे सिद्ध एक दूसरे से मिल रहे थे। समरस होकर भी अपनापन को बनाए रखकर अनन्त तक विलीन होनेवाले करोड़ों सिद्धात्माओं का समूह दर्शनीय था। कुछ खड़े थे। कुछ बैठे थे। चाहे खड़े रहें चाहे बैठे रहें सब का सिर एक ही स्तर पर रहता था। निराकार निर्विकार उन सिद्धों में किसी किसी के चरणों ही की वन्दना अनिमन्ना कर सकी। उस समय सिद्धत्व में ओतप्रोत थी। उसने मग्न होकर चारों ओर सिद्ध लोक पर दृष्टिपात किया। चारों ओर चांदनी चपल तरंगिणी सी बह रही थी। इस चन्द्रिका को मथकर निकाले नवनीत के ढेर के समान इधर उधर पुरुषरूप में विहार करनेवाले सिद्ध-परमेष्ठियों का दिव्य दृश्य चित्ताकर्षक था। वे चन्द्रिका से भी अधिक कान्तिमान और कौमुदी से भी बढ़कर कोमल लग रहे थे। आत्मा की पवित्रता की पराकाष्ठा ही तो सिद्धावस्था है। ज्ञान ही ज्योति बन ज्योति ही मूर्ति बन प्रकाश पीठों पर महिमारूपी मकुट धारण किए सिद्धात्माओं का स्तोम विराजमान था। उस महिमालोक में अनिमन्ना स्वयं महिमामयी बन कर समरसता का अनुभव करने लगी थी। उसे जरा भी सुध-बुध तक नहीं थी।

दीदी! दीदी! उठो! देखो तो सही सूरज कितना ऊपर तक चढ़ आया है!

ऐसा कहकर कुंकुमश्री ने मणिमंच पर सोई हुई अनिमन्ना को हिलाया। अनिमन्ना के मुखारविंद पर दैविक शान्ति थी। सम्यग्दर्शन से सम्पन्न थी। वह निश्चिन्त एवं निर्विकार भाव से सोई हुई थी। भला कौन सिद्धलोक से उतर आना चाहता है? स्वप्न चांदनी सा मधुहास अनिमन्ना के

मुखमडल की शोभा वढा रहा था। उसे देखकर गुडुमव्वे का हृदय आनद से पुलकित हो उठा। मुग्ध होकर उसको देखती रह गई गुडुमव्वे अत्तिमव्वे के मुख मडल से घुघुराले केशो को सँवारने लगी। चद्रमा पर रखे शुक्र तारा के समान मुख मडल पर नत्थू चमक उठा। सम पर वजनेवाली वीणा-सी अत्तिमव्वे की मास वासनी उपवन से वहकर आई हुई गधभार-भरा गधवह सी चल रही थी।

जीजी! यह कैसी नीद है! कितनी गहरी! सव उठे, नहाए, धोए। तुम भी उठो!

—गुडुमव्वे ने फिर उसे हिलाया। किसी अज्ञान लोक से उतर आई सी, जागकर अत्तिमव्वे ने चारो ओर देखा। पानी से वाहर काढी गई मछली सी वह वेचैन हो गई।

अत्तिमव्वे की ठुड्डी पकड कर प्यार से अपनी ओर मुँह घुमाकर गुडुमव्वे ने प्रश्न किया

जीजी, क्या सपना देख रही थी?

गुडू! तुमने अच्छा नही किया .. ।

अत्तिमव्वे ने इस ढग से उत्तर दिया मानो अपार नष्ट पाकर खिन्न हुई हो।

क्यो जीजी! सव नहा धुला चुके। पूजा पाठ से निवृत्त हुए। तुम अभी सोई हो! सास जी ने जगाने के लिए मुझे भेजा। जाओ हाथ मुँह धो आओ।

कह कर छोटे लडको को फुसलानेवाले ढग से, प्यार से जगाया।

गुडू! मैंने विदेहक्षेत्र को देखा। अपराजित का समवसरण भी देखा। जिनदर्शन पाया। सिद्धलोक के परमानद में मग्न थी। कितना अच्छा था! कैसी प्रभा थी!

यो अत्तिमव्वे कह ही रही थी कि पद्मव्वे वही आई और

हास्य की आवाज में बोली —

ऊह! यह क्या? जरा कान भरा तो यहीं आकर बैठ गई।

कुसुमश्री ने उनसे अपनी बहन का स्वप्न कह सुनाया।

यह आनंद की बात है बहनी। अब हमारी अतिमश्री के छठवाँ मास है! प्रसव के दिन तक ऐसा ही स्वप्न देखा कर!

कुसुमश्री पद्मश्री के वचन आनंद रस में सिक्त होकर चले आ रहे थे। माँ बोली—

अति! निस्संकोच मुझ से दोहद कहा करो। तुम्हारी आशा पूर्ण कर दूँगी।

—अतिमश्री से इस ढंग से बोल रही थी मानो अपनी बेटी से ही बोल रही हो।

क्या सचमुच पूर्ण करोगी?

— संशय व्यक्त करती हुई अतिमश्री बोली।

क्या मुझ पर संदेह है बहनी! मेरे वंश की ज्योति तुम्हारे गर्भ में है। अब जो भी तुम्हारी इच्छा होगी वह अवश्य मैं उस मेरे लाडले की होगी समझी! माँ! तुम जो चाहे माँगो देगी।

— पद्मश्री ने अभय का आश्वासन दिलाया।

चाँदनी को झिलमिल के साथ में डालकर आज भर देखने की इच्छा हो रही है।

— अतिमश्री ने बिना हिचकिचाकर कह दिया।

दीदी! क्या अभी तुम स्वप्नलोक में रहती हो? इस मर्त्यलोक में उतर आओ ना! चाहे मणिरत्नों की मूर्तियाँ बनवा दूँ।

— कुसुमश्री ने सलाह दी।

ऊह! मुझे चाँदनी की ही मूर्तियाँ चाहिए।

— अतिमश्री ने कहा और मुस्कुराया।

कैसी मूर्ति बनवानी होगी? इसका खाका तो कहो।

पद्मव्वे ने गभीर भाव से कहा।

माताजी ! मैं उसे क्या जान् ? यहाँ कहाँ से लाऊँ ? ऐसी करोडो मूर्तियाँ मैंने स्वप्न मे अवश्य देखी हैं।

— कह कर अत्तिमव्वे फिर अतमुखी हो गई।

अत्तिमव्वे ! आज रात को फिर वही स्वप्न देखना । हो सके तो नमूने के लिए एक वैसा ही जिन-बिंब बनाने का प्रयत्न भी करो। उस की हजारो प्रतिकृतियाँ मैं बनवा दूगी । अब उठो। यो भूखो रहना नही चाहिए।

— ऐसा कहकर वह को साथ लिए पद्मव्वे चली गई।

अत्तिमव्वे पर उस स्वप्न का बडा गहरा प्रभाव पडा था। उसकी कल्पना अत्यत सजग हो उठी थी। वह कभी कभी विदेह क्षेत्र एव परमौदारिक-काय जिनेद्र मूर्ति को अपनी आँखो के सामने चित्रित करने का प्रयत्न करने लगी। सिद्धलोक की मोहकता को मानस पटल पर अकित करके कल्पना मे लीन होने लगी। पहले उसकी रूप-रेखा खीचकर उस मे रग भरने का प्रयत्न करने लगी। घर पर रहनेवाले सोना चादी मे जिनमूर्तियाँ ढलवाने के लिए बेचैन हो उठी। सहस्र मूर्तियो को एक साथ बिठाकर अभिषेक कराने के रमणीय दृश्य की कल्पना उसे आनद विभोर कर रही थी। अकृत्रिम जिनालयो की भाति स्वय कई जिनालय बनवाने की बात सोचने लगी। गगनचुबी सहस्रकूट जिनालय बनवा दे तो वह चद्रिका पर्व में नहाते हुए कैसे शोभायमान रहेगा ! अमावास्या के गहरे अधकार मे उस जिनालय को नीचे से ऊपर तक अदर-बाहर घी के दीपो से जगमगा दें तो उस ज्योति मालिका मे क्या ही सुदर लगेगा। ज्योतिर्लोक ही मानो इस धरातल पर उतरा सा नही लगेगा ? ऐसी कल्पना उसे तन्मय बनाए रखने लगी थी। अत्तिमव्वे अपने गर्भावुधि मे स्थित प्रवर्धमान शिशु को लिए विहार कर रही थी।

ऐसे विचारमग्न से कभी भी उबरने तो काव्य गगन की विहारिणी बन जाती थी। महाकवि पंप के आदिपुराण में स्वर्ग के मनमोहक वर्णन पढ़कर तन्मय हो उठती थी। स्वर्ग हो या मर्त्य जब तक पूरी आस्था नहीं हो और धर्म मार्ग पर चलते हुए दैव की कृपा पर विश्वास नहीं करें तो यह जीवन सार्थक नहीं होगा। इस सनातन सत्य पर उसका विश्वास दृढ़ होता गया। टहनी से टहनी पर उछलनेवाले चंचल मर्कट से छलनेवाले मन को मनसायक सहसा जिनबिंबों के सौंदर्य दर्शन में लगाए रखने लगी। और कभी-कभी काव्योद्यान में विहार करने का मौका भी उसे दे बैठती थी। कभी-कभी वह कल्पना करने लगती कि समस्त काव्यों और शास्त्रों की हजार हजार प्रतिलिपियां बना कर एक साथ रख दें। जो भी मांगे उन्हें साहित्य या शास्त्र दान दें। इस प्रकार उनके प्रचार कार्य में हाथ बटावें। वह संकल्प करती थी और चाहती थी कि स्त्रियों को साहित्य दान दें। वैसे ही सुहागिनियों की गोद सोने की जिनमूर्ति से भर दें!

अतिमब्बे! क्यों सदा कुछ चिंतित सी रहती हो? क्या पहले के जैसे हँस हँसकर बातें नहीं करती? मन में कुछ भार संकोच के कोई बाधा रख लो और उसे पूरा होने नहीं दो तो मेरा लाड़ला भी तुम्हारी गोद में ही खिल हो जायगा। बोलो तो सही।

— ऐसा पद्मब्बे पूछा करती थी।

क्या मैं अपने मन की बात बता दूं। सुनकर आप हँस पड़ेंगी। जाने दीजिए।

अतिमब्बे ने झेंपते झेंपते उत्तर दिया।

इस लोक की बात हो तो कहो। यदि चन्द्र किरणों की प्रतिमा की बात नहीं हो तो अवश्य मैं तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूंगी। चन्द्र-किरणों कौन बटोर सकेगा और कौन सांचे में डालकर मूर्तियां बना सकेगा!! अपने मन में भी ऐसी मूर्ति को संपन्न करके भी

मुझमे डालते नही बना। चाहे तो कहो सोना चादी या रत्नो की मूर्तियाँ बनवा लें।

पद्मव्वे ने कहा।

ऐसा ही हो! क्या, जैसे मैं चाहती हूँ वैसे बनवा के देगी?

अत्तिमव्वे की वाणी में अभी सदेह था।

क्या, सोने की बनवा दूं? अवश्य तुम्हारी इच्छा पूण कर दूगी। चाहे तो उस में मेरी पूरी सपत्ति ही क्यो न खप जाय। मेरे पोते से बढकर तो यह सपत्ति नही!

पदमव्वे बोली।

अच्छी बात है माताजी! एक हजार सुवर्ण जिन प्रतिमा बनवा दीजिए। एक साथ सबका अभिषेक करवाना चाहती हूँ।

-- अत्तिमव्वे की बात अभी पूण नही हो पाई थी पदमव्वे की हिम्मत ने जवाब दे दिया। बात काटकर बोली

बेटी, तुम्हें क्या हुआ है? बोलेगी तो हजार की ही बात किया करती हो। अब हजार मूर्तियाँ बनवाने की बात कर रही हो शायद हजार मदिर बनाने की बात कहोगी। यह कैसे सभव होगा? बेटी, कुछ विचारकर बोलो। मानवो की शक्ति सीमित होती है न? अब कहो क्या करना चाहिए।

पदमव्वे ने प्रश्न किया।

अपनी धुन मे अत्तिमव्वे बोली

और एक लाख श्लोकवाले पवलजयधवल की हजार प्रतियाँ बनवानी है। पप, पोन्न आदि कवियो की कृतियो की भी प्रतियाँ बनवानी होगी। तभी तो हजारो मुखो से कन्नड काव्यश्री मुखरित हो सकेगी!

— अत्तिमव्वे भाव परवश हो बोलती जा रही थी।

जीजी! तुम्हारी बात मैं रखूंगी। तुम खिन्न न हो।

गुडुमव्वे ने आश्वासन दिया।

मुग्ध ! क्या तुम्हारा सिर भी चकरा गया है ? जब हमारा से कम की बात सोचती ही नहीं। तुम बिना आगा पीछा सोचे वरदान दो बात दे बैठती हो। मनमानी इसी को कहते हैं !! तुम दोनों मिलकर बादल में थिगली लगाने वाली हो।

पद्मब्बे ने डाँटते हुए कहा।

माताजी ! आप के आग्रह पर ही तो कह रही हूँ। आपने आश्वासन भी दिया था।

— अत्तिमब्बे ने स्मरण दिलाया।

आश्वासन दिया था। पर तुम तो हजारों से कम की बात करती ही नहीं। तुम इस काल की नहीं देवलोक की बात करती हो मानते हैं कि वहाँ कामधेनु, कल्पवृक्ष चिन्तामणि आदि हैं जो मांगने पर कामना पूर्ण कर देती हैं।

— पद्मब्बे ने कहा।

मेरी जीजी की मांग पूरी करने के लिए कामधेनु की आवश्यकता है ? ठहरिए आप चिन्ता नहीं करें। सहस्र जिनों को एक साथ अभिषेक कराना कोई बहुत कठिन बात नहीं। मैं करा दूँगी।

— गुंडमब्बे ने सप्रेमपूर्वक आश्वासन दिया।

तुम दोनों की बातें समझ में नहीं आतीं।

— कहती कहती पद्मब्बे चली गई।

बहन के कल्पना-विलास में रंग भरनेवाली कलावती गुंडमब्बे थी। वह अत्तिमब्बे के भावावेश को चमत्कृत रूप से चरितार्थ कर देनेवाली जादूगरिन थी। दोनों गगनमंडल के [illegible] के समान थीं। अत्तिमब्बे की इच्छाएँ औरों के लिए पागलपन ही लगती थी। पर गुंडमब्बे के लिए वे आश्चर्य की बात नहीं केवल भक्ति परायणता और सहृदयता से प्रेरित दिखाई दे रही थी। अत्तिमब्बे का सुख उसका सुख था, अत्तिमब्बे का दुःख उसका दुःख था। इस प्रकार अपनी बड़ी बहन के

जीवन मे अपना जीवन नैवेद्यवत् अर्पित करके, अपनेपन का सर्वथा त्याग किए वह निश्चित रहने लगी थी। उसकी अपनी कोई इच्छा नही होती थी। पर बहन के लिए सबकुछ चाहती थी।

गुडुमब्वे ने सकल्प किया कि अभिनव सिद्धलोक का निर्माण करा दे। इस काय के निमित्त अपने सभी भाइयो को बुलवा लिया। अपनी योजना को कार्यान्वित करने के लिए दस-एक दिन माथा पच्ची करती रही। अत मे अत्तिमब्बे की कल्पना का वास्तविक जगत की वस्तु बनाने में सफल हुई।

एक बार दुपहर को अपनी वडी बहन को साथ ले जाकर सिद्धलोक के दर्शन करा दिया। एक शीश महल बनवाया था। उस मे चारो ओर बडे कलात्मक ढग से आइनो को सजाकर रखा था और ऐसे ही रत्नो की जिनमूर्तियाँ भी सजाकर रखी गई थी। इन मूर्तियो के शिरोभाग में इस प्रकार नलिकाएँ वधी हुई थी कि जब आवश्यकता हो तब अपने आप मूर्तियो का अभिषेक हो जाय।

अत्तिमब्बे को शीश-महल के मध्य मे बिठाया। जहाँ वह दृष्टि क्षेप करती वहाँ करोडो जिनमूर्तियाँ देख पाती थी। वह एक मायालोक-सा था। उस माया लोक की महिमा वर्णनातीत थी। रत्नबिंबो से छिटकनेवाली कांति दर्पणो द्वारा प्रतिफलित होकर दसगुना, सौगुना क्यों हजार गुना बढ जाती थी। इसी अनुपात मे जिन मूर्तियाँ भी प्रतिबिंबित हो रही थी। अत्तिमब्बे की कल्पना इसमे और निखर हो उठी। उसकी भावना पुलकित हो गई। उस दृश्य को देखने मे मानो उसका रोवा रोवाँ नेत्र बना था। सारा शरीर मानो अत करण बन कर आनदित हो उठा। वह मानो आनद रस का कलश बना। उस की गलित प्रवाह बन कर वह चली। वह उस मे तन्मय हो गई।

नलिका से जब उन रत्नबिंबो पर शुद्ध जल का अभिषेक होने लगा तो ऐसा लग रहा था मानो निरुपाधिक सुख ही झडी सी

परम कर न मन बह निकला था। देखते देखते ऐसा भासित होने लगा कि करोडों दिव्य देव-गण की करोड़ों धाराएँ एक साथ बह रही हों। नासिका में जब इस सुगन्ध का पहला ही क्या स्वयं गौर था। उसके उत्पन्न अम्भा यानक करने के लिए मन्थन भाव साथ न जा सका। रससभाएं म गहने ए धीरे धीरे आ पहुंचा हो। मधमासु महल से बचपन रिश्ता को समेटकर जिनाभिषेक देखन के लिए उत्सुक होती चली। उनकी हर सी रमणीयता वहाँ छा गई। जब माता बजबाने उस जिनबिम्बों पर दब बह चला तो राजा के शरीर पर जो कण गिरे सुगन्ध पारा कि उन कण कणों की सुरभि सी लगती। जब वह धीरे धीरे बहने लगी तो ऐसा लगता कि इसका उछलती हुई धरातल पर आ रही है। कभी कभी ऐसा लग रहा था कि जिन बिम्ब ही पुलकित होकर लोक कल्याण निमित्त प्रवाह में निकल पड़ा हो। महिमा धर्म ही मानो वीतरागिता का प्रवाह उठा हो। अथवा रसावेश को मानो भक्ति का परिवेश भी मिला हो। जलाभिषेक के अवसर पर तीनों लोक मानो उमड़ा होगा। अतिमब्बे को ऐसा लगा कि वह स्वयं सुगन्ध में ओतप्रोत हो गई। उसने माना कि यही देवों का मनोरथ है और भार को नाश करना मार्तण्ड है। अभिषेक समाप्त हुआ। तब रत्न बिम्बों के निकट घी की बत्तियाँ जलाई गईं। तब देखना था उन रत्नों की मनोहारिता! उसकी कमनीयता से वह भी पुलकित होता दिखाई दे रहा था। तब अतिमब्बे के सम्बन्ध में क्या कहूँ! उसने एक बार ऐसा ही दृश्य देखा था। पर प्रत्यक्ष नहीं स्वप्न में देखा था। यह तो स्वप्नवाले दृश्य से हजार गुना अधिक आकर्षक था। वह स्वप्न था पर यह यथार्थ। वह कल्पना थी पर यह वास्तविक। मारे हर्ष के गुरुमब्बे को कर बद्ध करके प्रणाम करते कहने लगी—

गुरु! तुम्हारे बिना यह मदार मेरे लिए शून्यप्राय होता।

तुम ही मेरी जीभ हो। तुम ही मेरी आत्मा हो। तुम मेरे प्राण हो। मेरे लिए अपना सर्वस्व त्याग किए रहनेवाली त्यागमयी तुम ही मेरी आत्मा हो। मेरे स्वप्न को यथार्थ रूप देनेवाली तुम हो। तुम्हारे ही कारण मेरी कल्पना काव्य रूप में सार्थक बन सकी है। हे मनभावनी! तुम्हें क्या कहूं। तुम मेरे भाव की भाषा हो। भाषा के सौंदर्य हो।

—ऐसा कहती हुई अपनी बहन को बाहों में बांध लिया।

अत्तिमब्बे की बड़ी बड़ी आशा-अभिलाषाओं की बात सुनकर अजितसेनाचार्य जी अत्यन्त हर्षित हुए। आचार्य जी ने अत्तिमब्बे को कलियुग की जिनेंद्र-जननी कहकर मन ही मन यशोगान किया। आश्रम में जितनी ताड़पत्री पुस्तकें थीं सब की एक एक प्रति बैलगाड़ियों पर लदवा कर रत्न के साथ विजयपुर भेजा। इसी गाड़ियों पर आए सब ग्रंथों को सजाकर विजयपुर में एक पुस्तक भंडार खोला। अत्तिमब्बे के अमृत हस्त से उसका उद्घाटन समारोह भव्य हुआ। हजारों ताड़पत्रों के ग्रंथ देखकर अत्तिमब्बे अत्यंत प्रसन्न हुई।

रत्न! देश का सौभाग्य इन्हीं वाणी से है।

— अत्तिमब्बे ने सौभाग्य की कलापूर्ण व्याख्या सुना दी।

माताजी! आप हमारे देश की शारदा माता हैं। आप जैसी महत्वाकांक्षिणी, युग युग में एक ही क्यों न मिल कर्नाटक कृतकृत्य हो जायगा। कन्नड भाषा की सुहाग अत्तिमब्बे का आधार पर निर्भर है।

— रत्न की बातों में भावुकता टपक रही थी।

तात! केवल अत्तिमब्बे के जन्म लेने से ही क्या होगा? तुम्हारे जैसे तरुण कन्नड भाषा प्रेम से पागल होकर कविचक्रवर्ती बनने का स्वप्न देखने लगें तो कुछ संभावना अधिक है। हम केवल मार्ग को स्वच्छ एवं स्वस्थ रख सकेंगी। कवि के रस प्रवाह में वहीं से कुछ गंदगी न आने पावे इतना हम देख लेंगी। वातावरण को

स्वच्छ रखना हमारा कर्तव्य है। हम चाहती हैं कि हमारे सभी बाला कवि चक्रवर्तियों का जन्म यहीं हो। गुरुअम्मे ने विलविंडी के संबंध में जो मेरी कल्पना थी उसे पूर्ण कर दिया। तुम कविचक्रवर्ती बन कर काव्य रत्नों का निर्माण करो। उन में से प्रत्येक की सुंदर प्रतिमा बनवाकर मैं बाँट देना चाहती हूँ।

इस प्रकार अत्तिमब्बे ने अपनी कल्पना के दूसरे पहलू को भी स्पष्ट कर दिया।

माताजी! आप को क्या कहने से फायदा! आप बात बात में हमारी भी ही चर्चा किया करती हैं। आप अवश्य हमारे मुखवाली भारती हैं। आप सुन्दर लोचनवाली वीणा पाणी हैं। आप सहस्र मुखवाली वाग्देवी हैं।

रत्न! तुम्हारी प्रतिभा मेरे महाग्रन्थ में ही समाप्त न हो। याद रहे पम्प के बाद पोन्न! और पोन्न के बाद रन्न को यह स्थान लेना है।

यह कह रन्न को खूब चुनौती दी और प्रोत्साहित किया।

बेटी कहो मैं तुम्हारे लिए क्या करूँ कोई इच्छा हो तो बताओ बेटी।

कह कर उस गर्भिणी को अत्तिमब्बे ने आश्वासन दिया।

अत्तिमब्बे की बात सुनकर अत्तिमब्बे ने उत्तर दिया —

पत जी! आज्ञा अभिलाषाओं की क्या कमी है? सैकड़ों उठती रहती हैं। उन्हें बताऊँ तो शायद मुझे पागल मानने लगेंगी।

सीमन्त-संस्कार में आई हुई अत्तिमब्बे का संकोच पूर्ण उत्तर माताजी ने सुना। उस समारोह में सम्मिलित होने के लिए चामुण्डराय की माता कालल देवी । पधारी थीं।

अत्ति ! सकोच क्यो करती हो ? क्या हमारे रहते हुए भी तुम्हारी इच्छा पूण न होने पावेगी ? बताओ बेटी !

-- काळलादेवी ने आश्वासन दिया ।

मामी ! सब लोग मुझे पागल ही समझते ह । मेरी गुड् मेरे अत करण की बात समझ सकी है ।

-- अत्तिमब्बे ने उत्तर दिया ।

ऐसी बात हैं ! बेटी सुन् तो तुम क्या चाहती हो ? मैं राव की माँ हूँ — जो चाहे तुम्हारी इच्छा हो, चाहे जितनी बडी हो मैं पूरा कर दूगी ।

मामी एक हजार अच्छी अच्छी गाभिन गायो का मैं गरीब गभवतियो को दान करना चहती हूँ ।

अत्तिमब्बे की बात काटकर अब्बकब्बे ने कहा —

जी ! आपने सुना ? कौन इसकी इच्छा पूर्ण कर पायेगा ? नर मनुष्य के बूते कि बात करती ही नही ! ऐसे ही मानवशक्ति के परे की बातें इसको सूझा करती है ।

— ऐसा कह कर अब्बकब्बे हंस पडी ।

अब्बकब्बे ! साधारण बूते की बात यह नही है । मैं मानती हूँ । पर इस की इच्छा सुनकर सतुष्ट होना चाहिए । सोचना चाहिए कि यह भी सौभाग्य की ही बात है । ऐसी ऐसी महान आशा अभिलाषाएँ ऐरे गैरो के मन में जाग नही सकती । समझी ?

— कहकर अत्तिमब्बे से कहा

बेटी ! मैं तुम्हारी आशा पूर्ण करूंगी ! कल एक हजार गाभिन गायो का ढोर यहाँ जमा किया जायगा ।

--अत्तिमब्बे ने सोचा की काळलादेवी की उदारता ही बोल उठी है । फिर अब्बकब्बे को सबोधन करके काळलादेवी ने कहा

सुन अब्बे ! एक हजार गर्भिणी साध्वियो को तुम न्योता दो ।

इतना भी कर सकोगी या नहीं ? मेरी इस आदमी की आशा आकांक्षाओं को बिना समझे तमने इसे संकोच में डाल रखा है। बेचारी मन मारे रह जाती है।

इस प्रकार सब को एक ही लाठी से हांक दिया।

विजयपुर की झोपड़ियों में रहनेवाले गरीबों को काठकारेवी ने प्रीति भोज दिया। उन में से अच्छा मला छांटकर एक सहस्र अत्यन्त दरिद्र गर्भवती नारियों को छांट लिया। उनके लिए एक हजार मालिन माताओं को एकत्रित कर रखा था। दरिद्रता के दल दल में फंसी उन नारियों को उबटन लगाकर नहलाया। नए नए वस्त्र आदि से शृंगार किया। चमेली का तेल लगा कर बालों को संवारा और जूड़ा बांधा। और सब के जूड़ों में फूल पिरोए गए। ऐसा लग रहा था मानो दरिद्रता की कमर तोड़ डालने का ही प्रबंध हुआ हो। जो भद्दी हीन दरिद्र मूर्छा-सी बन रही थी सब साक्षात लक्ष्मी बनकर बैठी थी। अतिमब्बे ने इन नारियों के पास स्वयं जाकर उन से कुशल प्रश्न किया। सब के वैयक्तिक कष्ट-मय दि दान दिया। एक एक करके उनको अपने पास बुलाया और चांदी की मकल और सोने की सीमवाली एक-एक थाल को उन्हें दान दिया।

यह थी अतिमब्बे की इच्छा! इस रूप में पूर्ण किया काठकारेवी ने।

यह एक अभूतपूर्व महोत्सव था। चार दिन के बाद अजितसेनाचार्य जी अपने सैकड़ों मुनि शिष्यों को साथ लिए विजयपुर आए। अतिमब्बे ने सब को भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। इन परम मिनेन्द्रों को आँख भर देख संतुष्ट हुई। आनंद भार से दबी हुई सी सिर झुकाए उनके सम्मुख बैठ गई।

बेटी! तुम्हारी एक एक लोकोत्तर अभिलाषाओं का विवरण सुन से आता है। ऐसी उदार आत्मा को देखने की प्रबल इच्छा हुई।

स्वय चला आया। मुझ बैरागी मे तुम्हारी कोई इच्छा पूर्ण हो सकती हो तो बताओ बेटी, सकोच मत करो।

अजितसेनाचार्य की वाणी वात्सल्य से सनी हुई थी।

एक इच्छा है। एक हजार जिन-मुनियो को भिक्षा देना चाहती हूँ। सो भी एक साथ।

अत्तिमब्बे की यह बात सुनकर सब अवाक रह गए।

अत्तिमब्बे, तुम सचमुच मूर्तिमती मोक्ष-लक्ष्मी हो जो इस धरातल पर भूले भटके उतर आई है। तुम ही सहस्र नेत्रा, सहस्र वदना, सहस्र हस्ता, सहस्र कर्णा और सहस्र रसना हो।

इस प्रकार अत्तिमब्बे का यशोगान करके अजितसेनाचार्य जी ने अज्ञात रूप से स्थित जैन तपस्वियो को कहला भेजा। विजयपुर में अजितसेनाचाय जी के दर्शन के लिए कोने कोने से जैनमुनि चले आए। अत्तिमब्बे की आशालता मानो लहलहा उठी। हजार से भी अधिक मुनियो को एक ही छप्पर के नीचे शास्त्रोक्त विधि मे अन्नदान दिया। क्या ही अद्भुत दृश्य था! लग रहा था सिद्धलोक इस धरातल पर उतर आया हो। अत्तिमब्बे की आशा पूर्ण हुई। इस अन्नदान महापर्व मे सहस्र मुनियो के बीच मे अत्तिमब्बे इस स्फूर्ति के साथ हाथ बँटा रही थी मानो हवा मे पर लगे हो। इस प्रकार भरसक इस पुण्य कार्य मे दैहिक श्रम उठाकर भी वह नही थकी। पुण्य भाजन बन कर विराजमान हुई। प्रशातचित की प्रसन्नता मुख मडल की शोभा बढा रही थी।

अत्तिमब्बे! तुम्हारी मान कामनाएँ सफल होगी। वह काल दूर नही है जब की तुम औरो की सहायता लिए बिना ही हजार जिनालय बनवाओगी, खुद ही सहस्र जिनबिबो का प्रतिष्ठापन कराओगी, सहस्रो ग्रथो की प्रतिलिपिया बनवाकर दान दोगी। अधिक क्या कहूँ तुम ही कर्नाटक की कल्पलता हो।

— कहकर अजितसेनाचार्य जी ने मुक्त कंठ से उसका यशोगान किया। आचार्य जी चक्रपुर चले गए। जिस प्रकार काव्य में रसाभिव्यक्ति में पोषक बनकर अलंकारादि आते हैं और रस निष्पत्ति के साथ ही सहृदयों के ध्यान से ओझल हो जाते हैं इसी प्रकार अजितसेनाचार्य के साथ जिन-मुनि-वृन्द आया और अतिमब्बे की महत्वाकांक्षा के पथ से ही अपने अपने स्थान पर चला गया।

❖ ❖ ❖

ओहो! महाभाग्य है! अचानक आज इन देवकन्याओं का शुभागमन हो रहा है! प्राय आज इस भक्त पर कृपा दृष्टि पड़ी!

— ये नागदेव के वचन थे। अपनी पत्नियों को अपनी ओर आते देखा तो प्रेम विह्वल हो बोल उठा था।

जी हाँ! आज देवराज के दर्शनार्थ आई हैं।

अतिमब्बे ने मनोहर उत्तर दिया।

औदार्य मूर्ति का स्वागत करता हूँ। कल्पलता का भी स्वागत है। क्या तुम्हीं ने संसार की दरिद्रता की कमर तोड़ देने का संकल्प किया है? बड़ा उत्तम विचार है। खेद की बात यह है कि इस लोकोपकार की धुन में इस अपाहिज को भूल गईं। यह बेचारा इस कारण से सूखते जा रहा है।

नागदेव ने परिहास्य किया।

किया उसे अवसर होता ही है।

— गुण्डमब्बे ने उत्तर दिया।

क्या देवराज के दर्शन के लिए आई हो?

— नागदेव ने अत्तिमब्बे से प्रश्न किया।

जी हाँ।

— दोनो ने उत्तर दिया।

कब से हम देवराज माने जाते है?

कुतूहलवश पूछा।

जब हम देवकन्या बनी तभी से।

उन दोनो का उत्तर था।

ऐसी बात है! समझा! तुम देवकन्या हो तो मैं देवराज बनूंगा। यदि तुम कामधेनु बनो तो हमारी क्या दशा होगी?

हँसते हँसते जिज्ञासा की।

आप ही जानते हैं।

—— मुस्कुराकर अत्तिमब्बे बोली।

क्या तुम कामधेनु और हम काम वृषभ होंगे?

फिर मुस्कुराया।

देखिए, यों उपमा से खींचा-तानी करना नहीं चाहिए।

अत्तिमब्बे बोली।

खैर! आओ देवियो। तुम उपमातीत हो।

नागदेव ने स्वागत किया।

हम भले ही उपमातीत न हों आप की मनोनीता तो अवश्य है!

रानी! इस जन के योग्य कुछ सेवा की आज्ञा हो।

कातरता का अभिनय करते हुए बात बदलकर पूछा।

अभी जो सेवा की है वह क्या कम है?

कौन सी सेवा हुई है?

अनजाने से तर्क किया।

क्यों हृदयेश्वर! कुछ नहीं है?

हमारी समझ में तो कुछ भी नहीं किया है। गुड्डमब्बे ने तुम्हारे लिए सिद्धलोक का निर्माण मगार पर कर दिया जिसे देखकर हम दंग रह गए। राळ्ळादेवी ने सारी स्वर्ण-मुद्राओं को पानी की

तरह नाश किया। हमारा यह लड़का तब उसने जो सरस्वती का भंडार हो खोलकर तुम्हारी मनोकामना परिपूर्ण की। तुम्हारी इच्छा के अनुरूप सहस्रों मनिकृत का कल्याण भी हुआ। हमारे लिए काम कुछ भी नहीं बचा होगा।

यह नागदेव मुस्कराए।

यह सारी बात सही है। पर सब आप की कृपा पर ही तो संभव हुआ। उस के वरद के रूप में ये सब महाकार्य हुए हैं।

अनिमध्या ने स्पष्ट किया।

अनि! तुम्हारी बातें पहेली सी लगती हैं। यह बड़ा गंवार है इस मन से पहेली बूझना क्या संभव है? जो कुछ कहना हो सीधे कहो तो कुछ समझें।

ऐसा नागदेव कह ही रहा था कि कुंकुमभ इन के संभाषण में सम्मिलित हुई।

गुरु! सुना न? तुम्हारी बहन कहती है कि मैंने उस पर बड़ी कृपा की है जिससे यह सब हो सका। मेरी समझ में नहीं आता कि वह कौन-सी कृपा है। यदि तुम जानो तो कहो।

— आश्चर्य व्यक्त किया।

क्या बात है भौजी?

आप मेरे लिए कुछ करना चाहते हैं। चाहते हैं कि कुछ करूँ। पर मैंने कहा कि अब तक आप जो कर चुके हैं वही पर्याप्त है। इससे अधिक और कुछ नहीं चाहिए। मेरे उत्तर सही है न?

— अनिमध्या बोली। और मुस्कराई।

ठीक तो है प्राणेश्वर! आप से मेरी बहन का बड़ा उपकार हुआ है। आप के अनुग्रह से ही उसका सम्मान बढ़ सका है।

— ऐसा कहकर कुंकुमध्व भी मुस्कुराई।

ओहो यह बात है! अनुग्रह से तुम्हारा मतलब समझ

लिया। गुड्डू, क्या तुम भी अनुग्रह चाहती हो? तुम्हारा भी सम्मान बढे।

नागदेव हंस पडे।

पहले मेरी बहिन को आप की गोद में अपनी भेंट चढाने का मौका दीजिए, तब विचार करें। बाद को हम अपनी बात सोचे।

-- ऐसा कहकर गुड्डुमब्बे हँस पडी।

फिर बहिन की ओर ममता भरी दृष्टि से देखती हुई बोली-

बहन, रहने दो ये बातें। अब बताओ और क्या इच्छा है?

गुड् ! एक बार शस्त्रागार देखने की बडी इच्छा हो रही है। क्या आप दिखा देंगे?

नागदेव से प्राथना की।

चलो! यह कौन बडी बात है!

कहकर दोनो देवियो को साथ लिए सीधे शस्त्रागार आ खडे हुए। वहाँ हजारो तेज तलवारें थी। उनकी चमक चकाचौंध कर देती थी। अत्तिमब्बे ने एक को हाथ में लेकर उंगुली से धार की जाच की। उसको कमान से झुकाकर परीक्षा ली। क्षणभर नागदेव और गुड्डुमब्बे ने तलवार चलाकर वीर रस का दृश्य सजाया। तलवारें चचला सी चमक रही थी। बिजली से टूटकर गिरती थी। इन की नाना भंगियाँ देखकर अत्तिमब्बे चमत्कृत रह गई। मृत्यु देवता की जीभ-सी लगनेवाली तलवारो को यथास्थान रखा। तब भालो पर अत्तिमब्बे की दृष्टि गई। उसके इशारे पर नागदेव गुड्डुमब्बे के साथ भालो से कुछ देर खेलते रहे। अत्तिमब्बे परीक्षक के समान खडे खडे निरीक्षण करने लगी। ऐसे ही गदा उठाकर नागदेव और गुड्डुमब्बे नें भीम दुर्योधन के गदायुद्ध का अभिनय किया। वहीं स्थित धनुष उठाकर उसकी डोरी बांध दी और टंकारा। तब ऐसा लगा मानो बीन का तार सहसा टूटा हो। ऐसे ही शस्त्रागार के नए नए शस्त्रास्त्रो

की पूर्ति न करके अभिमन्यु हर्ष विभोर हुई।

धनि ! समझ गया था कि तुम केवल भावनालोक में विहार करनेवाली कामिनी मात्र हो। अब मेरी धारणा गलत निकली। पता चला कि तुम्हारी साहसिकता कम नहीं हुई है। सोच रहा था कि तुम कैसे कवियों को या किसी कवि को जन्म दे सकोगी।

— नागदेव ने अपने मन की बात कहकर चुटकी ली।

क्या कहा मेरी गोद से कोई कवि जन्म लेगा ? धन्य भाग !

अभिमन्यु आनंदित हुई। उस का हर्ष मुख पर अंकित था।

क्यों तुम्हारी संतान मेरे जैसा पराक्रमी सिर्फ बनना चाहिए ! समझी न

नागदेव ने अपनी इच्छा प्रकट की।

वह भी हो प्रियतम ! मेरा पुत्र कवि भी हो और कवि (वी) भी हो।

अभिमन्यु ने कहा।

क्या कहा कवि और कवि ? अर्थात् वह न केवल कलम के धनी हो बल्कि तलवार के भी धनी बने ! खूब ! कल्पना बड़ी सुन्दर है।

—नागदेव हंसा। शायद नागदेव ने सोचा होगा कि ये दोनों गुण कभी एक में नहीं रह सकते।

क्यों ऐसे सकते नहीं है ? राम देव को देखिए। वे क्या महाकवि और महा पराक्रमी होते नहीं है ? कवि होने से यह नियम नहीं कि वह सदा कलम ही घिसता रहे।

—और एक बात प्राचीन कवियों के काव्यों का रसास्वादन करनेवाले सहृदय भी एक अर्थ में कवि कहे जा सकते है। उदाहरण के लिए आप ही को लें। और मैं। चाहती है को हमारे हमारे प्रतियों के एक काव्य को बनाकर पौटना चाहती है। वह किस

कवि की कल्पना से कम है ? कवि को महा सौध कहे तो प्रकाशक उन सौधो की नीव है। और सहृदय समूह उन सौधो के कलश है। आप दोनो कवियो के आश्रयदाता ह। इस पर बडे सहृदय है और काव्य रस रसिक हैं। कवि, प्रकाशक और सहृदय तीनो सारस्वत लोक के रत्न-त्रय होते हैं। रस प्रवाह का त्रिवेणी-सगम है।

— इस प्रकार गुडुमव्वे ने भावावेश मे आकर कवि शब्द की व्याख्या की।

तब तो मैं अपने को आडदा महाकवि कहने लगू तो क्या हज है ?

कहते हुए नागदेव ने अपने पीठ ठोक लिया।

क्यो नही ?

गुडुमव्वे ने हँस कर जवाब दिया। उसकी हसी मे हँसी मिलाते हुए नागदेव बोले —

पर एक बात ! मैं रनवास का महाकवि हूँ। किसी राज दर्बार का नही।

ठीक तो है प्राणनाथ ! गुड मुझसे बडी चालाक है।

अत्तिमव्वे ने कहा।

जीजी ! तुम चाद हो तो मैं सागर हूँ - समझी।

— गुडुमव्वे ने स्पष्ट किया।

तब ! तुम दोनो देवियो के बीच मेरा कोई स्थान नही ?

— नागदेव ने घबडाए हुए से सशय व्यक्त किया।

आप का स्थान ? वह तो यहाँ है ?

गुडुमव्वे अपने हृदय की ओर दिखाते हुए हस पडी।

मेरी बात सुनो ! तुम सागर हो और अत्ति चद्र ! पर मैं क्या हूँ।

तुम ? सागर में तरग और चद्र मे चद्रिका।

— गुणमञ्जरी ने मुस्कराकर उत्तर दिया।

गुड्डू! तुम्हारी यह उपमा ठीक नहीं बैठती है।

— नागदेव ने आक्षेप उठाया।

कोई अच्छी उपमा हो तो महाकवि ही बता दें!

— दोनों देवियों के मुँह से सहसा निकल पड़ा।

तब अन्य नाथ! तुम दोनों ने मुझे महाकवि मान लिया है। महाराजा ने भी मुझे बड़ा वीर माना है। तो मैं वीर महाकवि हूँ!

— नागदेव ने गंभीर स्वर में कहते हुए सिर हिलाया।

पर प्रभु की उपमा तो धरी रह गई।

मतिमञ्जरी ने छेड़ा।

अच्छा! अति! भूल गया था। क्या कहा था गुड्डू ने? तुम भी चाँद न! तुम चंद्र हो तो मैं कमल हूँ। और तुम सागर हो तो मैं गागर हूँ!

— मतिमञ्जरी और गुणमञ्जरी दोनों हँस पड़ीं।

❖ ❖ ❖

विजयपुर में बड़ी धूम थी। उत्सव का महल मानो स्वर्गलोक बना था। सभी स्त्रियाँ अपने नन्हें नन्हें बच्चों को कंधों पर सुलाकर खास उस महोत्सव के लिए बने हुए मण्डप में बैठ गई थीं। मण्डप के बीचोंबीच चाँदी की जंजीरों से लटके हुए सोने के झूले में मतिमञ्जरी का बच्चा झुलाया गया था। नामकरण संस्कार का महोत्सव था।

वाह रे बच्चा! जन्म से ही तू इतना उदार और मिलनसार। तभी तो समवसरण बच्चों को बुला लिया है।

सभी निमन्त्रितों को प्रीति भोज दिया गया। सब बच्चों को

एक एक बाँस की डोली, सोने की चमसी, चादी का प्याला, दिया गया । प्रत्येक माँ अपनी अपनी सतान गोद में लिए अत्तिमब्बे को देखने आई और उसके बेटे को असीस दिया । बच्चो को ऊनी ओढनी और मखमली दरी देकर अत्तिमब्बे ने कृतज्ञता प्रकट की। साथ ही साथ प्रत्येक साध्वी के आँचल को मुट्ठी भर सोने की मुहरो से भरकर विदाई दी।

माँ, तुम सचमुच इन शिशुओ की माँ हो । तुम्हारी गोद सदा भरी रहें। तुम्हारी सौ सतान हो और सौ सौ साल तक जीए तुम्हारी सतान भी तुम जैसी कल्पलता बनें ।

वे सतुप्ट होकर ऐसे आशीर्वाद देती और विदा लेती।

अत्तिमब्बे सबसे मिलकर प्रीति से कहती –

देखो बहन, तुम अपना स्वास्थ सभालो । बच्चे को कुछ कष्ट होने न दो। निस्सकोच तुम मुझसे जब चाहे आकर मदद ले लो। इन दो-तीन महिनो में घी आदि की कमी नही होनी चाहिए, समझी न ? कुछ कमी हो तो कहला भेजो। कम से कम कष्ट में इस बहिन को याद करना। ऐसा कहकर विदा करती थी ।

ऐसी ममतामयी बात सुनकर स्त्रियो का हृदय आनद से भर उठा।

तुम सचमुच देवी हो देवी ! गरीबो से कौन सहानुभूति दिखाता है और उनका दुख दद सुनता है ? माँ, जब से तुम्हारी गोद भरी तब से इस नगर में गरीबी की कमर टूट गई है। तुम्हारा बेटा राजा बने ! हमारा कष्ट सदा के लिए मिट गया है।

घर लौट जाते जाते स्त्रियाँ आपस में बोलने लगी –

अत्तिमब्बे बडी तपस्विनी है सुनती हैं कि इसे द्रौपदी का अक्षयपात्र मिला है। नही तो कहाँ से इतने लोगो को देने के लिए इतना धन आता ? दोनो हाथो से उलीचती जाती हैं । खैर हम गरीबो का

आखिर तो अन्न खाना और तन ढाँकने को कपड़ा मिले तो बस। चाहे तो महल-राज वे अपने पास ही रख लें। सिंहासन उन्हीं का रहे। छत्र चामर आदि भी उन्हीं का हो। हमारे लिए तो सूखा खाना और चार कपड़ा भर मिले तो काफी है।

एक ने कहा।

किसी दूसरी ने कहा

सुनती हूँ कि प्रतिदिन मणिमञ्जरी की पूजा किया करती है और प्रार्थना करती है कि गरीबों का कष्ट दूर हो। तब उठकर पारिजात वृक्ष को हिलाती है तब वहाँ फूलों के बदले सोने की झड़ी लगती है। सच!

भला किस से सुना यह किस्सा?

—और एक ने उत्सुकता से जिज्ञासा की।

मेरी पड़ोसिन इन के यहाँ नौकरानी है। परसों उसीने कहा था। कहती है कि कभी कभी वह विद्युल्लोक जाती है। सच! एक बार उसे भी अपने साथ विद्युल्लोक ले गई थी

अपनी बात का जोरदार शब्दों में समर्थन कर दिया

मणिमञ्जरी का बच्चा आगे चल कर हमारा राजा होगा। अभी से अपनी सेना जुटाने लगा है। आज जितने बच्चे वहाँ आए थे वे आगे चलकर अपनी अपनी योग्यता के मुताबिक कोई मंत्री कोई अमात्य कोई अधिकारी बनेंगे। मैंने तो अपने मुन्ने का सिर उसके चरणों में झुका दिया। कौन जाने भविष्य के गर्भ में क्या क्या छिपा पड़ा है?

—एक ने अपने बच्चे के भविष्य का स्वप्न देखने का प्रयत्न किया।

एक बात तो बहिन तुमने ठीक कहा। अवश्य यह राजा बनेगा। मेरी तो यही प्रार्थना है कि वह दिन जल्दी आवे। जन्म लेते

लेते जो गरीबो की सुध लेनेवाला हो वह क्या राजा बनने पर किसी को भूलेगा ? अभी देखो बरसो तक हम आराम से रह सकती हैं। उन्ही की दी गई गाय है ! कपडा है। काफी धनराशि भी मिली है। अब चैन की बसी बजती रहेगी !

अरे पगली ! यह चैन की बसी कितने दिनो तक बज सकेगी ? कुछ सोचा है ?

और एक ने छेडा।

क्यो दूसरा बच्चा होने तक ही सही।

— दूसरी ने उत्तर दिया।

पगली कही की ! कितने दिनो तक ? यो क्यो पूछती हो ? नकद जो कुछ मिला है उससे साल दो साल तो कट ही जाएँगे और तब यह सोने की चमसी बेचा जाय तो और कुछ दिन काट सकेंगे। इस गाय को भी बेच डाले तो और कुछ दिन चलेगा। फिर वही जाने का मौका मिलेगा जहाँ से यह अब मिले। ऐसे सौ सौ मौका मिला करें ! हम गरीबो के भाग्य मे खाली हाथ रहना क्यो न बदा हो पर उनका घर फूले फले और सदा भरा रहे !

सबने इसका अनुमोदन किया।

अत्तिमब्बे के पुत्र का नाम अण्णिगदेव रखा गया। सुहागिनियों ने बच्चे को गोद में उठा कर प्यार से एक एक अग का चुम्मा लिया और पुचकारा। वह मानो मर्त्यलोक की ममता देख किलकारियाँ भरने लगा।

मुन्नू ! त् अभी से किलकारियाँ करता है ? क्यो ?

— एक ने बलैय्या ली।

मानो यह साक्षात् जिनबिब है। अभी अभी इस लोक मे

आया। आते ही उसने कितनी धूम मचाई है। बेटी पुराणों में गर्भावतरण और जन्मावतरण का वर्णन सुना था। अब इसने प्रत्यक्ष करके दिखला दिया।

यह सुनकर अत्तिमब्बे ने प्रसन्न होकर कहा —

यह सब आप की कृपा है।

मेरे बेटे। अभी से घर में ऐसी लूट मचायी है। न जाने आगे क्या कर बैठेगा।

— एक ने प्यार से उसका चुम्मा लिया।

बच्चे का हाथ उस समय उस महिला के कण्ठहार से लगा। उसे बच्चे ने पकड़ लिया। तब शिकायत के स्वर में अत्तिमब्बे से बोली —

देखो बेटी! यह अभी से मेरे कण्ठहार छीन लेना चाहता है।

— कहती हुई उसे बच्चे के गले में पहना दिया।

अत्तिमब्बे मना करती रह गई।

देखो बेटी! तेरा यह मुन्ना देना भी जानता है और लेना भी।

— और एक ने कहा और अत्तिमब्बे को हँसाया।

हाँ माँ को पता है न यह। पर रंग बाप का ही है।

पर मैं समझती हूँ कि नाक दादी की-सी है।

यह पैर! हाँ हाँ दादा जी का ही है।

— इस प्रकार बच्चे के वर्णन में कई सुहागिनें लग गई थीं।

देखो दादी। तुम्हारा यह लाडला स्त्रियों के गले पर अभी से हाथ धरता है।

एक बड़ी महिला ने पद्मब्बे से कहा।

पद्मब्बे ने क्रोध का अभिनय करते हुए डांटा

तुम किसे दादी कहती हो? देखो मेरे दांत गिरे नहीं हैं? मेरी कमर सीधी है?

जाने दो दादी। जब बहू ने बेटे को जन्मा तभी से तुम दादी बन गई। तुम्हारे दांत और कमर की बात रहने दो। क्या अब नवेली बन सकोगी ?

— पहली स्त्री ने अपनी बातों का समर्थन किया।

खैर ! मैं अपने मुन्नू की दादी हूँ। दुनिया भर की दादी थोड़े ही हूँ।

पद्मव्वे ने उसी धुन में कहा।

रहने दो दादी ! तुम्हारे मुन्नू से ही पूछ लो। ऐसा कहती हुई बच्चे को गोद में लेने गई तो उसने सहज ही पैर उछाल दिया। मानो गोद लेनेवाली को लात जमा दी।

हाय रे बाप ! यह देख, मुझे लात मारता है !

वह बोल उठी।

देखा ! तुम लोगों का मुझे दादी कहना यह पसंद नहीं करता है। समझी ? मैं केवल मेरे इस मुन्नू की दादी हूँ। अकेले मुन्नू की।

-- पद्मव्वे इसे गोद में लेकर इठलाने लगी।

ठीक है, अब अकेले मुन्नू की दादी हो और ------

एक ने छेड़ा।

तुम बड़ी चुड़ैल हो

पद्मव्वे ने उसे डाटते हुए बच्चे को डोली में सुलाकर डोरी पकड़ने का प्रयत्न किया।

सब ने बच्चे को बारी बारी से झुलाया।

अण्णिगदेव को भेंट के रूप में ढेर के ढेर सोने या चांदी के कटोरे, तश्तरी, प्याले कंगन खिलौने आदि आये। जैसे यात्रार्थी अपने आराध्य के सम्मुख अपनी गाढ़ी कमाई न्योछावर कर जाते हैं उसी प्रकार अण्णिगदेव के सम्मुख सब की भेंटों की बौछार होने लगी। कपड़े लत्तों की बात कौन कहे ? नगर भर के लड़कों में बाँटने पर भी

चालुक्ये माता में बहुधन आता। सोने के न जाने कितने हिंडोले भेंट में आए। राजा महाराजाओं की ओर से भी हैसियत के मुताबिक भेंट आई थी।

अत्तिमब्बे को कहीं बहुत थकावट न हो यह सोचकर गुड्डमब्बे उस के स्थान में जाकर बैठ गई और अत्तिमब्बे को आराम लेने दिया। पर यह रहस्य किसी की समझ में नहीं आया। सब पूर्ववत् दानशील्य चलता रहा।

सभी जिनालयों में विशेष पूजा-पाठ हुआ। बच्चे का जन्म जिस दिन हुआ उस दिन से पंचकल्याण आदि महोत्सव मनाए गए और जिनमूर्तियों की स्थापना कराई गई। अण्णिग देव का तुला भार सोने से कराया और दस-एक मंदिरों को उसके वजन भर सोना भेंट किया। इतना करने पर भी संपत्ति जरा भी कम नहीं हुई भला जहाँ एक देने पर दो दो आवें तो घाटा कैसे हो? अण्णिग के जन्मोत्सव पर दल्लप ने लाखों खर्च किया। दोनों हाथों लूट दिया। पर नामकरण के अवसर पर भेंट के रूप में दुगुना जमा हो गया। महासागर हमेशा उदार होता है। मेघों के द्वारा अपनी संचित जलराशि को घर घर गली-गली नगर नगर ले जाकर बरसा देता है। इस बहाने सारे संसार को सुख शांति का संदेश भेज देता है। पर कुछ दिनों में सारा जल इधर उधर बहते भटकते अंत में उसी सागर में आ समाता है।

अत्तिमब्बे साक्षात् उदारता की पुतली थी। उसका तो राजयोग था। वहाँ लोभ का नाम नहीं था संपत्ति की कमी नहीं थी। जहाँ लोभ नहीं संपत्ति छाया भाँति की रहती है यह बात चरितार्थ हुई थी।

दसवी सदी के प्रारभ मे चालुक्य राष्ट्रकूट के अधीन थे। राष्ट्रकूट और गग परस्पर सहयोग रखते आए थे। अतएव दोनो की श्रीवृद्धि हो रही थी। गगवशज मारासिह मानो शत्रुओ के लिए सिह ही था। उसका अमात्य था चामुडराय। यही सेनाधिपति भी था। इसे समर-परशुराम और अरिभयकर आदि कहा करते थे। राष्ट्रकूटो का कर्क स्वय दुर्बल था। अतएव गगो के कृपा-बल पर राज्य करता था।

यद्यपि राष्ट्रकूट और चालुक्यों में नाता-रिश्ता था, फिर भी कभी कभी आपस में सघर्ष भी कर बैठते थे। अरिकेसरी द्वीतीय के जमाने मे रष्ट्रकूटो में परस्पर फूट पैदा हुई। गोज्जिग ने अपने बडे भाई को सिहासन से उतार दिया और स्वय राजा बन बैठा। वह प्रजा पीडक बन कर कुख्यात हुआ। तब अरिकेसरी द्वितीय ने विवश हो कर गोज्जिग पर धावा किया और उसे हराया। राष्ट्रकूट साम्रज्य के उत्तराधिकारी के रूप में गोज्जिग के चाचा बद्देग को अभिषिक्त किया। तभी से अरिकेसरी राष्ट्रकूट प्रतिष्ठापनाचाय नाम से प्रख्यात हुए। कृष्ण तृतीय के जमाने में राष्ट्रकूट साम्राज्य सुभद्र था, पर जब कृष्ण का पुत्र सिहासन पर बैठा तो साम्राज्य में विघटन-कारी शक्तियाँ बल पकडती गई। परिणामत राष्ट्रकूट और चालुक्यो के सबध साम्रज्य की सीमा में कभी कभी सघर्ष होने लगा।

तैलप के हितैषियो ने सलाह दी स्वामिन्! आप जितना सतर्क रहें उतना कम है। राष्ट्रकूट जैन हैं और आप के सचिव और सेनाधिप भी जैन हैं। अब लडाई में कही धोखा दे बैठें तो बडा अनर्थ होगा। समझिए सर्वनाश हो जाएगा।

उसके उत्तर में तैलप ने कहा था जिसके बारे में यह कह रहे हैं? और किससे? चालुक्य साम्राज्य की नींव किसने डाली? हम यद्यपि इसके शासक हैं पर सोचिए इस साम्राज्य का हाथ उनके हाथ में अबतक सुरक्षित रहा है। अबतक हमने जैनधर्मावलम्बियों में राष्ट्रद्रोह की गंध तक नहीं पाई है। अपने धर्म के प्रति आस्था रखते हैं तो योग्य ही है। अतः इस नाते उन पर सन्देह नहीं करना चाहिए। आप अपनी बात मन में ही रखे रहिए। किसी के सामने कहने का साहस न कीजियेगा।

इधर मन्त्रालोचन करने के निमित्त वस्तुपाल और मालप को बुलाया गया और वे तुरन्त आ उपस्थित हुए।

अब राष्ट्रकूटों से युद्ध अनिवार्य बना है। आप में से एक पर राजधानी की रक्षा का भार होगा। दूसरे को रण क्षेत्र का भार सम्भालना पड़ेगा।

— तैलप ने अपना आदेश सुनाया।

श्रीमान जी! यदि आप अन्यथा न मानें तो मैं अपने मन की बात कह देना चाहता हूँ।

— वस्तुपाल ने बड़े संकोच से प्रार्थना की।

वस्तुपाल जी! बात यद्यपि अप्रिय है पर हमने सदा आपको सच और अनुभव देखकर अपने हित-कुशल ही माना है। आप अपने विचार निस्संकोच कह सकते हैं।

भगवन्! परिस्थिति बड़ी गम्भीर और कठिन है। युद्ध में हार हो या जीत दोनों के लिए तैयार तो रहना पड़ेगा। जय हुई तो कोई बात नहीं पर कहीं हार गए तो समझिए कि सारा लोक हमें अपराधी ठहराएगा।

— वस्तुपाल की बात बीच में ही रुक गई।

वस्तुपाल जी कहिए। आप अपने मन की बात कह डालिए तो—

तैलप ने व्यग्रता दिखाई ।

अब राज्य के सब पदाधिकारी जैन हैं। सेना मेरे पुत्र के अधीन है। कही कुछ हुआ तो हम बदनाम होगे। सारा जैन-समाज बदनाम होगा। लोग कहने लगेंगे कि जान बूझ कर हम राष्ट्रकूटो से मिले, इस हार में इनके हथकडा है आदि कह कर निदा करने लगेगे। राष्ट्रकूट भी जैन हैं और उनके सहायक गग भी जैन हैं। उनसे युद्ध करने मुझे और मेरे पुत्र को ही जाना होगा। हम भी जैन हैं। अतएव आप कुछ दिनो के लिए सचिव एव सेनापति पद से जैनो को निवृत्त कर दीजिए। इस प्रकार प्रभो हम को बदनाम होने से बचाइए।

दत्तलप ने साग्रह प्रार्थना की।

मल्लप जी, आप अपना मत बताइए ।

तैलप ने उनकी तरफ मुडकर उन का भाव ताडने के लिए पैनी दृष्टि से देखा।

प्रभो ! आप जानते हैं कि मेरे भाई ने आप के लिए प्राण-त्याग किया है। मैं और मेरे पुत्र चालुक्य साम्राज्य के सेवक हैं। इतना होते हुए भी परिस्थिति को देखते हुए कहना होगा कि यह बडी नाजुक है। अपने विचार में सब जैन पदाधिकारियो को नजर बध कर रखना योग्य है। अब की बार युद्ध की बागडोर अपने हाथ मे सभालिए। मानव मन का क्या भरोसा। कौन जाने कब किस प्रलोभन में आकर वह पलट खाएगा ?

इस प्रकार मल्लप ने अपनी समझ मे अमूल्य सलाह दे दी।

आप दोनो समधी है न ? बडे मचिवोत्तम हैं ! बडी योग्य सलाह है ! धन्य भाग !!

-- कहकर तैलप ठठाकर हस पडे।

फिर बेचैनी से उठ खडे हुए और बोले

दत्तलप जी, हमने पहले ही कहा है कि आप हमारे लिए

पितृ-तुल्य हैं। आपही ने हमारा पालन पोषण किया है। वस्तुतः भी समझिए कि आप हमारे चाचा हैं आप का पुत्र भावदेव हमारा ममेरा भाई है। अब यदि आप युद्ध करना नहीं चाहते हैं तो एक काम कीजिए हमीं को कारागृह में भेज दीजिए। चालुक्य साम्राज्य अभी को राष्ट्रकूटों के हाथ सौंप दीजिए। औरों की सहायता से लब्ध होनेवाली जय की अपेक्षा अबतक हमारे आत्मीय रहकर हमें महाराजा की गद्दी पर बिठाकर, हमारे यश के लिए कारण बने हुए आप लोगों के सम्मिलित होकर धोखा देने पर मिलनेवाली हार हमारे लिए श्रेयस्कर है। इस हार को हम अपना महाभाग्य मानेंगे। अब युद्ध सन्निहित है। हम किसी को भी पदच्युत करना या [illegible] नहीं चाहते। देश आप के हाथ में है। आप धोखा ही देना चाहें तो कौन रोक सकता है?

इतना कहकर तैलप तेजी से चले गए।

⊠ ⊠ ⊠

नागदेव महा साहसी था। एक बार युद्ध के हाथी पर गदा प्रहार करके उसका कुम्भस्थल तोड़ डाला था। इस साहस कार्य से प्रसन्न होकर तैलप महाराजा ने नागदेव को भरी सभा में 'भ मल्ल' की उपाधि देकर सम्मानित किया था। कई लड़ाइयों में नागदेव के कारण ही तैलप विजयी बन सके थे।

एक बार की घमासान लड़ाई में एक बात हुई। तैलप की सेना परास्त होकर भागने लगी। तब नागदेव केवल बलपति था। तैलप ने उसे बुलाकर अपनी समस्त सेना का सेनानी बना दिया। नागदेव ने ऐसा साहस दिखाया कि युद्ध का पासा ही पलट गया। वह शत्रुओं को [illegible] मूली के समान काटकर फेंकता था। विपक्षियों की सेनाएँ अब

लडाई करने आई तो घडी दो घडी के अदर अपने असीम पराक्रम से उन्हें केले की भाति काट काट कर मैदान को पाट दिया था। उस समय दुश्मनो को लग रहा था कि अब खैरियत नही है। भाग जाना भी मुश्किल है। उन्होने विवश होकर कई मतवाले हाथियो के साथ एक दम हमला किया। वे चिग्घाडते हुए नागदेव पर झपटे। नागदेव को पकडने के लिए वे अपनी सूंड ऐसे हिला रहे थे मानो कृष्णसर्प चारो ओर से आ घेर रहे हो। नागदेव अग्निपर्वत सा जाज्वल्यमान था। दोनो हाथ में तलवार लिए उन सूंडो को काट काटकर गिराना शुरू किया। जिस हाथी की सूंड कटती वह चिग्घाडते चिग्घाडते अधा धुध भागने लगता। आपस में टकराकर गिर पडते। गज-सेना की हिम्मत छूट गई। शत्रुओ के छक्के छूट गए। कटी हुई सूंड चटपटा रही थी। लहूलुहान हो गई थी। नागदेव की तलवारें आग की लपटो के समान चमक रही थी। कोमर युद्ध में जय-वधू ने तैलप के गले जयमाला पहना दी। तभी प्रसन्न होकर तैलप ने नागदेव को 'दिग्गज' की खिल्लत दी और सम्मानित किया।

दिन व दिन नागदेव की पद-प्रतिष्ठा बढने लगी। पाचाल सेना-सागर के लिए वडवानल बनकर नागदेव ने विजय प्राप्त की थी। करहट में मल्लप का मुकविला करके सुभट-त्रिनेत्र बन विराजमान हुआ। नागदेव के चरण-चिन्ह देख कर विजय-श्री उसके पीछे पीछे जाने लगी। नागदेव ने न कभी हिम्मत हारी न कभी हार ही इनके पाले पडी।

ऐसे साहसी का समादर करके, स्नेह सपादन करके तैलप ने उसका उत्साह बढा दिया था और उस में राज-भक्ति की जड जमा दी थी।

मल्लप और मानदेव दोनों के लिए यह परीक्षा का समय था। राष्ट्रकूट और उसके सहायक गंग दोनों जैन थे स्वयं जैन होते हुए उनसे लोहा बजाना था। अतएव दोनों ने अपने अपने पुत्रों को बुला भेजा। उनके साथ दोनों ने अलग अलग विचार किया। उनका अभिमत जानना चाहा।

पिताजी! युद्ध क्षेत्र में कौन अपना होता है? यदि इस अवसर पर हम अस्त्र-ग्रहण नहीं करें तो अब तक जो कुछ किया है सब व्यर्थ हो जायगा। सच पूछा जाय तो धर्म और राजनीति में गड़बड़ नहीं करना चाहिए। अब तक हमें आश्रय देकर पद और प्रतिष्ठा देकर सम्मान किया है तो चालुक्यों ने। भला राष्ट्रकूटों ने हमारे लिए तो क्या किया है? अब राष्ट्र ऋण चुकाने का मौका आया है तब धर्म के बहाने हम पीछे हट जायें? तब तो हम न घर के होंगे न घाट के। इधर-उधर दोनों से भ्रष्ट हो जाएँगे। जैन धर्म ने कहाँ राष्ट्रद्रोह करने का आदेश दिया है? अपने वैरी से डरकर भागने का आदेश गृहस्थों को महावीरस्वामी ने दिया है! मैं मर सकता हूँ पर बदनाम नहीं बन सकता। क्या नमक हराम बन कर नारकीय कीड़ा बनूँ?

मानदेव ने इस प्रकार अपना अभिमत सुना दिया।

मल्लप के पुत्र भी राष्ट्र निष्ठा में अद्वितीय थे। राष्ट्र की पुकार पहले सुनी जाय बाद को और कुछ—इस निश्चय के साथ राष्ट्रकूटों के मुकाबिला करने का संकल्प किया गया।

अत्तिमब्बे का पुत्र एक साल का था। अण्णिगदेव घर घर आँगन के बीचे हाथों हाथ जाता आता रहा कभी दादी की पीठ पर सवार होकर बंधवाता कभी मानदेव को देखकर बापू जी बापू जी कह उसके कन्धों पर चढ़ बैठता और ताली बजा बजाकर किलकारियाँ भरता था। गुंडमब्बे और अत्तिमब्बे दोनों को माँ कह देता। यह

सुनकर लोग हँसते, फिर भी वह बुरा नही मानता था। उसका अरबराकर चलना क्या ही अच्छा लगता था। दल्लप को देखते ही उसे घोडा बना कर सवारी का खेल खेलता था। दल्लप को झुकना ही पडता था। वह पीठपर सवार हो जाता, पद्मव्वे दौडे दौडे आती और मुन्नू को सँभालती ताकी वह लुढक नही जाय। गुडुमव्वे और अत्तिमव्वे इस दृश्य को देखकर फूले नही समाती थी। क्योंकि नटखट घोडे के समान उस समय दल्लप का उछलना और कूदना क्या ही अच्छा लगता था। चालुक्य साम्राज्य के अमात्य और सेनाधिपति अण्णिगदेव का वाहन बन कर खेलते थे।

एक बार तैलप के यहाँ उसे ले गए थे। तब अण्णिगदेव तैलप को ही घोडा बनाने का आग्रह करते हुए मचल पडा था। बच्चे का मन रखने के लिए वात्सल्य-हृदय तैलप ने घोडा बन कर खेला भी था। अण्णिगदेव का जन्म दिन से दल्लप का घर स्वर्ग सदृश बन गया था। सदा हर्षोल्लास की तरह उठती रहती थी। घर का सर्वाधिकारी मुन्नू बन गया था। मुन्नू के सार्वभौम अधिकार में किसी को हस्तक्षेप करने का हकनही था। सच तो है कि बच्चो के साथ खेलते समय चाहे कोई राजा हो या मत्री अपना व्यक्तिगत स्थान-मान पद-प्रतिष्ठा आदि भूलकर तन्मयता से खेलने में ही तो आनद है। इससे बढकर घर में सुख सतोष और क्या होगा?

एक बार नागदेव पत्नी और पुत्र के साथ उपवन गया वहाँ बच्चे को पेड की छाया में बिठाकर स्वय पत्नियो के साथ। आँखमिचौनी खेलने लगा। कभी कभी बदरो के समान पेड पर चढते, छलागे भरते। इन को एक पेड से दूसरे पेड पर कूदते देख कर स्वय बदर भी लजा जाते। अण्णिगदेव के आनद की सीमा ही नही रहती। माता पिता को देखकर स्वय छोटे छोटे पेड पकडकर उछलना और कूदना था।

एल्लप और मल्लप दोनों के लिए यह परीक्षा का समय था। राष्ट्रकूट और उसके सहायक गंग दोनों जैन थे स्वयं जैन होते हुए उनसे लोहा बजाना था। अतएव दोनों ने अपने अपने पुत्रों को न्यूता भेजा। उनके साथ दोनों ने अलग अलग विचार किया। उनका अभिमत जानना चाहा।

पिताजी! युद्ध काल में कौन अपना होता है? यदि इस अवसर पर हम शस्त्र-ग्रहण नहीं करें तो अब तक जो कुछ किया है सब व्यर्थ हो जायगा। धर्म पूछा जाय तो धर्म और राजनीति में मिलाव नहीं करना चाहिए। अब तक हमें आश्रय देकर पद और प्रतिष्ठा देकर सम्मान किया है तो चालुक्यों ने। भला राष्ट्रकूटों ने हमारे लिए तो क्या किया है? अब राष्ट्र ऋण चुकाने का मौका आया है क्या धर्म के बहाने हम पीछे हट जायें? तब तो हम न इस घाट के होंगे न उस घाट के। घर पर दोनों से भ्रष्ट हो जाएंगे। जैन धर्म ने कहाँ राष्ट्रद्रोह करने का आदेश दिया है? अपने वैरी से टक्कर लेने का आदेश गृहस्थों को महावीरस्वामी ने दिया है। मैं मर सकता हूँ पर बदनाम नहीं बन सकता। क्या नमक हराम बन कर नारकीय कीड़ा बनूँ?

नागदेव ने इस प्रकार अपना अभिमत सुना दिया।

मल्लप के पुत्र भी राष्ट्र निष्ठा में अद्वितीय थे। राष्ट्र की पुकार पहले सुनी जाय बाद को और कुछ—इस निश्चय के साथ राष्ट्रकूटों के मुकाबिला करने का संकल्प किया गया।

अत्तिमब्बे का पुत्र एक बालक सा था। अण्णिगदेव घर भर के जैसे हाथों हाथ आता जाता रहा कभी हाथी की पीठ पर सवार होकर खेलता कभी नागदेव को देखकर चाचू जी चाचू जी कह उसके कंधों पर चढ़ बैठता और ताली बजा बजाकर किलकारियाँ भरता था। गुंडमब्बे और अत्तिमब्बे दोनों को माँ कह देता। वह

सकता है सब कर रहे हैं। एक प्रांत के राजा बना देने तक का प्रलोभन दिया है।

— नागदेव की बात बीच में ही रुक गई।

आपने क्या उत्तर दिया ?

— गुडुमव्वे ने कुतूहल से प्रश्न किया।

तुम दोनों की राय जानना चाहता हूँ।

— नागदेव ने कहा।

प्रियतम ! हमारी राय किस लिए ? क्या यह ऐसी कोई जटिल समस्या है कि हमारी राय लेकर ही उत्तर दें ? जान लीजिए आप की इन दो सुंदर स्त्रियों में कोई एक को माग बैठे तो क्या हमारी राय लेकर उसे जवाब देने की बात सोचिएगा ?

— गुडुमव्वे की बात कुछ कठोर ही थी।

देव, क्या हमें स्वामिद्रोह करके शत्रुओं का पक्ष लेना होगा ? तब क्या हमारा वंश रह सकेगा ? हम क्या जीने योग्य रहेंगे ? न ! न !! हमें उनका राज्य नहीं चाहिए ? क्या वह राज्य आचंद्रार्क टिका रहेगा ? शत्रुओं के छलके छुरा कर ही अपनी तलवार नीचे रखिए। नहीं तो देख लीजिए कि कौन आप का आदर करेगा और कहाँ आप का गौरव रहेगा ?

स्वामिन्! क्या ही अच्छा होता कि हम भी बंदर होते तब तो मुन्नू को भी साथ लेकर उछल सकते थे।

नागदेव ने गंभीरता से कहा।

प्रियतम! क्या इतना सा सुख पाने के लिए बन्दर बनें? क्या उसे भी अपने साथ लेकर थामने की इच्छा है? क्या भिखारिनों को अपने बच्चों को गोद में लिए फिरते नहीं देखा है? चाहे तो मैं भी अम्मि को ऐसे ही बांध के आ जाऊँगी।

— अतिमब्बे ने कहा।

नहीं यों ही कहा।

नागदेव ने ज्यादा उत्साह नहीं दिखाया।

प्राणप्यारे! आज आप अनमने क्यों हैं? आखिर बात क्या है?

— गुंडमब्बे ने कुतूहलवश प्रश्न किया।

ध्वनि में ममता और आत्मीयता कूट कूटकर भरी थी।

ठीक ताड़ा गुंडू! आज एक जटिल समस्या सता रही है।

नागदेव ने उत्तर दिया।

समस्या? जटिल? — अतिमब्बे ने आश्चर्य से दुहराया।

राष्ट्रकूटों से लोहा बजाना है।

संक्षेप में नागदेव ने कह दिया।

क्या तिमिमिंगल भी पानी से डरेगा?

गुंडू ने आश्चर्य प्रकट किया।

साम्राज्य का सामना करना है।

— नागदेव ने चिंतित मुद्रा बना ली।

संधि कर लीजिए — अतिमब्बे ने सलाह दी।

यह बात सोची गई। पर बात नहीं बनी। वे लोग मुझे राष्ट्रकूटों का पक्ष लेने के लिए फुसला रहे हैं। जो कुछ करते बन

सकता है सब कर रहे हैं। एक प्रांत के राजा बना देने तक का प्रलोभन दिया है।

— नागदेव की बात बीच में ही रुक गई।

आपने क्या उत्तर दिया ?

— गुड्डमब्बे ने कुतूहल से प्रश्न किया।

तुम दोनों की राय जानना चाहता हूँ।

— नागदेव ने कहा।

प्रियतम ! हमारी राय किस लिए ? क्या यह ऐसी कोई जटिल समस्या है कि हमारी राय लेकर ही उत्तर दें ? जान लीजिए आप की इन दो सुंदर स्त्रियों में कोई एक को मांग बैठे तो क्या हमारी राय लेकर उसे जवाब देने की बात सोचिएगा ?

— गुड्डमब्बे की बात कुछ कठोर ही थी।

देव, क्या हमें स्वामिद्रोह करके शत्रुओं का पक्ष लेना होगा ? तब क्या हमारा वंश रह सकेगा ? हम क्या जीने योग्य रहेंगे ? न ! न !! हमें उनका राज्य नहीं चाहिए ? क्या वह राज्य आचंद्रार्क टिका रहेगा ? शत्रुओं के छक्के छुड़ा कर ही अपनी तलवार नीचे रखिए। नहीं तो देख लीजिए कि कौन आप का आदर करेगा और कहां आप का गौरव रहेगा ?

अक्किमब्बे का विचार स्पष्ट था।

प्राणेश्वर ! कल ही आप कूच कर दीजिए। अब किसी से सलाह लेने की जरूरत नहीं है। हम अपने राष्ट्र के लिए सर्वस्व त्याग करने को सिद्ध हैं। युद्ध में काम आए तो वीर स्वर्ग प्राप्त होगा, विजयी हुए तो यहाँ सम्मान पूर्वक जिएँगे। दोनों दशा में आप की विशद कीर्ति अजर और अमर होगी। यदि अब आप कन्नी काटें या द्रोह कर बैठें तो न केवल आप बदनाम होंगे बल्कि आप की संतान निरंतर इस अपमान का शिकार बन जाएगी।

— गुणमञ्जरी ने निर्णय दे दिया।

प्रियतम आप बिना खाया पीया किए चले उठ आए। आप भग्नस्नेह हैं। क्या हम सुन्दरियों के प्रति स्नेह मात्र से आप निर्वीर्य बन गए? आप केवल बैठा बन कर रह जायें कभी हम यह पसंद नहीं करती। आप जिस सौंदर्य का इन आँखों से देख रहे हैं यह ढल जानेवाला है। मैं नहीं समझती कि सदमस्त क्यों युद्ध के अवसर पर मानिनियों की सलाह लेने के लिए आए। आप विग्मन हैं। आप समर विजेता हैं! युद्ध से आप क्यों कर पीछे हटेंगे?

— मतिमञ्जरी ने उत्साह बढ़ाने का प्रयत्न किया।

फूल से फूल पर उड़नेवाले भ्रमर के समान हर्ष चित्त होकर तीनों अपने अभिप्राय के साथ खूब टहलते रहे। कोकिल के समान कूक कर गुणमञ्जरी ने सब को चकित किया। मयूरी के समान अभिनय करके मतिमञ्जरी ने पति को रिझाया। रसोल्लास से भीगकर तीनों जिनालय गए। वहाँ भक्ति भाव से नमित होकर घर चले आए।

उस रात को बड़े आराम से बिताया। सवेरे नर्तन हुआ। मतिमञ्जरी ने ऐसा वीणावादन किया मानो स्वर-पुष्प बिखेर रही हो। परम संतुष्ट होकर नागदेव ने उसे दोनों हाथ में कसकर गले लगाया और तुम ही मेरी वीणा हो— कहते हुए उस से रम गया। जब गुणमञ्जरी ने वीणा के तार छेड़े तब नाद-तरंग ऐसी उमड़ उठी मानो ज्योत्स्ना सागर उमड़ पड़ा हो। तब दोनों बहिनों ने अभिनय किया। रूपवती थी नदी। बहती नदी से इठलाईं। संध्या की धूप में फन फैलाकर झूमनेवाली नागिनी सी झूम उठी।

नाथ! तुम दोनों की कला का पूर्ण रसास्वादन करने के लिए एक जन्म पर्याप्त नहीं है।

रसावेश में नागदेव ने कहा।

इसी लिए तो हम नित्य प्रार्थना करती हैं कि जन्म-जन्मान्तरों

ाँ आप ही हमारे पति हो।

ऐसा कहकर गुड्डमब्बे मुस्कुराई।

गुड्डू ! तुम्हारी बहिन की गोद तो भरी। अब तुम्हारी ..

नागदेव भी मुस्कुराए।

हम दोनो बहिनो के आप पति हैं न ? बस उसी तरह अण्णिग हम दोनो की सतान है समझिए । अब भी वह पहिचान नही सकता कि कौन गुड्डू और कौन अत्ति ! दोनो को माँ कहना है।

• गुड्डुमब्बे ने निश्चित होकर कहा ।

प्रियतम ! कल जय-यात्रा पर जाएँगे न ? अब आराम लीजिए ।

अत्तिमब्बे ने कहा।

अत्ति ! तुम मलय मारुत हो और गुड्डू चादनी रात है। यह अण्णिग वसत ऋतु है। ऐसे वातावरण में कहो किसे नीद लगेगी ? क्या बेचारी नीद तुम दोनो से भी अधिक प्यारी होगी ?

• नागदेव बोले ।

अब भले ही आप को थकावट महसूस नही हो । पर जब बिछुड कर जाएँगे तब की बात कहिए।

गुडमब्बे ने तर्क किया ।

गुड्डू ! घर पर मैं बालक सा रहता हूँ। बड़ी युद्ध के मैदान में पैर रखते ही आगा पीछा कुछ नही सूझता। वहाँ उगलते हुए अग्निवत बन जाता हूँ। वीणा हाथ में लेकर जैसे तुम दोनो इस लोक को भूल जाती हो इसी प्रकार तीरकमान हाथ में लेते ही तुम लोगो को भूल बैठता हूँ ।तलवार हाथ में लेकर चलूँ तो घासफूस के समान शत्रुओ को काटने के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नही।

-- इस प्रकार नागदेव ने वीरावेश में कहा ।

पौ फटी सी दिखाई देती है। अहा ! शीतल पवन का यह

स्पर्श क्या ही सुखद है। उठिए घड़ी दो घड़ी आराम कीजिए।

अत्तिमब्बे न स यह निवेदन किया।

अत्ति रतजगा करना निराहार रहना आदि मेरे लिए मामूली सी बात है। बिना नींद हफ्तों रह सकता हूँ। खाना पानी के बिना रह सकता हूँ। सुना है कि सौदागर मारवाड़ी को सौदा करते समय और किसीका ध्यान नहीं रहता है। वैसे ही जब मैं तुम दोनों के साथ रहता हूँ तो और कुछ ध्यान में नहीं आता अत्ति तुम मेरी नींद हो। गुंडू तुम मेरी भूख। और यह युद्ध मेरा खेल है।

— नागदेव की बातों से रसिकता बह निकली।

ओहो! आप सचमुच कवि बन गए हैं।

गुंडमब्बे हँसी।

मैं कवि भी हूँ और कठोर कर्मि भी।

नागदेव ने अभिमान से कहा।

सारी रात ऐसे ही गपशप में बित गई।

अगर जीवन में ऐसी रात एकाध ही मिले तो भी जीवन सार्थक है।

ऐसा कह कर अपनी प्रियतमाओं को छाती से लगाकर प्यार किया। तब तक अरुणोदय हुआ था। यह देख कर नागदेव ने कहा—

देखो एक भी रमणी पास रहे तो नींद बेचारी भाग जाती है तब तो दो ऐसी सुन्दरियाँ यहाँ तो कहना है क्या?

ऐसा कहकर उठा और अपना काम पर चला गया।

चालुक्य सेना ने समरोत्साह से कूच किया। रणवाद्य बज उठे। विन्ध्योपम हाथी हजारों की संख्या में आगे बढ़े। रथ के रथ तेल म स्नात थे। उत्साह से चिंघाड़ रहे थे। सवारों को देखने से समुद्र में उठनेवाली उत्तुंग तरंग-मालाओं का स्मरण हो रहा था। पदातियों के पदाघात से उठी धूल से आकाश छा गया।

और स्वयं दिशाएँ दिशाभ्रष्ठ हो गई ! शस्त्रों की चमक ने चकाचौंध कर दिया। यौवनोन्माद में धनुष टकार कर उठे। तरकसों में समृद्धि आ गई। चतुरंगिनी सेना मान्यखेट पर झपटने चली।

सेनापति की वरदी पहने नागदेव घर आए। सभी वृद्धों को नमस्कार करके आशीर्वचन पाया। जिनगंधोदक को रक्षामणि की भांति सिर पर धारण किया। वीरगीत गाती हुई अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे ने नागदेव की आरती उतारी और सिर पर वीराक्षताएँ डाली। और दृष्टि दोष दूर करने के लिए एक नारियल तोडने ले आई। नागदेव ने उसे हाथ में लेकर हथेलियों के बीच में ऐसा दबाया कि नारियल एक दम टुकुडा टुकुडा हो गया, पानी चू पडा ! पद्मब्बे इसे देख कर हर्षोन्माद में अपनी बहुओं को सबोधन करती हुई बोली–

देखो बहू, तुम्हारे पति की शक्ति कितनी है !

आप बाहुबली के समान अभिमान-धन बनें। शत्रुपर विजय पाकर आप घर लौटें। किसी भी कारण से आप का मन विचलित न हो ! आप विजय-वधू के साथ घर आइए !

— कहकर अत्तिमब्बे ने पति का उत्साह और बढा दिया।

आप लोकैकवीर अर्जुन-से लग रहे हैं। अर्जुन अजेय था, आप भी अजेय रहें। आप युद्ध में काल भैरव हैं। अवश्य अरिपुर भस्म करके मुख दर्शन दीजिएगा।

गुडुमब्बे ने कहा।

अण्णिगदेव को गोद में लेकर नागदेव कुछ क्षण तक खेलता रहा मानो गेंद खेल रहा हो। इस प्रकार सब से विदा लेकर सेनानी नागदेव सेना से मिलने गए। अत्तिमब्बे और गुडुमब्बे की दृष्टि उस पथ पर लगी रही जिस पथ से होकर नागदेव विजय-यात्रा करने निकले थे।

११

राष्ट्रकूटों में युद्ध की कोई विशेष तैयारी नहीं हुई थी। कृष्ण तृतीय के बाद शासन सूत्र भी ढीले पड़ गये थे। सेना में अनुशासन नहीं था। बहुत पुराना साम्राज्य था अतएव वह किसी भाँति चला आ रहा था। राष्ट्रकूटों के सामंत गंगों की शक्ति अभी अक्षुण्ण थी। दोनों वंशों में कई पीढ़ियों से रक्त-सम्बन्ध चला आ रहा था। गंगों का मारसिंह मानो कर्क का अंगरक्षक बना था। अन्दर ही अन्दर चालुक्य युद्ध की पूरी तैयारी करके अपने ऊपर धावा बोलेंगे यह बात न तो गंगों ने सोची थी न राष्ट्रकूटों ने ही। सागर के समान चालुक्यों की सेना आ गई है यह सुनकर कर्क सतर्क हुआ। सोच विचारकर मान्यखेट से निकला और दो-एक दिन में ही चालुक्यों को बीच में रोकने का निश्चय किया।

चालुक्य सेना का सेनाधिपति महा पराक्रमी नागदेव था। उस सेना में ऐसे ऐसे वीर थे जो तूफानवाली बिजली को हाथों से पकड़ने में भी बाधा बोध नहीं करते। नागदेव व्यूह रचकर युद्ध करता था। इस कला में उसका अपार कौशल था। संख्या की दृष्टि से सेना अधिक नहीं थी। फिर भी व्यूह रचना के बल पर उसका बल दुगुना तिगुना हो जाता था। पहाड़ को बहा देनेवाले प्रवाह को बुद्धिकुशल शिल्पी मिट्टी की बाँध डालकर नियन्त्रित कर देता ही है।

राष्ट्रकूटों की सेना संख्या की दृष्टि से चालुक्यों की सेना से कई गुना अधिक थी। भरपूर युद्ध-सामग्री भी थी। पर कोई ऐसा सेनापति नहीं था जो इनका उपयोग करे और सेना का संचालन बुद्धि-मत्ता के साथ कर सके। कोई कायर के हाथ में वज्रायुध हो तो क्या होगा? वज्रायुध चलाने की कला में परिणत हो और समय पर चलाने की हिम्मत ही जब न, उसका प्रयोजन है?

हफ्ते भर चालुक्यो और राष्ट्रकूटो में घमासान लड़ाई हुई। चालुक्यों ने राष्ट्रकूटो पर हमला करके इस प्रकार उनका नाश किया मानो मदमाते हाथियो का झुड ईख के खेत में पहुच कर सफा चट कर रहा हो। नागदेव जब कमान हाथ में उठा कर तीर चलाता गया तो कहना क्या एक एक तीर वज्र के समान टूट पड़ता और अपने साथ शत्रु का सिर भी लेकर गिर पडता था। वह हाथ मे तलवार लेकर झपटता तो देखना चाहिए था, वह युद्धोन्माद में कैसे काल-भैरव बन सकता था ! उसकी तलवारें क्या थी मृत्यु की जीभें थी। जहाँ निकलती वहाँ चाहे हाथी मिले चाहे घोडा चाट डालती। नागदेव का युद्धोन्माद वर्णनातीत था। वह पैदल सिपाही पर बाज-सा झपटता और उसी को उठाकर शत्रु सेना पर दे मारता। वह तो फेके जाने पर मर जाता ही पर साथ साथ धक्का देकर अपने साथ दो-चार सिपाही को लेकर चल बसता।

कक नागदेव के आघात से ढेर हुआ। सहसा वर्षा होने पर जनता जैसे भाग निकलती है उसी प्रकार सेनापति के गिर पडते ही राष्ट्रकूट-सेना बेतहाशा भागने लगी। चालुक्यो का सामना करने के लिए कोई नही रहा। राष्ट्रकूटो की राजधानी पर चालुक्यो का झडा फहराने लगा। शतमानो से सचित अपार सपत्ति तैलप के हाथ आई। उन्होने दिल खोलकर सैनिको में उसे लुटा दिया। जो जितना ढोकर ले जा सकता था उसे उतना धन दिया गया।

राष्ट्रकूटो पर चालुक्यो का हमला हुआ है— यह खबर पाते ही मारसिंह अपनी सेना लिए सहायता करने निकला। उस समय चामुडराय अन्यत्र चले गए थे। अतएव मारसिंह को ही आना पडा। पर खेद की बात थी मारसिंह राष्ट्रकूटो की सहायता नही कर सका, क्योकि तब तक राष्ट्रकूट पूर्णतया हार गए थे। राष्ट्रकूटो के हितैषियो ने राजकुमार को किसी तरह बचाकर गुप्त द्वार से पलायन किया था। रास्ते में ही अनाथ राजकुमार की भेंट मारसिंह से हुई।

मारसिंह को बड़ा दुःख हुआ। सब कुछ चुका था। मारसिंह के पश्चात्ताप या सन्ताप से अब कुछ नहीं बन सकता था।

फिर भी बदला चुकाने के उद्देश्य से सिंह-गर्जन करके मारसिंह ने धावकों पर हमला किया। मारसिंह के साथ जोड़ा बजाने में नागदेव को विशेष आनंद मिला। उसका उत्साह उमड़ पड़ा। उसने अपने साहस को सार्थक माना। समझा कि अपना व्रत पूर्ण हुआ। सोचा कि उत्तर कुमारों में छुप कर जीतने की अपेक्षा अर्जुन से जोड़ा बजा कर हार जाना भी श्रेयस्कर है। इस में हार जीत दोनों में कीर्ति है। और ऐसा सोचकर नागदेव ने हथियार उठाया। मारसिंह के साथ नागदेव का युद्ध वैसा ही था जैसे भीष्म पितामह के साथ वीर अभिमन्यु का था। मारसिंह की दृष्टि में नागदेव वीरता की पुतली था। उस के सजीव बदन देख कर देखते ही बना रह गया।

मारसिंह ने द्वंद्व युद्ध करने का निश्चय किया। नागदेव ने भी स्वीकार किया। दोनों मल्ल-युद्ध में उलझ गए। नागदेव का दाँव बचाना क्या था मानो बिजली का कड़कना था।। क्षण भर दोनों ने परस्पर सामर्थ्य का अंदाज लगाते हुए एक दूसरे को घूर कर देखा। यह भरत और बाहुबलि के दृष्टि-युद्ध का स्मरण दिला रहा था। दोनों ने विपक्षी को दाँव में पाने का प्रयत्न किया। दाँव को ऐसे भिड़े कि मानो दो साँड अपनी सींगों को अड़ाए एक दूसरे को ठेलना चाहते हों। मदमाते हाथी के समान भिड़े सूँड-सी भुजाएँ विपक्षी को पकड़ में लाने को आतुर हो उठीं पर किसी का मनोरथ पूर्ण नहीं हुआ। तब गदा-युद्ध प्रारंभ हुआ। उनके गदा प्रहार से चिनगारियाँ निकल रही थीं। अंत में मारसिंह ने एकाएक नागदेव पर सिंह के समान झपट कर गदा भी झपट, उसी को पकड़ लिया और आकाश में फेंक दिया। चक्कर के समान हवा में गोता लगाते लगाते घूमकर जैसे ही नागदेव नीचे आ रहा था वैसे ही बेर की भांति

उसे पकडकर मारसिह ने जमीन पर दे मारा। नागदेव के हृदय में मानो प्रतिशोध की आग भभक उठी थी। सभलकर उठा, शार्दूल के समान देखते देखते मारसिह पर सहसा आक्रमण किया। और उसे उठा कर इस भाति मॅडारने लगा मानो एक पवत दूसरे पर्वत को लिए बवडर में चक्कर काट रहा हो। इस युद्ध को देखते हुए दोनो ओर की सेना निश्चेष्ट खडी थी।

ऐसा लग रहा था कि नागदेव को मारना मारसिह नही चाहता। और मारसिह को मारना नागदेव नही चाहता। सेनाधिकारियो को यह एक वुझौवल पहेली बनकर सताने लगी। कई वार ऐसे मौके दोनो को मिले। यदि चाहते तो विपक्षी का सहार कर देते। पर ऐसे अवसरो पर उदासीन से रह जाते पर एक दूसरे पर ऐना झपटते कि खतम कराना ही चाहते हो!

सहसा एक दुर्घटना हुई। राष्ट्रकूट के सेनापति वही, एक पेड पर छिप कर बैठा था। नागदेव को दाँव पर पाकर सोचा कि अव खतम कर देना चाहिए। तुरत निशान लगा कर नागदेव के छाती पर एक भाला दे मारा। वह नागदेव के वक्षस्थल में जा धसा। नागदेव परकटे विध्याचल के समान बैठ गया। मारसिह ने तुरत उसे दोनो वाहुओ से उठाकर सभालने का प्रयत्न किया। उसे वडा पश्चात्ताप और खेद हुआ। पर किया क्या जाय? जो नही चाहता था वह हो गया था। मारसिह पर नागदेव की मत्यु का गहरा प्रभाव पडा। उस दिन से उसे अन्नजल तक में अरुचि हो गई। सल्लेखन-व्रती से वीतराग दिखाई देने लगा! विजय से वैराग्य! यही तो विधि-विडवना है। होनहार को कोई मिटा नही सकता। कारण कुछ भी हो जो कुछ होना है वह होकर ही रहेगा!

विजय-श्री ने चालुक्यों का वरण किया। राष्ट्रकूटों के राज्य पर तैलप का अधिकार स्थिर हुआ। पर परिस्थिति ऐसी थी कि जैसे बच्चे को जन्म देकर माँ का स्वर्गवास हुआ हो। क्योंकि नागदेव की मृत्यु ने तैलप को बड़े संकट में डाल दिया था। जब नागदेव का पार्थिव शरीर राजधानी में लाया गया तब उसे गोद में रख कर तैलप इस भांति रो पड़े मानों स्वयं विधवा बना हो। सज्जन का हाल क्या कहा जाय! एकलौते पुत्र को खो कर पागल बना हुआ था।

सज्जन जी! हमारा अभिमन्यु अब नहीं रहा।

— तैलप प्रलाप करने लगे।

प्रभो! अब मेरा क्या होगा? यही एक बेटा था। अब घर पर दो दो विधवाओं को मुंह दिखाने कैसे जाऊँ? उनकी सुहाग लुटी हम कैसे जीवित रहें? आप मेरा भी वध कर डालिए। यह सब से बड़ा अनुग्रह होगा। अब मैं जीना नहीं चाहता। मैं ही आत्महत्या कर लूंगा।

— कह कर जब सचमुच संगीन को अपनी छाती में भोंकने लगा तब तैलप ने सहसा उसका हाथ थामकर संगीन को झटके से छीन लिया।

सज्जन जी! क्या मैं आप की संतान नहीं हूं। जब तक मैं जिन्दा हूं तब तक आप अपने को दीन क्यों मानते हैं? आप भी आत्महत्या कर लें तो मैं क्या करूँ? मेरा क्या होगा? नागदेव की मृत्यु से मुझे क्या कम दुख हुआ है? वादा करता हूं कि जब तक मैं जिन्दा रहूंगा तब तक आप से पुत्र के रूप में ही व्यवहार करूंगा। मेरे पुत्र को कैसे ला दूं?

दीन किस का है प्रभो? संसार तो क्षण-भंगुर है। खैर, आप

मेरे साथ पुत्र के समान ही वर्ताव किया कर पर ि ा ा ा ।। मर नही सकते? मब व्यय का आदवासन है।

— कह कर दल्लप सिर पर कर बठ गया।

तव फौज के प्रत्येक जवान ने दर ही ... ो देखा। सब की आखो म आँसू की धारा बह रही थी। विजय लक्ष्मी का स्वागत फल-फूल से नहीं आसू से कर रहे थे। कुंकुम रोली लुटा कर नही सुहाग लुटा कर किया जा रहा था। ... शोक और कातरता से • यह विधि विडवना थी।

सुगध द्रव्यो मे भरी पटी में नागदेव का शव विजयपुर भेजा गया। वहाँ शोक और करुणा का सागर ही उमड आया। मे नही सुहागिनी स्त्रियो ने युद्ध की भर पूर निंदा की।

गुड्, मेरे साथ आने का वडा दुराग्रह किया था। तो देखो अव कैसे जीवन को ही नष्ट करना पडा। क्या सोच रही थी कि जीजी के साथ रहना माता के साथ रहने के ममान है? अव देखो न? तुम्हारा भ्रम दूर हुआ या नही?

इस प्रकार अत्तिमव्वे प्रलाप करने लगी?

हाय! मैंने तुम से युद्ध जाने के पूर्व अवश्य कहा था कि विजयी हो कर ही दर्शन देना। वह शाप नही था! शुभकामना थी। क्या इसे तुमने चुनौती मान कर मृत्यु को गले लगाया? इस प्रकार क्या मैं ही तुम्हारी मौत का कारण वन गई?

— गुडुमव्वे ऐसा सोचते हुए आँसू वहाने लगी।

मेरे स्वामी! क्या मरने के लिए ही हमारी सलाह माँगने आए थे? वाहुबली के समान विना आगा पीछा देखे युद्ध करने की सलाह मैंने किस कुघडी में दी?

अत्तिमव्वे पैर के पास वैठकर रोने लगी। नागदेव के शव से वे दोनो इस प्रकार लिपट गई था कि पद्मव्वे को

पुत्र का शरीर दिखाई नहीं दे रहा था। पद्मश्री ने किसी प्रकार भीड़ के बीच से रास्ता निकाल कर शव के पास जा कर देखा भीम के समान पराक्रमी पुत्र अब रक्त हीन पीला मुख लिए प्रेत बन पड़ा है! यह दृश्य उससे देखा नहीं गया। धँस कर बैठ गई। बेहोश हो गई।

होश आते ही बड़बड़ाने लगी --

अरी मेरे बेटे की बहू बन दूध बताशा खाना चाहती थी! अब भ्रम दूर हुआ न? दोनो बहिनों ने एक ही को पति बना देने का आग्रह क्यो किया था ——

— कहती हुई फिर मूर्छित हो गई।

माताजी! अब हमारा क्या होगा अब हम किस लिए जिएँ? हम से कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा कीजिए। प्राणेश्वर के साथ हम भी जाएगी।

—— अतिमब्बे बोली।

सास जी! आप ही जन्म-जन्मांतरो में हमारी सास रहें। यही मेरी अंतिम प्रार्थना है। अब मुझे सहगमन की अनुमति दीजिए।

कह कर गुण्डमब्बे बहन के पैरो से लिपट गई।

गुण्डू! उठो। उठो। क्या सहगमन करते समय तुम्हें छोड़ जाऊँगी। उठो! हायरे! क्या मेरे साथ सहगमन करने मात्र के लिए मेरे पीछे पीछे आई थी। उठो बहन! जो मेरा हाल होगा वही तुम्हारा भी होगा।

—— कह कर अतिमब्बे ने अपनी बहन को खींच कर छाती से लगा लिया और दोनो फूट फूटकर रोने लगी।

हाय रे बेटा! हम सब को अनाथ बनाकर क्यों चले।

— ऐसा प्रलाप करती हुई पद्मब्बे ने बेटे के शव को गोद में उठाकर रखा। अब्बलब्बे छाती पीट पीट कर रो रही थी। वही

पास ही बैठी थी।

इसी लिए तो बेटा हमने कहा कि दोनो एक ही को मत वरो। पर हमारी बात किसे पथ्य थी ? अब तक एक दिन भी तुम को रोते हुए नही देखा था। पर अब दोनो एक ही डोली में सुख निद्रा करने का स्वप्न देखते देखते सदा के लिए जीवन को नष्ट कर डाला न ?

अब्बकब्बे बड-बडाने लगी।

अब रोने से क्या होगा? नागदेव को कोई जिला नही सकोगी। शव को बहुत दिनो तक रख लेना उचित नही है। उठिए उठिए। क्रिया-कर्म की बात सोचिए।

— वयोवृद्धो ने कहा।

क्रिया ! क्रिया !! कीजिए, कीजिए। पर कैसे देखू मैं अपनी दो दो बेटियो के कर्म को। उनकी सुहाग लुटी जा रही है ! पहले हमारी क्रिया कीजिए बाद को जो चाहे कर्म कीजिएगा।

— अब्बकब्बे ने खीजकर कहा।

मल्लप बडा धीर था। पर अब वह भी रो पडा। तैलप की रानी आई और नागदेव की पाद-धूलि से तिलक करती हुई शव के पास बैठ गई। रोनेवालो के बीच में स्वय आंसू बहाने बैठ गई।

महारानी जी ! मेरे बेटे का बलिदान देखिए।

— पद्मब्बे बोली।

मामी, मेरे बस में क्या है? अब क्या मैं तुम्हारे बेटे को जिला सकूंगी ?

वह रोने लगी।

रानी जी ! आप लोगो की साम्राज्य दाह ने मेरी दो दो बेटियो के मागल्य को मिट्टी में मिला दिया !

अब्बकब्बे ने डाटते हुए कहा।

ठीक कहती हो बहन ! पर कौन हम स्त्रियों की बात सुनता है। अपनी झूठी प्रतिष्ठा के लिए पुरुष आपस में लड़ते हैं और सुहाग कटती हैं हम स्त्रियों की। हम अबलाओं के आँसू में पुरुष तैरना चाहते हैं। इस में इनकी होड़ लगी रहती है। मेरा बस चले तो मैं युद्ध को सदा के लिए रोकना चाहती हूं। सोचो न इस विग्रह में हमारा और तुम्हारा क्या मतलब है ? अब इस साम्राज्य को लेकर भी क्या नामदेव जैसे देवर को पा सकूँगी ?

— महारानी ने अपनी असहायकता का वर्णन किया। साथ ही कर्तव्य प्रज्ञा जगाकर सांत्वना देने का प्रयत्न किया।

नामदेव के शव संस्कार की तैय्यारी हुई। अतिमब्बे और और गुड्डमब्बे भी तैय्यारी में लगी रही।

बहन ! मेरा अंतिम वर दान दो।

गुड्डमब्बे ने याचना की।

गुड्डू ! क्यों इस प्रकार याचना कर रही हो ? मैंने सब के मना करने पर भी क्या अपनी सेज का आधा तुम्हारे लिए नहीं दिया है ?

अतिमब्बे बोली।

अब मेरी बात स्वीकार करो बहन। यही मेरी अंतिम अभिलाषा है।

— फिर गुड्डमब्बे ने प्रार्थना की।

क्या ? बहन !

— अतिमब्बे का कुतूहल बोल उठा।

जीजी ! तुम्हारा बेटा है। मेरा कोई नहीं है। मेरा जीवन अमावास्या की गहरी रात है। तुम मुन्नू के वास्ते जीवित रहो और मुझे निश्चित होकर जाने दो।

.... गुड्डमब्बे की बात पूरी भी नहीं हो पाई थी कि अतिमब्बे

अत्यत रुष्ट होकर बोली।

भला, बेटे का बहाना दिखा कर मुझे सहगमन से वंचित करना चाहती हो? क्या पति पर मेरा कोई हक नही? क्यो तुम ही उन्हें अपनाकर मुझसे सदा के लिए छीन लेना चाहती हो? मैं जिदगी भर जलता रहूँ और निश्चितता से सती बन कर इह और पर दोनो को तुम निभाओ खूब सोचा! सौत आखिर सौत ही तो होगी! मेरा कहना मानो। मानना ही पडेगा। तुमने वादा किया था कि मेरे कहे अनुसार ही चला करोगी। तभी तो मैंने अपने पति के हाथो तुम्हारी माँग भरवाई थी। अब तुम ही घर रहो, मैं सती बनूंगी। क्या अण्णिग तुम्हारा बेटा नही है?

बहन! ऐसा क्यो कहती हो? आखिर ससार क्या कहेगा? जैसे लोग कहेगे वैसे करे।

गुडुमब्बे ने असहायक ध्वनि में कहा।

लोग? ससार! अब कहाँ के लोग और कहाँ का ससार? जब जीवन ही बरबाद हुआ पडा है तो मेरा लोगो से या ससार से क्या वास्ता? जब मेरा राजा ही नही रहा तो यह ससार मेरे लिए घोर नरक है। अब मैं किसी की नही मानूंगी।

—अत्तिमब्बे ने दृढता से कहा।

बहन क्या हम दोनो की प्रतिस्पर्धा में अण्णिग अनाथ बन जाय?

— गुडुमब्बे यह कह रही थी कि अण्णिग वहाँ चला आया। अत्तिमब्बे का मातृ-हृदय मचल पडा। बेटे को छाती से लगा लिया। आँसू दुगुने वेग से उमड पडे। किसी प्रकार सभलकर फिर बोली—

गुड्! मेरे लिए इतना त्याग और करो! लो, यह तुम्हारा बेटा है। तुम्हें सौंप देती हूँ। बदले में मुझे सती होने दो।

अण्णिग को उठाकर अत्तिमब्बे ने गुडुमब्बे की गोद में डाल दिया।

जीजी ! क्या हमारे बुजुर्ग नहीं है ? उनके कहने के अनुसार म करें।

गुरू ने सलाह दी।

मैं सती बनूँगी ! बनूँगी ! अवश्य बनूँगी ! इसे छोड कर और कुछ कहना हो तो कहो।

अतिमब्बे ने अपना निश्चय दुहराया।

सभी हितैषु बुजुर्गों ने मिलकर निर्णय किया कि गुडमब्बे सहगमन करें और अतिमब्बे अण्णिग के पालन पोषण का भार सँभालें।

पद्मब्बे ने समझाया —

अत्ति तुम अण्णिग की माँ हो। अण्णिग के वास्ते तुमको जिन्दा रहना ही होगा। क्या मेरा दुख कुछ कम है ? ऐसे बेटे को खो कर जीने में क्या सुख है ? फिर भी मैं उसके पीछे जा पाऊँगी ? हम बूढ़े हैं। सहगमन की बात भूल जाओ। हमारे लिए जीवित रहो। उसके पुत्र के वास्ते जीवित रहो

सुनिए, संसार माया में जाय। मैं लेकर क्या करूँ ? किसी पर मेरा विश्वास नहीं है। अकाल में पति की मृत्यु हुई। और बेटे मे न जाने क्या क्या भोगना पड़ेगा ? मैं पापिन पगली हूँ मुझे न रोकिए। दुख भोगने के लिए मैं जीना नहीं चाहती।

अतिमब्बे ने दृढ़ता से कहा।

सोचो तो सही अण्णिग का क्या होगा ? माता का कर्तव्य है कि सन्तान की देख रेख करे। नारी की जिम्मेवारी बड़ी है। नारी के जीवन में एक ओर पति है तो दूसरी ओर सन्तान। दोनों को निभाना होगा बेटी।

पर मैं अकेली क्या निभाऊँ। वे हमें छोड़कर क्यों चल बसे ? हम क्यों पीछे रह जायें !

हाँ वह तो चल बसा। पर सन्तान की रक्षा तो करनी

? अव उस पुत्र के लिए रहना पडेगा। हाँ ! गुडुमब्बे की दूसरी है उसे अनुमति दो। पीछे आई थी, आगे जाएगी ! तुमने साथ दिया वहाँ वह ——

आगे बोलते नहीं बना फिर भी पद्मब्बे ने उचित सलाह थी।

अत्ति ! कैसी अबोध बातें करती हो ? इस दुध मुँह बच्चे छोडकर सहगमन करने से क्या तुम्हें शाति मिल सकेगी ? क्या का हृदय इतना नीरस रेगिस्थान बन सकता है ?

अब्बकब्बे ने डाटनेवाली आवाज में कहा।

अत्तिमब्बे ! तुम्हारा हठ करना उचित नही है।

तुम्हारा और तुम्हारे बेटे का भार हम सभालेंगी। तुम्हारे य जिदगी का भार ढोने के लिए हम सब बैठे हैं। लोक हित धना में मन लगाओ। सहगमन ही एकमात्र कर्तव्य नही है। यदि म्हारे कोई सतान नही होती तो कौन तुम्हारे रास्ते का रोडा बनता ?

— कह रानी ने भी समझा या बुझाया।

सब का मत एक-सा था। अत्तिमब्बे को उसे मानना पड़ा।

गुडुमब्बे ने नवेली के जैसे साज सिगार कर लिया। जितना ा सका उतना फूल सिर पर धारण किया। सोलहो सिगार से सज्जित हुई। बडे बूढों को नमस्कार करके आशीर्वाद पाया। ण्णिग को गोद में लेकर पुचकारा। तब उस के धैर्य की बांध टूट ई। क्षण भर के लिए विचलित हो उठी। फिर किसी तरह सभाल र उसे उतारा और अत्तिमब्बे को छाती मे कसकर लगाया। तब की बाध फिर टूट गई। जगमगाते हुए चदन की चिता के समीप चिता जल रही थी। उसी दशा म उसकी तीन बार परिक्रमा जिनवर के लिए सिर आखों पर लगाया। पचपरमेष्ठियो का

नाम जपते जपते चिता में इस प्रकार प्रवेश किया मानों सभा-मंडप में प्रवेश कर रही हो। उस समय उसका मुख अलौकिक कांति से चमक उठा। जैसे बाग में मालवाली पतिव्रता को बगल-बगल सरकाते हुए कोई कलि कम में आता है उसी प्रकार लपटों को दोनों हाथों से सरकाती हुई हंसते हंसते चिता पर चढ़ी और पति की बगल में सो गई। चिता की सेज पर पति को गले लगाए रम गई।

भोगते शरीर एक दम दुर्बल बन गया। वह बेचैन थी क्योंकि उसे मरने के लिए स्वातन्त्र्य नही था। कभी कभी उसका नन्हा सा बच्चा पास आता, गोद पर चढता और सूखे स्तनो को चूस चूसकर निराश लौट पडता। कभी कभी ठूंठ से पडी हुई माँ को हिला हिला कर जगाने का पयत्न करता और न हिलने पर शरीर की टटोलकर जांच करता। पर अत्तिमब्बे यह सब जानती हुई भी अनजान सी पडी रहती थी। क्योंकि अब उसके लिए ससार में कोई आकपण नही बचा था।

अत्ति! बच्चे का मुंह देखो। उठो। वह बार बार आकर हताश लौट रहा है न?

— पद्मब्बे कह देती। पर स्वय अपना दुख सह नही पाती थी। रो पडती थी।

मुझे न रहने देते हैं, न मरने छोडते हैं!!

अत्तिमब्बे कुढबुडाती।

क्या कहती हो बहू! बग्ग तुम्हें हम लोग सता रहे हैं। तुम्हें हमी लोगो ने अवश्य मरने नही दिया पर क्यो?। हमारे लिए तो नही। उस मुन्नू के लिए तो।

अब मुझे छोड दीजिए। मैं जी कर क्यो घुल घुलकर मरूँ। और कौन-सा सुख बाकी है कि मै जिदा रहूँ।

अत्ति! उठो। जरा अण्णिग को तो देखो। बेचारा सूखता जा रहा है। जिस प्रकार चड मारुत के झोको से उखाडे गए पेड के कोपलो की दुर्गति होती है वही दुगति अण्णिग की हो रही है। अब इस कुल का वही एक मात्र आधार है। अगर उस की रक्षा नही की तो क्या होगा सोचो तो सही?

— पद्मब्बे ने दीन और खिन्न हो कर कह दिया।

तब तक वहाँ अण्णिगदेव चला आया। अपनी माँ को हिलाते हुए 'माँ, माँ'! कह पुकारने लगा।

बहिन ! कैसे धनु ! हृदय विदारक है बेटी । उठो । बेटा तो
हम सब। क्या तुम नहीं चाहती हो कि इस धरा में इस हमारे पोते को
ही देखा बैठूं? इसकी रक्षा हमारे लिए ही सही करो।

— कहकर रो पड़ी।

और   माताजी। मैं और किस लिए जिऊँ। विधवा हूँ। समाज का
कलंक हूँ। अमंगल मूर्ति हूँ। मेरा न रहना ही अच्छा है। अमंगल
की मूर्ति बन कर धर्म-कर्म से हीन होकर जीना भी क्या जीना है?
सहगामिनी सचमुच सौभाग्यवती थी। मर कर अमर बनी। सती सावित्री
नी। मैं जीकर नरक यातना भोग रही हूँ।

— मतिमन्द छटपटाने लगी।

मिरा   बहिन ! क्या हम भी नहीं रो रहे हैं? पुत्र को खो कर कौन
सो पा रहा सुख हम भोग रहे हैं? हम जिन्दा हैं तो केवल तुम्हारे लिए
हम और तुम्हारे इस बच्चे के लिए। तुम भविष्य की माँ हो। सोचो
उसके घर पेट ही अपने बच्चे की उपेक्षा करने लगें तो उसका क्या हाल
होगा? यदि तुम ही अपनी सन्तान की उपेक्षा करो तो बेचारा क्या करें
कर और कहाँ जाय। तुम्हारी इस उपेक्षा का क्या परिणाम होगा? लोग
से न या कहेंगे।

रोमि   पद्मावती ने कर्तव्योन्मुख करने की दृष्टि से अतिमन्यु
कहा।

दो-एक दिन बीत गए। एक कवि विजयपुर आए। फिर
है शिक्षा की याद आ गयी। मर्द-पुराणी स्मृतियाँ आयु की धारा बन
मारी बाधित हुई दम्पत्ति का दुःख फिर जाग्रत हो उठा।

मो फि   धरीब हम लुट गए। अब स्वर्ग की साथ होने मिला है।
जाने न पानी प्राण और क्या देखना चाहते हैं। हमारा लड़का
हम गरीब आप को बहुत मानता था। आप के काव्य का कण्ठपाठ किया
था। अर्जुन का साहस बाहुबली का पराक्रम उसका प्रिय भाव था।

उन्हें पढते पढते स्वय फल्गुन या बाहुबली बनने का स्वप्न देखा करता था। अब हमें आँसू की घूंट पीने छोडकर स्वय चल बसा ! बाप के सामने बेटा मरे ! माँ-बाप को शोक-सागर में ढकेल दे। वह अभागा है नहीं, नही, हम अभागे है ! — पुत्रशोक में दल्लप अटसट बकने लगा।

सात्वना देते हुए पप बोले —

दल्लप जी ! आप का दुख मैं समझ सकता हूँ। कहा जाता है कि पुत्र-शोक चिर-स्थाई होता है। पर शोक करें तो किसके लिए ? आप का बेटा जीना और मरना दोनो जानता था। कायर सौ सौ बार मरते हैं। आप का नागदेव कायर नही था। वह तो हमारे फल्गुन और बाहुबली के समान ही वीर था और वीतराग भी था। उसकी मौत पर लाखो की जिदगी न्योछावर है। ऐसे पुत्र को जन्म देकर आप अमर बने हैं। मरना तो अनिवार्य है जरा सोचिए, आप का बेटा मर कर भी अमर बना है कि नही ? कौन आप के बेटे का शौय-पराक्रम नही जानता ? शत्रु तक सराहते हैं ! ऐसे व्यक्ति पार्थिव शरीर के बधन तोडकर यश काय बन कर अमर होते हैं। वीर पुत्र के योग्य वीर पिता हो कर आप आँसू पोछ डालिए। अप अत्ति को सात्वना दीजिए और अण्णिग को सुयोग्य बनाने का कर्तव्य पालन कीजिए।

पपदेव ! हम कगारे पर के पेड है। अब हम किसकी चिता करें ? हम सूखे पत्ते हैं। किसी तरह हमारे दिन कट जाएँगे। पर अत्तिमब्बे को सभालना असभव बन गया है। हम प्रयत्न करके हार गए हैं। वह सुन्न-सी बनी है। खाना, पीना, सोना भी विना दबाव डाले नही हो रहा है। आप महाकवि हैं। रस ऋषि है देवलोक से ले कर भूलोक तक आप की पहुच है। आप पत्थर मे जान फूंकने की प्रतिभा रखते हैं। आप पत्थर से भी सभापण कर

सकते हैं। कुछ तो कीजिए कि अलिमन्ने लोक—व्यापार में प्रवृत्त हो जाय ताकि बच्चे को संभाल लें।

— वसन्त ने अपनी विवशता व्यक्त करते हुए प्रार्थना की।

पप जी ने अलिमन्ने से भेंट की। कहाँ वह कुसुमकली और कहाँ यह कांग! उसे न किसी के आने की खबर रहती न जाने की! चिन्ता में बस रही थी। जिंदगी ही जिसके लिए दुर्भर बनी हो वह औरों की बात सुनकर क्या करे?

अलि! बेटी!! मेरी ओर देखो। मैं आया हूँ।

— पपदेव ने अलिमन्ने का ध्यान खींचने के लिए कहा।

बेटी। जो होना नहीं चाहिए था वह हो गया। किसका वश है? जो गए वह धन्य हैं? आज-भी तो तुम जाना है। यहाँ का कर्म समाप्त होते ही हर किसी को जाना पड़ता है। यहाँ किसका चलता है? क्यों बेटी। तुम क्या ना समझ हो।

पप महाकवि ने सान्त्वना पूर्वक जगाया।

मामा जी! आप अब आए? पर यहाँ सब समाप्त हो चुका है। बताइए तो सही अब इस जिंदगी की अपेक्षा भीख लायक बनी है कि नहीं? आप अरिकेसरी की मृत्यु से संतप्त थे। मैं आप को सांत्वना देने का प्रयत्न कर रही थी। अब मैं समझ गई। मामा जी! मेरी वेदना किसी के मिटाए नहीं मिट सकती! लोग आते हैं। सान्त्वना देते हैं। पर क्यों सांत्वना नहीं मिलती? आप कवि हैं। कवि की दृष्टि से विचार कर बताइए कि क्या इस आघात को सह कर भी जिया रहे और क्यों?

अलिमन्ने ने अपना दुःख कह सुनाया।

बेटी! जीवन बहुमुखी होता है। पति और पुत्र उसका एक अंग मात्र है। अब तुम्हारा पति मात्र नहीं रहा। और सब कुछ तुम्हारे सामने पड़ा है। जिंदगी के कई पहलुओं को अपनाने के लिए

तुम्हें जीना ही होगा । आर्तध्यान नरक का द्वार है। तुम बरसात की बूंद से डरकर बाढ में बह जानो चाहती हो ! यह उचित नही है।

पप कवि ने समझा ने का प्रयत्न किया।

मामा ! मेरी आवश्यकता किस को पडी है ?

— अत्तिमब्बे के स्वर में निराशा जनित कपन था।

बेटी। आदिदेव के सन्यास स्वीकार का प्रकरण तुमनें पढा ही होगा। तब उनकी रानियाँ, यशस्वती और कुमद्वती क्या पति के होते हुए भी पति-हीन नही बनी ? उस का जो अकथनीय दुख था वह क्या इस दुःख से कुछ कम था ? क्या उन्होने सहन नही किया ? इतना ही नही अपनी सतानो की रक्षा करने के लिए और उनके उज्वल भविश्य के लिए दिन-रात परिश्रम नही किया ? पति के सन्यास लेन मे रूठ कर उन्होने अपनी सतानो की उपेक्षा तो नही की ? उठो बेटी ! अण्णिग की देख-भाल में पति वियोग का दुःख भूल जाओ और देश भी तुम्हारी सेवा की प्रतीक्षा कर रहा है ।

मामाजी ! मैं क्या कर सकती हूँ ?

ऐसा निराश मत बनो। कन्नड-साहित्य की श्रीवृद्धि और विकास तुम पर निर्भर है। और

कैसे मामाजी ! मैं कवि थोडे ही हूँ। मैं क्या लिख सकूंगी ?

अत्तिमब्बे ! कवियो का अस्तित्व तुम जैसी कल्पलता पर निर्भर है। साहित्य की रक्षा करने के लिए समय समय पर उसकी प्रतिलिपियाँ बनवानी होगी। कवि काव्य लिखें और तुम उसकी प्रतिलिपियाँ बनवाकर रक्षा करो। दोनो का महत्व है एक निर्माता है दूसरा सरक्षक ! सृष्टि करनेवाले सृष्टि करें। पालन करना तुम्हारे हाथ है। नही तो सृष्टि नष्ट हो जाएगी। बेटी तुम जैन साहित्य की प्रतिलिपियाँ कराओ। देश के कोने कोने तक पहुचाओ। हो सके जहाँ कही आवश्यकता हो वहाँ जिनालयो का निर्माण कराओ।

देखो तुम जैसे स्वाभिमानियों पर निर्भर है जैन साहित्य और संस्कृति। जैन धर्म और जिनागम तुम्हारे जैसे उदार चिन्तकों का मुंह ताक रहा है।

पद्म कवि ने इस प्रकार कर्त्तव्य-बोध का परिचय करा दिया और अभिमन्यु के शून्य जीवन को कार्यों से भर देने का प्रयास किया।

पर मामा जी! यह काम धन से होता है मुझ से नहीं। मैं निमित्त मात्र हूं। मैं न रहूं तब भी धन रहेगा ही। अब मुझे यह सब धर्म का ढकोसला-सा लगता है

और एक बात है बेटी! मानवेन्द्र युद्ध में मरे?

पद्म देव ने दूसरे प्रकार से समझाने का प्रयत्न किया।

बात काट कर अभिमन्यु बोली —

मरे नहीं! किसी हत्यारे ने छिप कर वार किया और हत्या की।

ऐसा ही सुना है बेटी बड़ा अन्याय हुआ और अधर्म भी। फिर भी युद्ध में न जाने कितने जवान खप गये?

मामा जी! मैं क्या करूं? हजारों ढेर हो गए!

बेटी! उनकी मां बहिन और बहुओं का दुःख कौन दूर करे? उन में से बहुतों को दो कौर अन्न तक नहीं मिलता होगा। जानती हो बहन उनकी जिंदगी कैसे दूभर है? उठो उनकी सेवा करो। भगवान की कृपा से तुम्हारे पास अपार संपत्ति है। उन अभागों की सेवा में खर्च करो। उन हताभिमानियों के आंसू पोंछो! उनका दुःख तुम समझ सकती हो। तुम ही दूर कर सकती हो।

— पद्म देव की बातों का उस पर असर पड़ने लगा।

चालुक्यो के द्वितीय तैलप ने राष्ट्रकूटो को पराजित किया और विशाल साम्राज्य के साम्राट बने । आपने राजकुमार इरिवबेडग को युवराज बनाया । अभिषेक का महोत्सव बडी धूम से मनाया गया । इस अवसर पर साम्राट ने लक्कुडी और मासवाडी के कुल एक सौ चालीस ग्रामो के राजा अण्णिग को घोषित किया । नागदेव को जो जो राज-सन्मान प्राप्त थे उन सभी सन्मान को सब-सेनाधिपत्य के साथ उस अण्णिग को दिया ।

अत्तिमब्बे के सबधी, नातेदार रिश्तेदार आदियो ने समयोचित सदेशादि भेजकर, साधुवाद दिया। इस प्रकार हर एक ने उसका उत्साह वढा देने का प्रयत्न किया ।

अत्ति ! तुम्हारा यह लाडला कैसा भाग्यशाली है !

पद्मब्बे ने वलैय्या ली ।

हाँ हा ! सब का भाग्य बिजली-के समान चकाचौंध करनेवाला अवश्य होता है पर कितने समय के लिए ? यह सब इद्रचाप-सा आकर्षक अवश्य है पर मन में आने के पूर्व ही विधि उसे मिटा डालता है ! तब उसका नामोनिशान तक नही रहेगा । गहरा अधकार छा जाएगा ।

अत्तिमब्बे ने अपने अनुभव की बात कही ।

जब तक रहता है तब तक वह आकर्षक है । इस आकर्षण में ही सच्चा जीवन है। अण्णिग अब राजा बना — यह सत्य है । जब तक धम पर उसका राज्यशासन टिक रहेगा तब तक वह धर्म हमारी रक्षा करेगा ।

— पद्मब्बे ने अपना विचार स्पष्ट किया ।

वह ठीक है । राज्य हो या कोश जब तक धर्म से अनुप्राणित हो तो सार्थक रहेगा । तभी उनकी शोभा है । माँ ! एक बार हम लोग राज्य की सैर कर आवें ।

सुनाया कि सब अनुभव करते कर्म नामों के साथ स्वर्ग से वंचित हुए हों।

तदनंतर पुनः कवि ने स्वयंप्रभा के विरह का वर्णन किया। इससे श्रोताओं का कोमल अंतःकरण विषम कर बह उठा। सब को अश्रु बहाते देखकर असिमध्वे और कुसुमध्व भी आँसू बहाने लगी।

ललितांग का अगला जन्म मानवयोनि में हुआ। मर्त्य लोक में उसका नाम वज्रजंघा पड़ा। स्वयंप्रभा असह्य विरह ताप से जल उठी। वह भी इस लोक में आई। उसका नाम श्रीमती था। यहाँ श्रीमती और वज्रजंघा का विवाह हुआ। दोनों ने मर्यादित रीति से अनंतकाल तक जगत्सुख भोगा। एक दिन की बात है। सेवकों ने रात्रि के शयनागार में सुगंध धूम जलाकर गवाक्ष बंद किया। ऐसा नित्य किया करते थे। पर उस दिन धुआँ अधिक उठने लगा। इधर दैव प्रेरणा से उन्होंने खिड़कियों को इस भांति बंद किया कि अब मारुत तक झांक कर इन के प्रणय सुख में बाधा नहीं डाल सके। परस्पर गलबाही किए रात भर विहार करते रहे। पर उसी मुद्रा में न जाने कब इन दोनों के प्राण पखेरू उड़ गए थे। सवेरे सेवकों को कलेवर मात्र मिले। यही तो प्रणय जीवन का आदर्श है। पुनः कवि ने इस अध्याय को समाप्त किया। श्रोताओं की भावुकता रस-धारा बन बह चली।

अगले जन्म में इन दंपतियों का जन्म भोग भूमि में हुआ। यहाँ चारण मुनियों को भक्ति से भिक्षा-दान करने के पुण्य प्रभाव से अगले जन्म में भोगभूमिजा स्वयंप्रभा स्त्री जन्म से निवृत्त होकर स्वयंप्रभ देव बन गई। तदनंतर जन्म में श्रीधरदेव सुविधि नामक महाराजा बने। स्वयंप्रभ सुविधि का पुत्र केशव बना। इस प्रकार पुनः कवि ने आदिदेव बनने तक की कथावली का निरूपण संक्षेप में सुना दिया।

आदिदेव का राग रसिक ने अपनी रसिकता में उनकी

चालुक्यो के द्वितीय तैलप ने राष्ट्रकूटो को पराजित किया और विशाल साम्राज्य के साम्राट बने। आपने राजकुमार इरिवबेडग को युवराज बनाया। अभिषेक का महोत्सव बडी धूम से मनाया गया। इस अवसर पर साम्राट ने लक्कुडी और मासवाडी के कुल एक सौ चालीस ग्रामो के राजा अण्णिग को घोषित किया। नागदेव को जो जो राज-सन्मान प्राप्त थे उन सभी सन्मान को सर्व-सेनाधिपत्य के साथ उस अण्णिग को दिया।

अत्तिमब्बे के सबधी, नातेदार रिश्तेदार आदियो ने समयोचित सदेशादि भेजकर, साधुवाद दिया। इस प्रकार हर एक ने उसका उत्साह बढा देने का प्रयत्न किया।

अत्ति ! तुम्हारा यह लाडला कैसा भाग्यशाली है !

पद्मब्बे ने बलैय्या ली।

हाँ हा ! सब का भाग्य बिजली-के समान चकाचौंध करनेवाला अवश्य होता है पर कितने समय के लिए ? यह सब इद्रचाप-सा आकर्षक अवश्य है पर मन में आने के पूर्व ही विधि उसे मिटा डालता है ! तब उसका नामोनिशान तक नहीं रहेगा। गहरा अधकार छा जाएगा।

अत्तिमब्बे ने अपने अनुभव की बात कही।

जब तक रहता है तब तक वह आकर्षक है। इस आकर्षण में ही सच्चा जीवन है। अण्णिग अब राजा बना — यह सत्य है। जब तक धम पर उसका राज्यशासन टिक रहेगा तब तक वह धर्म हमारी रक्षा करेगा।

— पद्मब्बे ने अपना विचार स्पष्ट किया।

वह ठीक है। राज्य हो या कोश जब तक धर्म से अनुप्राणित हो तो सार्थक रहेगा। तभी उनकी शोभा है। माँ ! एक बार हम लोग राज्य की सैर कर आवें।

— अतिमब्बे ने अपनी इच्छा बता दी।

अति ! तुम्हारी इच्छा ही हम लोगों की इच्छा है। हम केवल तुम्हारी हंसी देखना चाहती हैं। तुम हंसती रहो तो बस हम और कुछ नहीं चाहिए।

ऐसा पद्मब्बे ने कहा। यात्रा की तैय्यारी हुई।

पद्मदेव ने उस अवसर पर साधुवाद देने के साथ साथ दीन दुखियों के प्रति अतिमब्बे का ध्यान आकर्षित किया।

अतिमब्बे ने पूरे के राज्य को देख लिया। गांव गांव में यथोचित स्वागत सत्कार हुआ। राजा अण्णिग भी माताजी के साथ ही था। प्रत्येक गांव को अतिमब्बे ने दर्शन दिए। शक्ति भर घर घर जाकर जनता के सुख दुःख की बात जानने का प्रयत्न किया। सदा पद्मदेव की बात उसके चित्त पर चढ़ी रहती थी। कहीं मंदिर चाहिए कहीं कुआं चाहिए कहीं धर्मशाला चाहिए — यह सब पूछ-ताछ कर के दान किया। जनता की मांगों को पूरा कर दिया। किसी ना नहीं कहा चाहे मांग व्यक्ति की हो या समाज की। जनता ने भी राज भक्ति से अपार धन राशि अर्पित की थी। अतिमब्बे ने उसमें यही कुछ न कुछ जनोपयोगी धार्मिक कार्यों में लगा दिया। कहीं खेत पर्याप्त नहीं थी तो तुरंत वहीं के जमींदारों से आवश्यक हिस्सा माफ करके भू-हीन किसानों के घर बसा दिया तो कहीं किसानों के लिए आवश्यक बैल आदि दे दिलाकर उनकी सहायता की।

अतिमब्बे ने सोचा लक्कुंडि राजधानी बनने योग्य स्थान है। सब से पहले यहीं जिनालय की नींव डाल दी। आचार्यों व धर्मगुरुओं को नमन करके जिनालय बनाने का संकल्प किया। उसका मानचित्र बनवा लिया। उसके सम्पन्न होते ही अण्णिग के लिए महल भी बनवाना चाहा।

एक बार रण विजयपुर आया। अतिमब्बे से मिलकर

नागदेव की मृत्यु पर अपना शोक व्यक्त किया। अत्तिमब्बे को सान्त्वना दी।

रन्न ! हमारी यह दशा हुई। तुम्हें कवि चक्रवर्ती बना देने का स्वप्न देखते देखते उन्होंने आंखें मूद ली। उनकी आशा पूर्ण होनी चाहिए।

— ऐसा कहते हुए अत्तिमब्बे रो पडी।

मां, आप का दुख कौन दूर कर सकता है? उसे आप कर्तव्य में भूलने की चेष्टा कीजिए। मैं कवि चक्रवर्ती बनूं या नहीं बनूं सो बात दूसरी है। जब ऐसे कवि चक्रवर्तियों का आश्रयस्थान ही नहीं रहा।

— रन्न ने खिन्न होकर कहा।

तात ! हताश होना बुरा है। वे होते तो तुम्हारी प्रतिभा और विद्वत्ता से अवश्य आनन्दित होते और तैलप चक्रवर्ती के दर्बार ले जाते। वहां तुम्हें सम्मानित देख कर फूले नहीं समाते !!

— कह कर अत्तिमब्बे अपनी असहायकता पर रो पडी।

आप आंसू न बहाइए। जब वे ही नहीं रहे तो अब मैं मान-सम्मान ले कर क्या करूं।

बेटा, निराश न बनो। वे चल बसे। पर उनकी अधूरी आशा-अभिलाषाओं को पूर्ण करना हम लोगों का कर्तव्य है। तुम जिस दिन कवि चक्रवर्ती बनोगे उसी दिन मेरे प्रियतम की आत्मा को सच्ची शांति मिलेगी।

मां मैं कैसा अभागा हूं। पितृ-तुल्य मेरे स्वामी का अंतिम दर्शन तक नहीं पा सका। उस समय धूप देने तक मेरे भाग्य में नहीं बदा था। कम से कम आप कहला भेजती।

बेटा ! उस अपार शोक में मुझे एक भी नहीं सूझा।

— अत्तिमब्बे का गला गद्गद हो गया।

था मैंने आप को खोज नहीं किया। मेरे दुर्भाग्य की बात कही।

रन्न ने कहा।

क्यों तात! कुछ लिख रहे हो?

— अतिमब्बे ने पूछा।

अभी नहीं पर लिखने की बात सोच रहा हूँ।

परमात्मा पर भरोसा रखकर लिखना प्रारंभ करो। मामाजी से कहकर अवश्य मैं चक्रवर्ती के पास भिजवा दूँगी।

— अतिमब्बे ने प्रोत्साहन दिया।

अब मेरी एक प्रार्थना है।

— रन्न ने विनती की।

कहो बेटा! मेरे लिए तुम और अण्णिग दोनों एक से हो। जो चाहे माँगो। पैसे की कमी हो तो जो जितना चाहे उठा लो। संकोच मत करना!

ऐसा कह कर तिजोरी की तालियाँ उस के हाथ दे दीं।

माताजी! आप के आशीर्वाद से रुपये पैसे के लिए मुझे कहीं दूर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। आप का नाम लेते ही लाखों रुपये मिल जाते हैं। हाल ही में चामुण्डराय जी जकणपुर आए थे। इधर जो कुछ घटना-पूर्वक घटा सब उन्हीं से जाना। राष्ट्रकूटों के पतन और अप्पाजी की मृत्यु की बात भी आपने बड़े सब्र से सही। सुनकर अजितसेनाचार्य जी रो पड़े। आचार्य जी ने मुझे आप के पास भेजा है।

आचार्य जी की आज्ञा शिरोधार्य है। अवश्य मैं उसका पालन करूँगी। हाँ मुझ से बड़ा अपराध हुआ है तात! कि पहले

— अतिमब्बे की आवाज अपराधी की सी लरजती रही थी।

माताजी, अव भूल चूक की वात नही । उमे भूल जाइए। जो होना था हो चुका । अव जैन-धम, जैन-साहित्य और जैन-सस्कृति का नाश नही होना चाहिए। ये रत्न-त्रय हैं। अव इन की रक्षा का भार आप पर है। अव राष्ट्रकूटो के पतन से अपार क्षति हुई है उसे आप भर सकती हैं। यही अजितसेनाचाय जी का सदेश है।

— रन्न की ध्वनि कपित थी।

तात ! कैसा भार मुझ पर लादा जा रहा है ! सो भी एक विधवा पर, इतना भार ? यदि वे रहते तो मै विना आना-कानी किए हामी भर देती। मैं ही अनाथ हूँ। मै क्या आश्रय दूंगी ? मैं धम-कर्म हीन विधवा हु। मैं कैसे धम की रक्षा कर पाऊँगी ? सस्कार विहीन विधवा मे सस्कृति का वचाव होगा ? मै एक दुवल नारी हूँ। तिसपर पति हीना दीना दुखिनी हूँ। मुझसे कवियो को आश्रय मिल सकेगा ? जैन साहित्य अपार है। उसका पुनरुद्धार क्योकर मुझ हत भागिनी से सभव है ? जो भार राष्ट्रकूट सार्वभौम सभाल रहे थे उसे इस भाग्य-हीन नारी पर लादना क्या उचित है ?

— अत्यत हताश हो कर अत्तिमब्बे वोली ।

माता जी ! आप हीन-भावना का त्याग कीजिए। क्या सुमेरुपर्वत को एक कछुए ने पीठ पर धारण नही किया ? वृत्रासुर की पीडा से ससार को किसने वचाया-एक मामुली हड्डी ने तो ? आप तो महा महिमामई हैं। उदार हैं। आप सुसस्कृत महिला हैं। आप से क्या नही होगा ? आचार्य ने सोच-समझकर ही आप को इस कार्य में नियोजित किया है। शुभ-सकल्प कीजिए । शुभ ही होगा !

— रन्न ने आत्म-विश्वास जगाने का प्रयत्न किया।

रन्न ! तुम भी ऐसा कहते हो ? वत्स ! मेरी योग्यता ही कितनी है ? मैं अकेली क्या कर पाऊँगी। आचाय का आदेश

टकाते नहीं बनता । क्या करूँ ?

अतिमब्बे सिर पर हाथ धरे बैठ गईं ।

माताजी ! आप के सुझावे जैन समाज अब समझ सकता है। राजाश्रय की प्रतीक्षा में बैठे रहना उचित नहीं है। जनता स्वयं यह भार उठावें। आज जन-शक्ति राजा महाराजाओं से भी बढ़ कर ऐसा कार्य कर सकती है। इसका प्रमाण आप दे सकती हैं। आप नारी रत्न हैं। आप सब के सम्मुख एक जीता जागता आदर्श बन कर विराजें। इसीलिए मैं आप की ओर से आचार्य जी को आश्वासन दे चुका हूँ

— रन्न ने कहा।

रन्न ! क्यों तुमने ऐसा किया ? बिना सोचे-समझे ऐसा वचन दे देना क्या उचित है ? आखिर मेरी शक्ति और सामर्थ्य को क्या जानते हो ? अकेली मैं क्या कर पाऊँगी ?

माताजी यदि आप चाहें तो सौ सौ सम्राट भी नहीं कर सके इतना कर सकती हैं। मुझे पूरा विश्वास है।

रन्न ! मेरे पिताजी कहा करते थे कि कवियों का व्यवहार ज्ञान शून्य-सा रहता है। आज उस कथन का अर्थ समझ गई। क्या एक अबला नारी सम्राटों की बराबरी कर पाएगी ?

व्यंग से हँस पड़ी।

माताजी ! आपने देखा है कि युद्ध से कैसा अनर्थ हुआ है ? आप के आँसू अब वरदान बने। आप जनता में सच्चे धार्मिक संस्कार डालने का प्रयत्न कीजिए। हिंसा को मिटा डालने के लिए अहिंसा का प्रचार कीजिए। इस नर-हत्या को रोकने के लिए लोगों को सुसंस्कृत बनाइए। अब जो पति पुत्र हीन अबलाएँ हैं उन्हें आश्रय दीजिए। उनकी सहायता से अनाथ शिशुओं की रक्षा का भार उठाइए और नव निर्माण की नींव डालिए यही आचार्य के कथन का

तात्पर्य है आप हँसी में उसको न उडाइएगा ।

तात ! आचार्य जी तपस्वी है । उन के आदेश का पालन करना हमारा कर्तव्य है । मैं अपनी सीमा से भी परिचित हूँ । फिर भी इतना अश्वासन दूगी कि हा अपने जीवन के प्रत्येक क्षण मैं सस्कृतिक काय के लिए अर्पित कर सकूगी । अपनी सारी सपत्ति का उपयोग उम के लिए कर दूगी । इतना मेरी ओर से आचार्य-चरणो में निवेदन करना ।

तब रन्न ने अत्यत दीन भाव से कहा

माँ, मेरी भी एक प्राथना है । आप उसे स्वीकार करें ।

रन्न ! तुम ही मेरी पहली सतान हो । अण्णिग से वढकर तुम को मानती हूँ तुम्हें क्या सकोच है ? मन की वात कहो ।

— वरदायिनी माता सरस्वती के समान आश्वासन दिया ।

माताजी ! चामुडराव जी अत्यत आदर के साथ मुझे निमत्रण दे रहे हैं । आप की अनुमति मिलें तो मैं उनके यहाँ कुछ दिन रहना चाहता हूँ

रन्न ने निवेदन किया ।

रन्न ! मेरे रहते औरो के यहाँ जाने की आवश्यकता क्या है ? किसी का मुँहताज क्यो बनना चाहते हो ? जो चाहे मुझ ही से ले लो ।

— अत्तिमब्बे की ध्वनि में तिरस्कार का भाव था ।

माताजी ! आप से निराश होकर थोडे ही मैं चामुडराव के यहाँ जा रहा हूँ । उनकी प्रार्थना स्वीकार करके वहाँ जाने का आदेश आचार्य अजितसेन जी ने दिया है । पर आप की अनुमति के विना मैं कैसे जा सकता हूँ । मैं गुरुजी के आदेश से वढकर माँ की इच्छा मानता हूँ । आप जो भी कहें मै मानने को तैयार हूँ ।

-- रन्न ने स्पष्ट किया ।

रन्न ! आखिर तुम्हारी क्या इच्छा है ? जाना चाहते हो तो

जाओ । पर निराश्रित मानकर यहाँ मत आना । जब तक मैं जीवित हूँ तब तक तुम आराम से यहाँ रहो । अपने को अनाथ मानने का कारण नहीं । समझे ।

माताजी ! क्या मैं आप पर संदेह कर सकूँगा ? आप ही के कृपामय से आज मैं एक मनुष्य हूँ । नहीं तो न जाने किसके यहाँ पानी भरते या रसोई पकाते पड़ा रहता । आप की कृपा से पढ़ा-लिखा हूँ । आप की कृपा है कि आज वास्तुपाल जैसे महानुभाव मुझे अपने यहाँ बुला रहे हैं ।

— रत्न की ध्वनि में कृतज्ञता सनी हुई थी ।

रत्न ! जाओ ! कवि हृदय में जगह जगह भ्रमण करते रहने की इच्छा बनी रहती है । राजजी तो बड़े महानुभाव हैं । पर एक बात याद रखना कि जब तक तुम्हारा आदर सत्कार होता रहेगा तब तक वहाँ रहना । कभी किसी भी कारण से जरा सा अनादर देखा तो यों ही चले आना । तुम्हारे लिए मेरा मन सदा खुला रहेगा ।

इतना कहते कहते अतिमब्बे का गला बैठ गया । आँसू बह निकले ।

रत्न ने झुक कर आप की पद धूलि उठाई और उसे सिर आँखों पर रख ।

वत्स ! राजजी के साथ जा रहे हो तो न जाने फिर कब हमारी और तुम्हारी भेंट होगी । इसीलिए चाहती हूँ कि तुम विवाह कर लो । तब कहीं मैं निश्चिन्त होऊँगी ।

इस प्रकार अतिमब्बे ने रत्न के विवाह का प्रश्न छेड़ा ।

जैसे आप की इच्छा । मैं कभी आप की बातों का उल्लंघन नहीं कर सकता ।

क्या कहीं कन्या देखी जाय ?

माताजी एक काम कीजिए । मेरे पिताजी को समाचार भेजिए ।

सभव है कि कही आपने कन्या देखी होगी।

— रन्न ने कहा।

जिनवल्लभ की बहन की यमज सतानें थी। बडी का नाम शाति छोटी का जक्कि था। इनके सगे-सबधियो में अधिक पढा लिखा रन्न ही था। कन्याओ के पिता आदिराजु का आग्रह था कि या तो दोनो कन्याओ का पाणिग्रहण करें या नही। विजयपुर में ही विवाह महोत्सव सपन्न हुआ। रन्न का विवाह उस ठाट बाट के साथ सपन्न हुआ जैसे किसी राजकुमार का हुआ करता है।

जक्कि और शाति के साथ रन्न का चामुडराय के दरबार जाना निश्चय हुआ।

## १४

रन्न को विदा करते समय अत्तिमब्बे ने अपने और गुडुमब्बे के गहनो को अत्यत उदारता से शाति और जक्कि में बाँट दिया। निर्धन परिवार की वे कन्याएँ इतना आभूषण पाकर कृतकृत्यता का अनुभव करने लगी। उनकी दृष्टि में अत्तिमब्बे सामान्य मानवी नही साक्षात् देवी थी। तलकाडु जाने के पूर्व उनको उतना ही दुख अत्तिमब्बे को छोडते हुआ जितना नैहर छोडते हुए हुआ था।

उन वहुओ की विदाई के वाद फिर अत्तिमब्बे के जीवन में उदासी उतर आई। विवाह की धूम स्तब्ध निराशा में बदल गई। अत्तिमब्ब सदा यही सोचा करती थी रष्ट्रकूटों का पतन हमारे ही कारण तो हुआ। इस से समाज और धर्म का जो भी नष्ट हुआ है उसे क्योकर भर पाएगी? ऐसे अवसर पर गुडुमब्बे की सलाह और आश्वासन वडे काम का होता। पर वह अव कहाँ? एक वार अपनी सास से मिलकर अत्तिमब्बे ने प्रश्न किया

क्या हमारे ही कारण राष्ट्रकूटों का नाश हुआ ?

शान्ति ! क्या व्यर्थ माथा पच्ची कर बैठी हो ? क्या कोई किसी का नाश कर सकेगा ? राष्ट्रकूटों का पुण्य क्षय हुआ । तभी उनका वैभव मिटा । साम्राज्य गया । क्या तुम पट्खण्डाधिपति भरतेश की कथा नहीं जानती ! भरतेश का दावा था कि उनके समान षट्खण्डों पर किसी और का आधिपत्य पहले नहीं हुआ था और शायद ही आगे हो । अपने नाम पर बीरशासन वृषभान के उपदेश से वर्णन के साथ वृषभाद्रि गए । वहाँ अपना प्रशस्ति लिखवाना चाहते थे पर कहाँ लिखवाते ? वहाँ देखते हैं कि कई पूर्वज चक्रवर्तियों के कई लेख पड़े हुए हैं । लिखते गए पर कहीं उसका अन्त दिखाई नहीं दिया । बेटी हम जिसे नया समझते हैं वह न जाने कितने बार हुआ रहता है । उन्होंने कई बार शत्रुओं को हरा दिया था ? अब उनकी अवनति का काल आ गया । हार गए । हम क्यों अपने सिर पर इसका जिम्मा उठा लें ?

पद्मब्बे ने इन शब्दों में सान्त्वना दी ।

माता जी ! अजितसेनाचार्य जी न रस के द्वारा कहला भेजा है कि

क्या कहला भेजा है ? क्या आचार्य जी पधारेंगे ? या आश्रम को धन चाहिए पद्मब्बे ने बात काट कर पूछा ।

आश्रम के लिए कुछ नहीं मांगा है । कहला भेजा है कि धर्म संस्कृति और साहित्य की रक्षा का भार हम अपने कंधों पर लें और

— अत्तिमब्बे की आँखें चमकीं वह रुकीं ।

क्यों ऐसे कामों में हाथ बँटाना हमारा कर्तव्य है । कौन तुम्हारा हाथ रोकेगा ? न मैं रोकूँगी न वे । जो चाहे करो । भगवान का दिया है काहे के लिए ? जितना बने करते जाओ

सर्व प्रथम अहिंसा का प्रचार करना चाहिए । अब लोगों को रक्षिपन मूर्ति प्रतिष्ठा की बात सूझने के लिए। प्रतिष्ठा करना होगा ।

इस प्रतिस्पर्धि का परिणाम देख ही रहे हैं। युद्ध कभी न हो ऐसा कुछ करना होगा। अब जो उजडे हैं उनको बसाना होगा। अनाथ शिशुओ की देख-रेख का प्रबध करना होगा। दीन दुखियो की सेवा करनी पडेगी। इस पर धम सस्कृति और साहित्य का भार भी उठाना हो तो न जाने कितना धन लगेगा।

अत्तिमब्बे ने अपनी समस्या बताई।

अत्ति! धन की चिता मत करो। अपने पास जो कुछ है सब खर्च हो जाय तब भी चिता करने की बात नही। तुम्हारा बेट अब राजा है। समझो कि हमें कल्पवृक्ष की छाया मिली है। हम अब जो चाहे कर सकते है।

— पद्मब्बे ने भरोसा दिया।

अत्तिमब्बे ने देश की सुव्यवस्था का प्रबध करके सैकडो लिपिकारो को बुलवाया। बकापुर से मँगाए गए ग्रथो की प्रतिलिपियाँ उतरवाने लगी। प्रत्येक ग्रथ की सौ सौ प्रतियाँ तैयार होने लगी। यह देख कर दल्लप दग रह गया। मल्लप प्रसन्न हुआ। हाथियो पर लदे ताडपत्र देख कर सब आश्चर्य चकित हुए। हजारो कठ (धातु की कलम) बनवाए गए। कठ भी लोहे या चादी के नही, सोने के बनवाए गए। प्रतिलिपिकारो से ताडपत्र पर जैन आगमो और शास्त्रो की प्रतियाँ बनने लगी।

इतने बडे पैमाने पर कभी किसी ने प्रतिलिपियाँ बनवाने का प्रयत्न नही किया था। अत्तिमब्बे ने सहस्रो प्रतिलिपियाँ बनवाकर जैन मठो को दान दिया। जैन सन्यासियो को शास्त्र दान किया। जिन ग्रन्थो की प्रतिलिपि करने में आठ आठ साल लगते ऐसे धवल जयधवलादि ग्रन्थो की भी सैकडो प्रतियाँ बनाई गई।

अत्तिमब्बे की दृष्टि लोक व्यवहार से उचट गई। आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर होने लगी। घर पर रहते हुए अतर्मुखी रहनी।

तपस्या करती। जैन मुनियों की सेवा में लगी रहती। एक ओर से जिनालयों की मरम्मत का प्रबंध किया। जहाँ कहीं जैन श्रावक अधिक संख्या में रहते थे वहाँ स्वयं जिनालय बनवाने लगी। लक्कुंडी का जिनालय इस ढंग से बनवाया गया कि वह हर दृष्टि से असदृश बन जाय। कई अग्रहार बनवाए। मंदिरों का निर्माण हुआ। अन्नदान का प्रबंध किया अनाथालय बनवाए। शास्त्र प्रवचन और काव्य-वाचन की व्यवस्था बड़े पैमाने पर हुई।

अत्तिमब्बे ने कन्नड साहित्य की ओर विशेष ध्यान दिया। संस्कृत प्राकृत तथा अर्धमागधी ग्रन्थों का आदर समस्त भारत में हुआ करता है। अतएव उन ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ कहीं न कहीं होती रहती हैं। पर दुर्विनीत पम्पभु, कुमुदेंदु गुणवर्मा जैसे सारे कन्नड के कवियों के कृतियों का तथा पंपदेव के आदिपुराण विक्रमार्जुन विजय पोन्न कवि के भुवनैक रामाभ्युदय और शांतिपुराण का आदर कर्नाटक मात्र में संभव है। इनकी प्रतियाँ कन्नड जनता ही बना सकती है क्योंकि वह उन्हीं के काम की होगी। अत एव कन्नड जनता की उपेक्षा इस संबंध में कदापि नहीं होनी चाहिए। ऐसा सोचकर जहाँ अन्य ग्रन्थों की दो दो प्रतियाँ बनवा रही थी वहाँ कन्नड ग्रन्थों की हजार हजार प्रतियाँ बनवाने लगी। राजा-महाराजाओं ने भी इतनी प्रतियाँ नहीं बनवाई होंगी। इस प्रकार अत्तिमब्बे कवि कुल के लिए चिंतामणि बन गई। जनता के लिए दानचिंतामणि बनी। डेढ़ हजार सोने के जिन प्रतिमा बनवाकर जन-दंपतियों को निमंत्रित करके ग्रन्थों और जिन प्रतिमाओं का दान किया और समझाया — देखो! तुम आदर्श दाम्पत्य जीवन बिताओ। जिनों की पूजा करो ग्रन्थों का पाठ करो। तुम्हारे कष्ट दूर होंगे। ऐसा आशीर्वाद देकर बिदा करती थी।

वे कहते — जी आप के आदेशानुसार हम यथा संभव चलने का प्रयत्न करेंगे।

और एक बात । तुम अपने जीवित काल में, जब कभी सभव बने तब, किसी न किसी ग्रथ की कम से कम पाच प्रतियाँ लिख कर दान करते जाओ । यह आश्वासन तुम लोगो से चाहती हूँ ।

माताजी ! आप के शुभाशीर्वाद से पाच ही क्यो पचास प्रतियाँ बनवाकर दान करेंगे । यह तो हमारे उद्धार की बात है।

इस प्रकार सहर्ष वादा करते और विदा लेते थे ।

इस प्रकार अत्तिमब्बे का दान एक को दस, दस के सौ के हिसाब से बढाते बढाते व्यापक आदोलन सा बन गया । कन्नड प्रदेश में ग्रन्थो के प्रसार का इतना व्यापक आदोलन कभी नही हुआ था । नव-दपतियो के लिए यह एक आवश्यक कर्तव्य बन गया। इस प्रकार जब जनता में साहित्याभिरुचि बढ गई तो यह कहने की आवश्यकता नही कि कवियो के जीवन पर क्या ही अच्छा प्रभाव पडा करेगा । वे सोचने लगे अब राजाश्रय की आवश्यकता ही क्या है ?

अत्तिमब्बे बकापुर गई । अजित सेनाचार्य के दर्शन पाए । अपने पुत्र अण्णिग को श्री-चरणो में अर्पित करते हुए निवेदन किया कि आचार्य जी ! यही हमारे वश की एक मात्र ज्योति है । यह सौ वर्ष तक प्रज्वलित रहकर धर्म का प्रकाश फैलाते रहे— ऐसा आशीर्वाद दीजिए।

क्या पूरा सौ साल का जीवन चाहती हो बेटी ?

— आचार्य जी मुस्कुराते हुए बोले ।

स्वामिन् ! हम लोगो के कारण राष्ट्रकूटो का पतन हूआ । नही तो उनसे धर्म और समाज का बडा उपकार हुआ होता । अब मैं और यह सौ सौ साल जीवित रह कर समाज की सेवा करना चहती है। राज सुख भोगने के लिए नही । जीवन के प्रत्येक क्षण को अहिसा-धर्म के प्रसार मे लगाने के निमित्त चाहती हूँ । आप के आशीर्वाद मे धर्माभिरुचि अत तक बनी रहे।

बेटी ! तुम साधारण स्त्री नही हो । आदिदेव की जननी

मरुदेवी के समान तुम भी लोक-कल्याण मार्ग में लगी हुई हो। तुम इस अभिलेख के जरिये जनता के अपार दुःख दैन्य को दूर करके लोक कल्याण पथ पर अग्रसर हो रही हो। कर्नाटक का कोई भी शासक तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकता। तुम व्यक्तिगत शील चारित्र्य से कर्नाटक की आदर्श महिला मणि हो। इससे भी बढ़कर भक्त शिरोमणि हो। और जैन धर्म एवं संस्कृति की तो मुकुटमणि हो। हमने सोचा था कि राष्ट्रकूटों के पतन से जैन धर्म का भाग्य सूर्य डूबा पर तुम्हारी योजना बद्ध कार्यों से विश्वास हुआ कि जैन धर्म और संस्कृतिका नाश असम्भव है।

प्रभो! आप मुझे न लजाइए। आप की बातों से इस दुर्बल नारी का सिर झुक जाएगा।

— अत्तिमब्बे ने सकुचाते हुए कहा।

देखो बेटी! तुम पक्की हो। कच्ची नहीं। सदियों से पर्वत के तल में पड़े पड़े पुद्गल भार सह सह कर कोयला अमूल्य हीरा बन जाता है। तब उसकी चमक असह्य हो जाती है। तुम ऐसे ही हीरा हो हीरा। तुम्हें लजाने के लिए नहीं कह रहा हूं। सत्कर्म देख कर साधुवाद देना चाहिए। तुमने धर्म के मंगलमय स्वरूप का दर्शन करा दिया। तुम्हारा जीवन जितना कल्याणमय है उससे भी अधिक कल्याण मय तुम्हारे पुत्र का जीवन होगा। अत्तिमब्बे तुम कहीं भी रहो वहीं तीर्थ बनेगा। तुम्हें वाक्‌सिद्धि का वर प्राप्त है। तुम्हारे स्पर्श से मिट्टी का ढेला भी सोना बन जाएगा।

— आचार्य के हृदयोद्गार से बातें निकल रही थी।

मैं सिद्धि नहीं चाहती न स्पर्श से सोना बना देना ही। आप की चरण धूलि का मूल्य क्या यह सोना है? आप की पद-धूलि मेरी आँखों का अंजन बने। आप के श्री-चरणों के प्रभाव से यह मेरा हृदय जिन मंदिर बन जाय। न धन चाहती हूं न मान सम्मान

चाहती हूँ, केवल यही चाहती हूँ कि मेरी जीभ सदा जिनमत्र जपा करे ! मेरे कान जिनस्तुति से भर जाय ! मेरा हृदय समवसरण बने और जिनेंद्र का सिहासन हो। दीन धर्म की सेवा करने के लिए जितनी बार चाहे मुझे जन्म मिला करे ।

— ऐसा कहते कहते गद्‌गद् हो गई ।

बेटी ! तुम परम सात्विक हो। हमारे जैसे यतियो के लिए भी तुम्हारे दर्शन से स्फूर्ति और प्रेरणा मिला करेगी।

— आचार्य जी ने मुक्त कठ से अत्तिमब्बे का यशोगान किया।

अत्तिमब्बे बकापुर के आश्रम में कुछ दिन ठहर गई। आश्रम को चिता से मुक्त करने के लिए अपनी सपत्ति का आधा हिस्सा दान पत्र करके दे दिया। अपन हाथ से रसोई बना कर विद्यार्थियो को खिलाया। बीमार विद्यार्थियो की सेवा की। आश्रम से बिदा लेने के पूर्व अजितसेनाचाय से बोली

आचार्य जी, आप हमारे समाज के रत्नो को बटोर कर लाते हैं और उन्हें सान पर चढाकर चमका देते हैं। इन विद्यार्थियो में न जाने कितने अनर्घ्य निकलेंगे। आप बिना सकोच मुझे आज्ञा दे सकते हैं। आप की सेवा के लिए सदा कटि बद्ध रहूँगी। अपनी और आधी सपत्ति भी चाहे तो लिखवा लीजिए। स्वय इस आश्रम में परिचारिका बन कर रहने के लिए भी तैयार हूँ। आप के दशन से बढ कर और कोई सपत्ति मुझे नही चाहिए। इस नश्वर सिहासन पर बैठने की अपेक्षा समवसरण के द्वार पर परिचारिका बन कर खडे रहने में अधिक सुख है। यह श्रेय और प्रेय दोनो है।

— यह कहते समय अत्तिमब्बे पुलकित हो रही थी।

बेटी ! ठीक कहती हो। एकाध जन्म में समवसरण के द्वार पर परिचारिका करते रहे तो सभव है कि जिन ही बन जाने

का पुण्य प्राप्त हो।

इन शब्दों में नत मस्तक अत्तिमब्बे एवं अभिनव को हँसते हँसते आशीर्वाद दिया।

१५

श्री अजितसेनाचार्य जी के दर्शन से अत्तिमब्बे का उत्साह द्विगुणा बढ़ गया। उसने सोचा कि मानव की आयु सीमित है। अब अंतिम सांस टोकती होगी यह कौन जाने। अतएव जो भी कुछ धर्म-कर्म करना है जल्दी से जल्दी करना है ताकि हँसते हँसते विदा ले सकें। ऐसा सोच कर उसने निश्चय किया कि कोई भी ग्रंथ जिस किसी जाति पंथ या देवीश का किया क्यों न हो अगर वह कन्नड में है तो उस की प्रतिलिपियां बनवा दूँगी।

अत्तिमब्बे का संकल्प कर्नाटक के कोने कोने में पहुँच कर धर्म एवं साहित्य की धारा प्रवाहित कर सका।

धर्म वही है जो सब के सुख का साधन हो। उस का स्वरूप समझने पर किसी भी भाषा में समझाते बनता है। संस्कृत में ही धर्म ग्रन्थ रचा जा सकता है यह बात नहीं। देश-कालानुसार जनता की भाषा में सरल शैली में धार्मिक ग्रन्थों की रचना होनी चाहिए। तभी जनता में धार्मिक भावना जागृत होगी अंध-विश्वास दूर होगा। सच्चे ज्ञान के प्रकाश में अधर्म रूपी अंधकार मिट जाएगा।

यह अत्तिमब्बे का कथन था। उसने कन्नड भाषा सीखने वालों के कष्ट को दूर कर देने की प्रतिज्ञा की। पंडितों से सादर निवेदन किया कि वे जनता की भाषा में रचना किया करें तभी जनता का मन

चुका सकेंगे। ऐसे व्यक्तियों को चुनचुन कर अपने यहाँ स्वागत किया जो केवल कन्नड में ही रचना किया करते थे। उनका आदर और सम्मान इस कदर किया कि कोई राजा-महाराजाओ से भी करते नही बने। कर्नाटक में मलय मारुत के समान चक्कर काटते हुए सस्कृति का पचार किया। उन दिनो में कर्नाटक में शैव, वैष्णव, बौद्ध और जैन सप्रदाय प्रचलित थे। अत्तिमब्बे, इन सभी धर्मों का समादर किया करती थी। मठ मदिरो को भर पूर दान भी देती थी। अतएव चतुस्समय सरक्षिका नाम से विख्यात हुई।

राष्ट्रकूटो के पतन के साथ ही मालव स्वतत्र बना। दिन ब दिन इन की शक्ति भी बढती गई। उत्तर के कई प्रदेशो को जिन पर राष्ट्रकूटो का शासन चल रहा था मालव परमारो ने हडप लिया। बाद को कन्नड जनता पर भी आक्रमण करने लगे। तैलप ने कई बार उनका मुकाबिला किया। उनसे लोहा बजा बजाकर थक गया था। अत में अपने पुत्र इरिवबेडग के नेतत्व मे बडी सेना भेजने का निश्चय किया। इरिवबेडग यात्रा के पूर्व अत्तिमब्बे से आशीर्वाद पाने के लिए आया। मल्लप तथा दल्लप दोनो ने हाथ जोडकर होनहार चक्रवर्ती साम्राट का स्वागत किया।

माताजी, मैं समर-यात्रा पर निकला हूँ। यही मेरी प्रथम यात्रा है। आशीर्वाद दीजिए। ताकि मैं विजयी बनूं।

ऐसा कहते कहते अत्तिमब्बे के चरण-रज उठा कर सिर पर चढा लिया।

बेटा! क्या तुम को मेरे आशीर्वाद चाहिए? समर में सम्मिलित होनेवालो को आशीर्वाद देने में मुझे भय होता है।

अत्तिमब्बे पीछे हट गई।

माताजी! आप को हमारे राज्य की प्रत्येक प्रजा देवता माननी है। आप का आशीर्वाद वज्र-कवच होगा। आप के स्पर्श में

संजीविनी शक्ति है। आप की कृपा दृष्टि से मृतक भी जी उठता है।

राजकुमार ने प्रार्थना की।

बेटा! रहने दो। मैं जानती हूं कि मुझ अभागिनी की योग्यता कितनी है! ज्योतिषी की बेटी विधवा बन जाती है। तुम्हारे कहने के अनुसार रत्ती भर भी मुझ में शक्ति होती तो क्या मैं अपने प्राणेश्वर को खो बैठती? अपनी प्यारी बहन को शरशय्या पर लेटने की नौबत आती? तुम जनता मुझे देवी कह कर तृप्ति पाती है! और परमात्मा की कृपा पर भरोसा रख कर जाओ।

देखिए, आप मेरे सिर पर हाथ रख कर कह दें कि तुम विजयी बनो।

— ऐसा कहते हुए हरिवबडग ने और एक बार चरणों में सिर झुकाया।

अतिमब्बे द्रवित हो उठी। बोली—

बेटा! धर्म युद्ध करो। प्रलोभन में मत फँसो। जाओ। विजयश्री के साथ लौट आओ। धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा।

अतिमब्बे के आशीर्वचन और स्पर्श पाकर हरिवदेवग को बड़ा आनंद मिला। तब उठ कर पास ही बैठे हुए रन्न की ओर देख कर बोला—

महाकवि की जय! आप समर-यात्रा में साथ दें तो अच्छा होगा। आप से हमारा उत्साह बढ़ेगा और युद्ध के साक्षात अनुभव से आपका साहित्य सजीव बनेगा।

हमारे कविवर्य कोरे लेखनी चलानेवाले नहीं हैं। यह तरुण पर परशुराम के शिष्य हैं। रन्न का परशुराम चरित एक बड़ा वीर रस प्रधान चंपू काव्य है। अतः इसलिए युद्ध कोई अपरिचित घटना नहीं है।

अतिमब्बे ने कहा।

जी हाँ ! मैंने भी परशुराम चरित पढा है। ऐसे कविसिह साथ रहेंगे तो समर भूमि भी रसागार बनेगी। दो उद्देश्य लिए यहाँ चला आया था। सर्व प्रथम आप से आशीर्वाद पाना था, पाया। दूसरा, इस महाशक को अपने साथ ले जाना है। आप की आज्ञा हो तो ये अवश्य साथ चलेंगे।

— इरिवबेडग ने प्राथना की।

रन्न ! क्या कुमार की बात मानोगे ?

अत्तिमब्बे ने रन्न से पूछा।

आप के आशीर्वाद मिले और आदेश हो तो मैं कुमार के साथ समर भूमि की यात्रा कर के लौट आऊँगा।

रन्न न अत्तिमब्बे पर सारा भार डाल दिया।

रन्न ! तुम्हारे द्वार पर भाग्य ही चला आया है। जाओ। देखो, समर में साहस की कमी न हो और धर्म-ग्लानि भी न हो !

— ऐसा कह कर विदा किया।

परमारो के साथ महीनो तक लोहा बजाना पडा। रन्न स्वय शस्त्र उठाना चाहता था, पर इरिवबेडग ने अनुमति नही दी। बोले–

अभी क्या बिगडा है कि आप हथियार उठा लें। आप की वाणी सजग हो, आप हमारे जवानो में आग सुलगाइए। उनका समरोत्साह बढाइए — यही हम आप से आशा रखते हैं — माताजी का भी यही आदेश था न ?

युद्ध समाप्त हुआ। इधर रन्न का गदायुद्ध भी समाप्त हुआ। इस काव्य का नाम साहस भीम विजय रखा गया। इरिवबेडग और साहस भीम में अभेद दृष्टि रख कर काव्य की रचना हुई। दुर्योधन का छल, निर्व्याज एव निश्छल प्रेम आदि सद्गुणो को भी मुक्त कठ से सराहकर चरित्राकन में नवीनता दिखाई गई थी। स्वाभिमान का सजीव वणन काव्य की विशेषता बन गई। कवि ने इरिवबेडग को

काव्य समर्पित किया था ।

चालुक्य सम्राट तैलप रन्न के मुखारविन्द से अपने पूज्य हरिवंश के युद्ध कौशल का वर्णन देख कर प्रसन्न हुआ । कर्नाटक के सम्राट ने कवि रन्न को कवि-सम्राट कह कर समादृत किया । सुवर्ण-दण्ड चमर चँवर हाथी घोड़ आदि सभी राजगौरव कवि को प्राप्त हुआ । मुद्दलग्राम को जागीर में दिया । रन्न ने इन सारी बिरुदावली को ला कर अत्तिमब्बे के चरणों में अर्पित किया और निवेदन किया —

माताजी ! मैं आप का स्नेह-शिशु हूं । यह सारी बिरुदावली आप की है । आप के पद रज के सम्मुख इनका क्या ऐसे हजारों राजा-महाराजाओं से प्राप्त सम्मान भी तुच्छ है । अपना कल्याण इन बिरुदों में नहीं आप के पद रज में देखता हूं । वही मेरे लिए सब कुछ है ।

रन्न कवि भाव परवश हुए ।

रन्न तुम्हारी कीर्ति से मेरा हृदय फूले नहीं समाता । तुम्हारा कीर्तिलता जैसे जैसे बढ़ रहा उठती है वैसे ही वैसे मेरे हृदय का सरसिज उमड पड़ता है । मेरे स्वामी का स्वप्न यथार्थ बन रहा है । अब तक तुमने जो भी काव्य रचना की वह केवल लौकिक धर्म लाभ है लोक प्रसिद्धि की भूख से प्रेरित थी । वह अब मिट गई होगी । अब आत्मोद्धार के लिए काव्य लिखो । तीर्थ करों की शरणागति ही मेरे लिए तुम्हारे लिए और समस्त लोक के लिए गतिप्रद है । तीर्थ करों की लीलाओं का वर्णन करो । तब मैं अपनी ओर से तुम्हें एक बिरुद दूंगी — समझे ।

— कह कर मुस्कराई ।

माताजी आप के शुभाशीर्वाद ही पर्याप्त है । तीर्थ कर पुराण रचूंगा । अब मैं नरकाव्य की रचना में प्रतिभा का अपव्यय नहीं होने दूंगा । धीमदातिमब्बे आप के आदेश का पालन करके कृतकृत्य

बनूंगा फिर मे भुज कर प्रणाम किया और चरण धूलि का तिलक लगा लिया ।

१६

चामुडराय ने माता जी की आज्ञा मानकर उसकी महादिच्छा को पूर्ण करने के लिए श्रवणबेळगोळ के चद्र-गिरि शिखर पर बाहुबली की बहदमूर्ति खुदवाई । यह समाचार हवा के साथ आसेतु हिमालय फैल गया । अभिनव समवसरण क्षेत्र बेळगोळ बना । श्रावको की कतार चाटी की कतार सी लग गई । रन्न कवि ने विजयपुर को समाचार भेजा । चामुडराय के आज्ञानुसार रन्न ने अत्तिमब्बे को सपरिवार भगवद्दशनार्थ आने का निमत्रण दिया । राचमल्ल गग ने तैलप, दल्लप और मल्लप को अलग अलग निमत्रण भेजा । अत्तिमब्बे ने निमत्रण स्वीकार किया । लक्कुडि की राजामाता को यथासम्मान लिवा चलने का प्रबध रन्न ने कर दिया ।

भगवद्दशन करने तक केवल फल और दूध पर रहने-का सकल्प अत्तिमब्बे ने किया । यह सुनकर उसके नातेदार और रिश्तेदार सब भय भीत हुए । कहाँ विजयपुर और कहां श्रवण बेळगोळ! जल्दी से जल्दी जाना भी चाहें तो कम से कम पद्रह दिन लगेंगें । रास्ते में पडनेवाले जिन-मदिरो के दर्शन करते हुए जाने लगें तो महीने से कम तो नही होगा । उतनें दिनो तक कैसे फल खाकर या दूध पीकर रहे? यात्रा के अवसर पर व्रत-नियमोका पालन कैसे सभव होगा? शरीर को इतना कसना ठीक नही ।

पद्मब्बे ने इन शब्दो में बहू को समझाया ।

माताजी ! मैंने संकल्प कर लिया । उन्हीं गोम्मटेश्वर बाहुबली की प्रेरणा से ही तो ऐसा किया । कुछ नहीं होगा — सब उनकी कृपा है । आप व्यर्थ चिंता नहीं करें ।

— अत्तिमब्बे ने दृढ़ता से कहा ।

बेटि ! तुम बड़ी हठीली बन गई हो । बड़ों की बात मानना चाहिए । उनके मना करने पर तुम्हें किसी अनुष्ठान में नहीं लगना चाहिए । दूध और फल के बदले रोटी और जल ले लो समझी ।

अम्मम्मे ने सुझाया ।

माँ ! तुम नहीं खाओगी तो मैं भी नहीं खाऊँगा ।

— अण्णिग देव ने कहा । उस समय सहसा उसके आँसू बह निकले ।

अण्णिग ! रोओ मत ! उनकी प्रेरणा से ही तो ऐसा कर रही हूँ । अब उनकी प्रसन्नता के लिए किया जा रहा है अतः किसी को उसका विरोध नहीं करना चाहिए । यह अनुचित होगा ।

— अत्तिमब्बे ने बेटे को समझाने के बहाने सब को समझा दिया । और लोगों ने इस बारे में कहना छोड़ दिया ।

अत्तिमब्बे ने रन्न महाकवि और पोन्न महाकवि को भी न्यौता भेजा । वे आए । फिर नगर भर में यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो भी बाहुबली के दर्शनार्थ उनके साथ जाना चाहे निकले । उनका सारा खर्च दिया जाएगा ।

असहाय और निस्सहाय व्यक्तियों के लिए अत्तिमब्बे कामधेनु थी । उसके सम्मुख आने पर दरिद्र से दरिद्र भी धन-सम्पन्न बन जाता । कष्ट में पड़े हुए लोगों का कष्ट दूर हो जाता । कभी वह रोगियों को देखती तो अपने हाथ से उनकी सेवा करती दवा देती और तंदुरुस्त हो जाने के पश्चात भी महीनों उनके लिए पुष्टिकर दूध फल आदि का प्रबंध करती । दीन दुखियों की सहायता करना उसका

व्रत था। जाति-पाति की बात सेवा में नही देखी जाती थी। ऐसी अन्नपूर्णा जब यात्रा के लिए निमत्रण दें तो कौन उस मौके को हाथ से जाने देगा? कुछ लोग यात्रार्थी बन कर आए। कुछ एक परिचारक वर्ग में सम्मिलित हुए। कल्पवृक्ष की छाया में रहते समय राजा और रक में विशेष क्या कुछ भी अतर नही रह जाता। अमृत बाँटने वक्त जिस किसी के हाथ में पडा वह अमर बन गया।

अत्तिमब्बे का यात्रा-दल प्रति दिन दस मिल चलता। सैकडो बैल गाडियाँ थी। बालक वृद्ध और रोगी गाडियो पर सवार थे। तत्परता से उनकी देख-भाल होती थी। अत्तिमब्बे, पदमब्बे और अण्णिग एक रथ पर जा रहे थे। औरो के लिए भी यथायोग्य रथ दिया गया था। अत्तिमब्बे केवल दूध और फल ले रही थी। सो भी दिन में एक बार। पर उसकी शक्ति कुठित नही हो रही थी। सभी यात्रियो से स्वय मिलकर सुख-सुविधा का विचार करती थी। उनको हिडोले पर बिठाए शिशुवो के समान सभाले ले जा रही थी। जिन-मदिरो में पडाघ डालती। सब ग्रामवासियो से मिलकर दान-दक्षिणा आदि से उनका यथायोग्य सत्कार करती थी।

पद्रह दिन बीत गए। अत्तिमब्बे के स्वास्थ्य में कुछ गडबडी दिखाई देने लगी। वह कमजोर बन गई। दिन में केवल एक बार दूध और फल मित मात्र मे लिया करती थी। पर बिना विश्राम लिए काम करती थी। परिणाम यह हुआ कि सेहत गिरती गई। इतना दुर्बल बन गई कि लोग घबरा गए।

बेटी! तुम कर्नाटक की देवी हो। तुम्हारे रहने से यह देश हरा भरा रहेगा। तुम दुबल हो तो देश दुबल होगा। देश की संस्कृति क्षीण हो जाएगी। दूध और फल ही सही कुछ अधिक लिया करो।

— पप महाकवि ने समझाया।

माताजी आप अन्न-जल त्याग से दुर्बल बनती जा रही हैं यह किसी को अच्छा नहीं लगता। यह व्रत आप के बूते का नहीं है छोड़ दीजिए। समवसरण के लिए आयोजन क्या निश्चित नहीं रहे? जिनेश्वर भी नहीं आप भी ही चिंता में डूबे रहें। आपने सेवाधर्म की दीक्षा ली है तो व्रतोपवासों की आवश्यकता आप के लिए नहीं है। पद्म महाकवि की सलाह मानिए। सोचिए, यदि वृक्ष की जड़ सूख जाय तो वृक्ष कैसे हरा रह पाएगा?

— *रन्न ने प्रार्थना की।*

मामाजी! आप और हम रत्नोपजीवी हैं। आप जैसे मर्मज्ञ भी मेरे संकल्प में विघ्न डालने का प्रयत्न करें यह क्या उचित है? इस मिट्टी के ढेले को क्या महत्त्व दे रहे हैं? क्या मेरे पीछे ही प्रलय हो जाएगा? मेरे मुँह के खाने पर ही जिन चूकना और मेरे अभीष्ट के सूखाने पर ही आना पड़ेगा। ऐसा मान कर चलूँ? क्या आप समझते हैं कि यह सब मैं करती जा रही हूँ। ममता ने आप की समझ को क्या मार डाला है?

— अत्तिमब्बे ने खिन्न होकर जवाब दिया।

पोन्न जी! कम से कम आप के कहने पर अत्तिमब्बे मान लें। एक बात कह देखिए। क्या हम लोग चुपचाप देखते रहें और कर्नाटक माता को भूखों मरते जाय?

पद्म ने पोन्न फुसलाया।

पद्म जी हम सन्यासी हम व्रतनियमों के पालन में कैसे विघ्न डालें? कौन जाने कि किस व्यक्ति में कौन-सी शक्ति छिपी रहती है? व्रतोपवास से अक्सर ही देहशक्ति क्षीण हो पर आत्म शक्ति की वृद्धि होती है। आप चिंता नहीं कीजिए।

पोन्न जी ने उत्तर दिया।

स्वामिन्! न जाने इस संसार में कितनी बार जन्म ग्रहण

किया है । विषय सुख के लिए अनत काल से अनत जन्म ले चुकी हूँ। केवल एक जन्म का एक अश परमपद पर अर्पित करना चाहती हूँ तो भा न जाने कितनी विघ्न-बाधाएँ आ रही हैं। हमारे आत्मीय गुरुजन परिजन ही विघ्न डालते हैं तो क्या करूँ।

— अत्तिमब्बे ने अत्यत विषाद व्यक्त किया।

बेटी ! तुम खिन्न न हो । चाहे जो परिस्थिति हो व्रत में बाधा न आने दो । ससार की दृष्टि से तुम और हम दोनो बडे सनकी हैं। हम दोनो के सिर अध्यात्म की सनक सवार है।

.... इन शब्दो में पोन्न कवि ने अत्तिमब्बे को आश्वासन दिया ।

करीब एक महीना बीता होगा कि यात्री-दल चन्नरायपट्टण पहुचा । उस रात को वहीं ठहरे । प्रात काल स्नानादि से निवृत्त होकर सब ने अल्पाहार लिया । अत्तिमब्बे ने अपने नियमानुसार दूध-फल लिया। सिद्धि की प्रतीक्षा में सफल हुए योगी के समान उत्साह से आगे आगे बढी । प्रतिक्षण बडी कातरता से परमात्मा के दर्शनार्थ सिर उठा उठा कर देखती न जाने कब मिलें । आधे घटे भर यात्रा की होगी कि सहसा दर्शन मिले । ऐसा लगा कि बाहुबली अपने मुग्ध मुखमडल पर मृदुमुस्कयान लिए यात्रार्थियो पर कपा दृष्टि फैला रहे हो । यात्रार्थियो का स्वागत कर रहे हो । सहस्रों कठो से एकाएक जयनोष हुआ । कदम कदम बाहुबली की मूर्ति स्पष्ट से स्पष्ट तर बनते गई ।

अगल बगल में धान के खेत थे मानो हरे मखमल बिछा दिए हो । जहाँ तहाँ क्रौंच बगुले आदि पक्षी उड रहे थे । एक के बाद एक जलाशय मिल रहा था। जलाशयो में अनगिनत कमल खिले थे। परमात्मा के दिव्य सान्निध्य के सूचक थे ये दृश्य ! ब्रह्मानद रसानद के आवरण में अधिक आकर्षक बन जाता है । वैसे ही श्रवणबेळगोळ

बाहुबलिपट्टन के प्रकृति-सौंदर्य से अत्यंत आकर्षक बनता जा रहा था। पर कवि का मन चंचरीक बनकर कमल के चारों ओर मंडराने लगा। इन कलाओं को देखते ही स्वयं कवि का मन उसके उन्नत इन्द्रगिरि पर भगवान का अनुभव करके पुलकित हो उठा। अत्तिमब्बे की दृष्टि में प्रकृति के कण-कण में भगवद्भक्ति ओत-प्रोत दिखाई दे रही थी।

रन्न ने सब में आगे बढ़कर चामुंडराय को यात्रा-दल के आगमन की सूचना दी। तुरंत श्रवणबेळगोळ के सदर फाटक पर आकर सपरिवार अगुवानी करने चामुंडराय खड़ा हो गया। उस महाकवि रत्न सहित आगंतुक साथियों का स्वागत किया। पोन्न के चरणों में नमस्कार करके पद रज लिया। काळलादेवी ने सब स्त्रियों का स्वागत किया। अत्तिमब्बे को अत्यंत दुर्बल देखकर दंग रह गई। बोली —

अत्ति! क्यों ऐसा बन गई हो? क्या कोई बीमारी है? तबियत अच्छी नहीं? हमारे स्वामी के दर्शन से अवश्य तुम्हारी सेहत सुधरेगी। अमृत पान करने का आनंद मिलेगा। तुम तो मुझे नहीं भुलाओगी।

काळलादेवी ने प्यार से अत्तिमब्बे के सिर पर हाथ फेरा। अत्तिमब्बे ने झुककर प्रणाम किया और कहा —

भाभी! आपने इस कलि युग में भी समवसरण को धरातल पर उतरवा दिया है। सारा देश आप का आभार मानता है। हमारे जैसे हजारों व्यक्तियों की अपेक्षा आप जैसे एक भी व्यक्ति हो तो देश का सौभाग्य ही सौभाग्य है।

— अत्तिमब्बे ने आदरपूर्वक कहा।

अत्ति! तुम कहाँ और मैं कहाँ? आगम कल्पलता बन कर तुम विचर रही हो। तुम्हारी बात सुन चुकी हूँ। तुम ने धवल जय धवल की सौ-सौ प्रतियाँ बनवाई हैं! तुम ही ने तो एक हजार मरकत प्रतिमाएँ बना कर दान दिया है। यह क्या कोई मामूली सी

बात है ? तुम्हारे दिए सुवर्ण का ढेर लगावें तो ऐसी एक मूर्ति बन सकेगी !

काळलादेवी ने मुक्त कठ से सराहा।

माताजी, आप एक बडे पर्वत हैं ! और अत्तिमब्बे करुणा तरग पूरित महासागर है ।

— पप महाकवि ने इन महिला-रत्नों का कव्यामय भाषा में वर्णन किया।

मैं पर्वत हूँ और यह सागर तब तो आप शून्य गगन हैं – यही न ?

काळलादेवी की हँसी सब को अच्छी लगी।

हाय ! हाय ! उन्नत विशाल और व्यापक वस्तुओ को आपस में बाँट लें तो मेरे लिए बचा क्या रहेगा ?

— रन्न ने घबराते घबराते कहा।

घबराओ मत रन्न ! तुम मार्तण्ड हो कवि मार्तण्ड !

— पप न रन्न की पीठ ठोकी।

जी ! धन्य भाग ! शून्य में भ्रमण कर सकूंगा। और सागर का रस भी ग्रहण कर सकूंगा और पर्वत

— रन्न की बात पूरी सुनी भी नहीं सब हँस पडे।

सब गोम्मटेश्वर के दर्शन के लिए चले। काळलादेवी की इच्छा थी कि दुर्बल अत्तिमब्बे को डोली के सहारे ले चले।

मामी ! मुझ पर आप का असीम स्नेह है। मानती हूँ ! भला, डोली पर मैं क्यो चलूं । बच्ची थोडे ही हूँ ।

अत्तिमब्बे ने असम्मति दी।

बच्ची ! तुम बडी कमजोर हो । अब हठ मत करो । स्वामी का दर्शन करना मुख्य है । चाहे जैसे उनके पास पहुचो ! बच्चो, बूढो और रोगियो को चढ कर अपने पास आने का आग्रह दयामय गोम्मटस्वामी का नहीं है । जैसे तैसे ही सही उनके पास

पहुंचे यही मुख्य है। उनकी कृपा दृष्टि से मंदस्मिति से अपने पास आनेवालों को देखते हैं। हम लोग लोग गोम्मट का भजन करें तो बैठे बैठे सुनेंगे। बैठे बैठे गाएंगे तो खड़े खड़े सुनेंगे। हम खड़े होकर यशोगान कर तो नाचते हुए सुनेंगे। हम उन के भजन कीर्तन में मग्न होकर सुनें तो अपना सौभाग्य ही है बेटी! बेटि तुम मेरी अतिथि हो हमारे कहने के अनुसार चलना ही होगा। तुम डोली में बैठो।

— [illegible] ने आग्रह किया।

स्वामी! कृपया इस विषय में मुझ पर दबाव न डालिए। मैं केवल निमित्त मात्र हूं। गोम्मटेस्वामी मुझे अपने सान्निध्य में उठा ले जाएंगे। ऐसे कृपालु के पास जाने के लिए इन बेचारों के कंधों पर चढ़ूं? उनका काम बंद कर जीव ऊर्ध्व-गामी बनते हैं! क्या यह पहाड़ चढ़ नहीं पाऊंगी?

— अत्तिमब्बे ने दृढ़ता पूर्वक कह दिया।

बेटि क्या तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट होने लगी है? निर्जल निराहार रहने से तुम्हारी देह एक दम कमजोर हो गई है। पैदल निकलोगी तो उनके पास तक पहुंच ही न सकोगी। बड़ी बड़ों की बात मानो। डोली पर चढ़ो।

— कुछ स्नेह भरे अधिकारवाणी से जक्कणब्बे ने कहा।

माताजी आप क्या उस मेंढक की कहानी भूल गईं? उसने महावीर स्वामी का समवसरण देखने की अभिलाषा से एक कमल पुष्प लेकर विपुलाद्रि पर जाने का संकल्प किया। वह गुणस्थान से गुणस्थान तक चढ़नेवाले महासाधक की भांति चलते चलते जा रहा था कि रास्ते में श्रेणिक महाराज की सवारी आई। आप हाथी पर चढ़ आ रहे थे। तब एक अनहोनी घटना हो गई। हाथी से वह मेंढक कुचला गया। भगवान के दर्शन की आकांक्षा लिए वह

चल वसा । उसके अत करण में समवसरण का दृश्य समा गया था अतएव समाधिमरण का फल पाकर वह देवता वना । विमान पर चढ कर महावीर के समवसरण समारोह पर श्रेणिक से पहले ही जाकर सम्मिलित हुआ । बीच रास्ते आप जिस अनीष्ट की सभावना देख रहे हैं वह सभव बन जाय ! अहोभाग्य है । पर कहां मैं उस योग्य हूँ !

अत्तिमब्बे भावावेश मे बोल उटी ।

लोगो ने सोचा कि उमसे कुछ कहने जाना ही व्यर्थ है ।

अत्तिमब्बे का उत्साह बेहद था पर देह की शक्ति सीमित थी । दस एक कदम चढ सकी पैर ने जवाव दे दिया । आगे चढना सभव नही हुआ । बीच बीच में दम लेते हुए चढने लगी । सो भी कुछ दूर तक । आगे वह भी असभव बन गया । शाति और जक्कि सहारा देने को तैयार होकर बोली

मामी ! हम दोनो के सहारे चढ सकती हो । तुम कधो पर हाथ रखे रहो ! हम सभाल लेंगे । शाति ने विनती की ।

शाति ! क्या नही जानती हो कि सब को अपना अपना कर्म फल आप भोगना पडेगा ? यह सहारा दे सकती हो , पर भवसागर में डूबी हुई मुझे कौन सहारा दे पाएगा ?

— वडे मार्मिक ढग से प्रश्न किया ।

आप तो सारा पुण्य अकेली बटोर लेना चाहती हैं । हम लोगो को भी कुछ प्राप्त कीने का मौका देती जक्की ने आक्षेप किया ।

वेटी ! सकल्प करने पर दृढता से पालन करना चाहिए । जैसे जैसे शरीरक सुखसुविधाएँ अधिक होती हैं । वैसे ही वैसे हम भगवान से दूर दूर पडते जाते हैं । धर्म से घवडाने लगेंगे । जन्म जन्मातरो में इस घोस्ढे को आराम पहुचाने का ही तो प्रयास किया है ? इतना सुख पाकर भी इस देहे ने आत्मोन्नति के लिए क्या किया है ? शाति ! मैं देह के अधीन नही हूँ देह को अपने वश में

रखना चाहती हूँ कि माँ के समान तुम मेरी शुभकामना देने आ रही हो।

अत्तिमब्बे ने खिन्न होकर कहा।

पहाड़ को चूमते हुए आकाश में सिर तानकर वह विराट बाहुबली की मूर्ति दर्शनीय थी। विमलकमी-वासना मादक उसके माथे पर खेलते रहे। उस मूर्ति को एक ही बार देख लेना हमारी आँखों के बूते की बात नहीं। बलद दृष्टि तथा अविकासित आत्माओं के लिए कैसे संभव हो सकती है! अतएव हम कलश दर्शन पा सकेंगे। सहज एक कमल पर बाहुबली खड़ा है। चरणों के चारों ओर बाँबी बने हैं मानो घातिकर्म उस रूप में खड़े खड़े अपने बनाव बन जाने का दुःख धुना रहे हों। उन बाँबियों के विवरों से सर्प झाँक रहे हैं। महारमता वहीं पतला का आश्रय पाकर ऊपर चढ़ती गई है जो घुटनों के सहारे चढ़ते चढ़ते किसी प्रकार हाथ का सहारा पा लिया है वहाँ से बाहुओं लिपटी हुए पत्र तथा फूलों की गुच्छाओं से सुशोभित है। दर्शकों की दृष्टि भी लताओं का अनुसरण करते हुए ऊपर को चढ़ती जाती है। विशाल वक्षस्थल देखना चाहिए कैसे विशाल है। भुजदण्ड को छोटी मोटी के समान कंधों से समर्थ महा शक्ति शाली बाहु हैं। ठोड़ी कैसे आकर्षक है! जरा ऊपर दृष्टि ले जाने पर मूर्ति कला की चरम परिणति से अभिभासिता मृदु मंदहास ओठों पर दिखाई देगा, मंदहास की लहरें अनंत सुख की तरंगों से दिखाई देगी। नाक आँख भौंहे और भाल घुँघराले केश – एक से एक बढ़कर चित्ताकर्षक हैं। मूर्ति-कला की सीमा बाहुबली का यह पाषाण प्रतीक है।

अत्तिमब्बे ने मूर्ति की इस भव्याकृति की झाँकी पाकर कम्पता का अनुभव किया। सहसा तब नागदेव और गुंडमय्य का स्मरण जागृत हो उठा अर्थात् प्रसाद धामर तब से वात्सल्य प्रभावित हो उठा।

स्वामी ! तुम्हारे दर्शन पाने तक उनको जिलाए रखते। तुम्हारे ही समान वे भी त्यागीमानी थे। तुम्हारे ही जैसे वे भी साहसी थे। यदि जीवित रहते तो तुम्हारे ही जैसे सभव है कि वे भी त्यागी बने होते।

अत्तिमब्बे बडबडाने लगी।

गुड्डू ! तुम हतभागिनी हो। नही नही तुम दोनो को अपने निकट बुला लेने का भाग्य गोम्मटस्वामी का ही नही है ! प्रभो ! आज वे दोनो जीवित होते तो तुम्हारी मूर्तियां बनवा बनवाकर भारतवर्ष के कोने कोने में प्रतिष्ठापित करते अर्थात् राष्ट्र को रक्षाकवच से मढते हमारी गुड्डू का हृदय इतना उन्नत और विशाल था कि ऐसी दसो मूर्तियो को आराम से सुला लेती थी। उसकी विशालता की समता क्या सागर कर पाते ! प्रभो उन दोनो को मुझसे छीन कर मुझे अधा कर रखा।

अत्तिमब्बे की परा-वाणी से आकाश भी काप उठा। ठीक उसी समय वहां किसी बूढी को लिए कोई आया और वह उस बूढी से पूछने लगा —

नानी ! हम परमात्मा के निकट आए हैं। क्या उनके चरणो तक पहुचा द।

चरण के पास ! नही–नही। मुझे यही बैठने दो। जब तक मेरी दृष्टि मुझे नही मिलेगी तब तक मैं अन्न जल ग्रहण नही करूंगी।

ऐसा कहते कहते कुछ दूर सरक कर बैठ गई। उस कमी का स्पश हुआ सा लगा।

यह क्या है ? क्या किसी को कुचला ? हाय हाय।

– बूढी ने कहा।

बूढी मां ! मैं ! मेरा नाम अत्तिमब्बे है।

अभिमन्यु! यह नाम सुनते ही बुढ़िया के शरीर में बिजली का संचार हुआ। बोली —

कौन अभिमन्यु? तुम्हारा गाँव कौन सा है? इसी नाम की एक देवी विजयनगर में रहती है।

हाँ हाँ! मैं विजयनगर की अभिमन्यु हूँ।

तब तो मेरा अहोभाग्य है। ठीक समय पर मिली हो। तुम दानचिन्तामणि हो न? तुम कल्पतरु हो। चिन्ताग्रस्त व्यक्तियों के लिए चिन्ता दूर करनेवाली चिन्तामणि हो। माँ तुमने सब की इच्छा पूर्ण की है। मेरी भी इच्छा पूर्ण करो। मुझे दृष्टि दान दो।

उस बुढ़िया ने ऐसे गिड़गिड़ा कर माँगा कि जैसे कंगाल श्रीमंतों से माँगा करते हैं।

बूढ़ी माँ तुम्हारा गाँव कहाँ है?

कोल्हापुर। वहाँ से रवाना होते समय मेरी दृष्टि अच्छी थी। मेरे पास पैसे नहीं थे। हमारे गाँव से कुछ लोग चले। उनके पीछे पीछे चल पड़ी। वे बड़े धर्मात्मा थे। रास्ते भर मुझे खिलाते पिलाते रहे। जब तक आँखें सूझ रही थीं पैदल रास्ता चलती रही। पर जैसे जैसे दृष्टि धुँधली सी हुई, लाठी पकड़ कर उसके चलने लगी।

तब क्या तुम्हारी दृष्टि गाँव से निकलते समय स्पष्ट थी?

थी। बहुत अच्छी थी। गाँव से निकले तीन महीने बीत गए। अभी अभी एक सप्ताह पूर्व मैं स्पष्ट देख सकती थी। धीरे धीरे आँख दुखती गई। अब तो महापुरुष है कुछ भी दिखाई नहीं देता। देवी एक बार मेरा स्पर्श करते हुए बोलो कि तुम्हारी दृष्टि प्राप्त हो। मुझे विश्वास है कि मेरी दृष्टि साफ हो उठेगी। मैं देख सकूँगी। एक बार मैं जगती प्रभु देखना चाहती हूँ। बाद का मेरी दृष्टि सदा के लिए बुझ जाय।

बूढी माँ। क्या तुमने इससे पूर्व मुझे कही देखा था ?

हमारे देश में तीन व्यक्ति इतने प्रसिद्ध हैं कि उनको जिन्होने नही देखा वह सचमुच अभागा ही होगा। उन तीनो में पहला स्थान तुम्हारा है, अत्तिमब्बे तुम्हारा है! दूसरा स्थान काळलदेवी का, और तीसरा स्थान है सइ बाहुबली का। इनको देखने के बाद और कुछ नही देखा तो कोई नुकसान नही। प्रथम दोनो को मैंने कोल्हापुर में देखा था। अब मेरे प्रभु के दर्शन के लिए पाच सौ मील पैदल आई। पर आखिरी घडी में निगोडी आँख बुझ गई। अब देवी दृष्टि दान दो हे दानचितामणि ! नही तो मैं यही अनशन करके मर जाऊँगी।

बूढी माँ ! मैं भी एक सामान्य अबला नारी हूँ। दृष्टिदान देने की क्षमता मुझ में कहाँ ? पुरखो ने सग्रह करके अपार सुवर्ण-राशि रख छोडी थी। उसे बाँट बाँटकर खाली करती आई। तालाब का पानी भरा था, नाले में बहा दिया। यह अपनी मेहनत की कमाई थोडे ही थी। जनता की सपत्ति थी जनता में बाँटी गई। तालाब का पानी तालाब में ही समा गया। बस कतज्ञ जनता मुझे दान-चितामणि कह कर सम्मानित करती है।

रहने दो देवि ! मेरे लिए प्रभु से प्रार्थना करो किसी तरह दृष्टि-दान दो।

बुढिया बच्ची सी मचलने लगी। अत्तिमब्बे के चरण पकड कर रो पडी। अत्तिमब्बे का अत करण विश्वानुकप से द्रवित हो उठा। सीधे उठकर प्रभु के चरणो के निकट आई। प्रभु के चरणो का शुद्ध जल से अभिषेक किया। उस जल के साथ आँसू भी मिले थे। उस पादोदक की कुछ बूंदे उस बुढिया पर छिडकाई गई। अत्तिमब्बे ने आँखें बद करके प्रायना की। .. हे प्रभो ! यह एक जीव है जो तुम्हारे दर्शन के लिए लालायित है। हे दयामय ! दया करो। कृपालु ! कृपा करो। मैं अपनी एक आँख से तृप्त होऊगी। दूसरी

आँख की ज्योति इस प्रतिमा को मिल जाय। हे प्रभो यदि बुढ़िया को आँखें नहीं दी तो तुम्हारे सिर मेरी सौंह।

— इस प्रकार अतिमब्बे ने भक्ति परवश होकर कहा। पादोदक के स्पर्श से उस बुढ़िया ने यह अनुभव किया कि मानों चाँदनी ही उस पर छिड़काई गई। सूरज पर से बादल जैसे हट जाता है वैसे ही आँख पर से वह परदा भी हटा जिस कारण दृष्टि धूम सी गई थी। उसका कुतूहल और उत्साह जैसे जैसे बढ़ता गया वैसे ही वैसे उसकी दृष्टि भी स्पष्ट बनती गई। ठीक उसी समय कहीं से ठंडी ठंडी हवा बहने लगी। काले बादलों ने घर कर सूरज के तेज कम कर दिया। कुछ बूँदें भी गिरीं। प्रभु पर स्वर्गीय अमृत कलश का अभिषेक हुआ। बरसात का जल उस प्रशान्ताकृति पर से उतरते उसका बड़ा आकर्षक बना रहा था। बुढ़िया की आँखें स्पष्ट दिखाई देने लगीं। उसने बाहुबली की मूर्ति को आपाद मस्तक देखा। बरसात में भीगती जा रही थी पर जनता को इसका ध्यान ही नहीं था। सब आनंद सागर में डूब हुए थे। अतिमब्बे के आनंद का तो पार पार ही नहीं था।

अतिमब्बे ने सभी का अनुग्रह करके शर्तें दी! जनता में यह समाचार विद्युत् गति को भी मात करते हुए फैल गया। मस्तकाभिषेक के निमित्त भरत भूमि के कोने कोने से भक्तजन आया ही था। उनमें जो जो मूक बधिर अन्धे लूले कोढ़ी लंगड़े आदि थे सब अतिमब्बे के पास आए। अपना कष्ट दूर करने के लिए प्रार्थना की। बाहुबली की अपेक्षा जनता अतिमब्बे के कीर्ति-गान में तन्मय होने लगी। अतिमब्बे ने देह की परवाह की ओर ध्यान न देकर दिन रात उनके रोगों को दूर करने के निमित्त प्रभु से प्रार्थना करने लगी। जिसका प्रारब्ध शुभ था उसको वांछित फल मिला। प्रभु ने अतिमब्बे को निमित्त बना लिया। उसका यश दिग्दिगन्त फैलने लगा

अजितसेनाचार्य जी ने अत्तिमब्बे से कहा —

जनता के दुःख दर्द को दूर करने जाकर अपनी सारी शक्ति गँवाती जा रही हो। यही हाल रहा तो साल डेढ साल में अपनी शक्ति से वंचित हो जाओगी। क्या कोई साग-पात तौलने के लिए सोने का तराजू और हीरे का बटुआ बनवाएगा! इन बातों से विरत हो जाओ।

आचार्य जी, क्षमा कीजिए! भवरोग को दूर करने के लिए तीर्थंकरों ने युग युग तक तपस्या नहीं की? स्वामी! तीर्थंकर महाप्रभुओं की शक्ति अपरिमित थी। मैं गरीबिन क्या कर सकूंगी? यदि मुझसे जनता का दुःख दर्द दूर हो सकताहो तो हो जाने दीजिए। मैं निमित्त मात्र हूँ। सब प्रभु की कृपा है।

— अत्तिमब्बे ने विश्वानुकंप से आर्द्र होकर कहा।

देखो बेटी, तीर्थंकरों की बात अलग है। इस मर्त्य लोक में कई ऐसे महानुभाव हैं जिन्हें अपूर्व सिद्धियाँ मिली रहती हैं। पर विशेष परिस्थिति के अतिरिक्त अन्यत्र उसका उपयोग नहीं करते। तुम तो सिंचाई करने की धुन में जलाशय की बाँध ही तोड़ने लगी हो

आचार्य जी ने कहा।

तब मैं क्या करूं? बताइए।

अत्तिमब्बे नतमस्तक थी।

बेटी! जनता से सहानुभूति रखो। धीरज बंधाओ। भगवान का भरोसा रख कर भक्ति सहित प्रार्थना करने कहो। वे प्रार्थना करें। अन्यथा तुम्हारी यह दया अनुचित होगी। जनता आलसी बनेगी और तुम्हारा दीवाला निकलेगा। अब भी चेतो! यह महिमा-प्रदर्शन की भूख दबाई जाय। अपने आत्मा-कल्याण की बात सोचो कोई भी तीर्थंकर यों ही जनता के दुःख दर्द दूर नहीं करते। जिस प्रकार वैद्य दवा देता है और परहेज

कर रोगियों को पथ्य के लिए कहता है उसी प्रकार तीर्थंकर भी स्वास्थ्य-लाभ का मार्ग सुझाते हैं। और केवल आवश्यक प्रतीत होने पर दया या अनुग्रह करते हैं। अनंत शक्ति संपन्न परमात्मा ही जब इतना सजग रहता है तो अल्पशक्ति युक्त तुम्हारे लिए कितना संयम चाहिए, सोचो तो सही। अपने अपने कष्टों से पार होने के लिए उन्हीं को प्रार्थना करने का आदेश दो। जनता की भक्ति भावना को जागृत करो। सब में अनंत शक्ति अंतर्निहित रहती है। तुम्हारा काम उस शक्ति के स्रोत की ओर संकेत करना मात्र है। समझी!

— आचार्य श्री ने चेतावनी देने के साथ अतिमब्बे को कर्तव्य का रास्ता भी दिखाया

१७

अण्णिग देव युवक हुआ था। लक्कुंडी में एक जिनालय बन कर तैयार हुआ था। मूर्तियों में बाहुबली की मूर्ति अद्भुत थी। मंदिरों में लक्कुंडी का मंदिर अद्भुत था। जनता मुक्त कंठ से दोनों का यशोगान कर रही थी। लक्कुंडी राजधानी बनने योग्य कोट महल, बुर्ज आदि से संपन्न हो गया। अतिमब्बे के नेतृत्व में ही महल मंदिर, प्रासाद आदि बन गए। लक्कुंडी के जिनालय में पंच कल्याण महोत्सव की तैयारी होने लगी। अतिमब्बे की योजना थी कि मंदिर में जिनमूर्ति की स्थापना हो महल का प्रवेशोत्सव हो और साथ ही साथ अण्णिग देव का शुभ विवाह भी संपन्न हो। अतिमब्बे की इस योजना का सब ने अनुमोदन किया।

अतिमब्बे के पांच भाई थे। पांचों के यहाँ कन्याएँ थीं। सब

के सब अत्तिमब्बे की बहू बनना चाहती थी। एक दृष्टि से उन में होड मच गई थी।

बेटियो ! मेरा इकलौता बेटा है । कैसे मैं सब को बहू बना सकूंगी ? एक, नही तो दो को बहू बना सकूंगी ।

. . अत्तिमब्बे ने इन भतीजियो को समझाया ।

मामी ! यह अण्णिग के अनुरूप है । विचार कर देखो।

— गुडुमय्य की छोटी बेटी की ओर से किसीने कहा ।

मामी ! तुम सुमती को मन भूलो, सबसे सुदर है । अवश्य अण्णिगदेव इसे पसद करेंगे ।

— एळमय्य की मझली बेटी की ओर से किसीने कहा ।

मामी ! चद्रप्रभा में रानी बनने योग्य लक्षण है । देखो बहन कैसा गठीला है ।

— पोन्नमय्या की दूसरी लडकी को सिफारिश इन शब्दो में पेश हुई ।

मामी ! वह खूब गाती है आप के बेटे को रिझाने की कला भी जानती है। रोज आप को भजन सुना करेगी आप सोचिए और इसे ही अपनी बहू बना लीजिए ।

आहवमल्ल की ज्येष्ट पुत्री का प्रस्ताव इन शब्दो में किया गया ।

बल्ल की बडी लडकी घुघुराले केशवाली विमला थी। उस की योग्यता को प्रतिपादित करते हुए कहा गया

मामी ! यह खूब अभिनय कर सकती है । जिनेंद्र की पच कल्याण महोत्सव का ऐसा अभिनय कर सकेगी कि आप के समक्ष वह यथार्थ में उतरा हुआ लगेगा । गाने में भी किसी से कम नही है ।

अत्तिमब्बे ने सब की बातें सुनी । सब को सात्वना देती हुई

बोली कि —

देखो यदि अजित माने तो मैं उस को वधू बना लूँगी।

अजित ने शीतला और विमला को पसंद किया। एक ही मुहूर्त में एक साथ दोनों कन्याओं का अजित से पाणिग्रहण हुआ। लक्कुंडी उस समय अमरावती के समान सुशोभित थी। पंचकल्याण महोत्सव हुआ जिनेंद्र का प्रतिष्ठापना-समारोह भी सपन्न हुआ। इसी समय रन्न विरचित अजित पुराण का प्रकाशन-महोत्सव भी अभूत पूर्व ढंग से मनाया गया।

अजितनाथ दूसरे तीर्थंकर थे। आदिनाथ के शिष्य चरितों का अनुवाद पंप महाकवि ने कर दिया था। अब कवि चक्रवर्ती रन्न ने अजितनाथ की लीलाओं का गान किया था।

अयोध्या में जितशत्रु राज कर रहा था। उसकी रानी विजयसेना देवी थी। इन की ही संतान अजितनाथ थे। आप के जन्म के अवसर पर देवलोक ही पृथ्वी पर उतर आया था। अहिंसा धर्म के प्रभाव को दिखाने व प्रसार करने के लिए अवतरित अजितनाथ का जन्मोत्सव बड़ी धूम से मनाया गया। यथा समय अजितनाथ का पाणिग्रहण एक हजार कन्याओं से हुआ। वे युवराज भी बने। सहस्र लक्षक काल कामनाओं के साथ कई वर्ष राजक्रीड़ा आदि भोग विलास में मग्न रहे। एक बार उल्कापात हुआ। सहसा उनको लगा कि सारा संसार ही एक उल्का है न जाने कब इसका भी पतन होगा। अतएव सहसा विरक्त बने और दिगंबर संन्यासी हुए। कई वर्षों तक तपस्या करते करते जीव और कर्म के स्वरूप और संबंध समझा। तप में सिद्धि मिली। घाति कर्म नष्ट हुआ। अजितनाथ तब जिनेंद्र बने। समवसरण महोत्सव में सभी देवगण उपस्थित हुए। उस सभा में इस जिनेंद्र ने तीनों लोकों के सम्मुख जीव और धर्म का स्वरूप समझाया और उनकी संख्या उन से होनेवाली अनर्थों का वर्णन किया।

कर्म से छुटकारा प्राप्त करने का रहस्य बताया। इन सबका उपदेश सर्व भाषामयी दिव्य ध्वनि में दिया जिसे श्रव्यकोटि ने सुना और समझा।

इन तीर्थंकर के काल के चक्रवर्ती सगर थे। रत्न ने अजितनाथ पुराण में इनका भी वर्णन किया है। सगर की राजधानि अयोध्या थी। वही से आप षट्खण्डो पर शासन कर रहे थे। वृषभाचल पर पूर्व में भरतेश ने अपनी विजयगाथा खुदवाई थी। उसी की बगल में सगर ने कविरत्न से अपनी विजयगाथा खुदवाई। छियानबे हजार सुर सुदरियां उनका रनवास में थी और साठ हजार पुत्र थे और षटखण्डो के राज्यशासन आदि में निरत सगर ससार सागर में पूर्ण निमग्न थे। उनको समझा बुझाकर आत्मकल्याण के मार्ग पर लगाने के उद्देश्य से, उनके जन्म जन्मातर के मित्र मणिकेतु दो-एक बार प्रयत्न कर विफल मनोरथ हुए थे।

एक बार सगर चक्राधिप के साठ हजार कुमारो ने लीला से कैलास पवत के चारो ओर खाई खोदने का सकल्प किया। इससे असतुष्ट होकर मणिकेतु ने अपनी विद्या के बल पर भ्रम उत्पन्न कर दिया कि इन सब को भस्मी भूत कर दिया हो। उन में से केवल भगीरथ बच गया। उसने अपने भाइयो का हाल सगर से निवेदन किया। उस समय विप्र-वेश धर कर मणिकेतु आया और अपने इकलौते बेटे को, जिसे मृत्यु ने छीन लिया था, बचा देने का अग्रह करते हुए रो पडा। सगर की रानियां भी उसे घेर कर अपनी अपनी सतान को जिला देने का आग्रह करने लगी। सगर की सभी बहुऐं वहां आ गई अपने पतियो के वियोग में आंसू बहाते बहाते सागर ही उमड दिया। इस ऊधम के बीच सगर में वैराग्य जगा। ससार की अनित्यता का बोध उसे हुआ। संसार का त्याग किया। प्रेयसियो की ओर भी नही देखा। पुत्रो के शव तक नही देखा।

कर्म से छुटकारा प्राप्त करने का रहस्य बताया। इन सबका उपदेश सर्व भाषामयी दिव्य ध्वनि में दिया जिसे श्रव्यकोटि ने सुना और समझा।

इन तीर्थंकर के काल के चक्रवर्ती सगर थे। रत्न ने अजितनाथ पुराण में इनका भी वर्णन किया है। सगर की राजधानि अयोध्या थी। वही से आप षट्खण्डो पर शासन कर रहे थे। वृषभाचल पर पूर्व में भरतेश ने अपनी विजयगाथा खुदवाई थी। उसी की बगल में सगर ने कविरत्न से अपनी विजयगाथा खुदवाई। छियानवे हजार सुर सुदरियाँ उनका रनवास में थी और साठ हजार पुत्र थे और षटखण्डो के राज्यशासन आदि में निरत सगर ससार सागर में पूर्ण निमग्न थे। उनको समझा बुझाकर आत्मकल्याण के मार्ग पर लगाने के उद्देश्य से, उनके जन्म जन्मातर के मित्र मणिकेतु दो-एक बार प्रयत्न कर विफल मनोरथ हुए थे।

एक बार सगर चक्राधिप के साठ हजार कुमारो ने लीला से कैलास पर्वत के चारो ओर खाई खोदने का सकल्प किया। इससे असतुष्ट होकर मणिकेतु ने अपनी विद्या के बल पर भ्रम उत्पन्न कर दिया कि इन सब को भस्मी भूत कर दिया हो। उन में से केवल भगीरथ बच गया। उसने अपने भाइयो का हाल सगर से निवेदन किया। उस समय विप्र-वेश धर कर मणिकेतु आया और अपने इकलौते बेटे को, जिसे मृत्यु ने छीन लिया था, बचा देने का अग्रह करते हुए रो पडा। सगर की रानियाँ भी उसे घेर कर अपनी अपनी सतान को जिला देने का आग्रह करने लगी। सगर की सभी बहुएँ वहाँ आ गई अपने पतियो के वियोग में आँसू बहाते बहाते सागर ही उमड दिया। इस ऊधम के बीच सगर में वैराग्य जगा। ससार की अनित्यता का बोध उसे हुआ। ससार का त्याग किया। प्रेयसियो की ओर भी नही देखा। पुत्रो के शव तक नहीं देखा।

दिगंबर संन्यासी बन गए। उधर समाचार के सुनते ही सगर चक्रवर्ती पश्चात् राज-रंग मोह निद्रा से जाग उन्होंने पिता की विरक्ति की बात सुनी। उन का भ्रम भी दूर हुआ। वैराग्य के महापूर में बह गए। पुत्र के सब दिगंबर मुनि बने। कुछ समय के बाद सगरचक्री भी अपने पौत्र भगीरथ को राज्य सौंप कर दिगंबर बने और कठोर तपस्या में निरत हुए। कालक्रम में कर्मक्षय हो गया केवल ज्ञान संपन्न हुए। रन्न ने अजितनाथ तथा सगर के इस दिव्य चरित्र को अत्तिमब्बे के परिवार को सुनाया। इसे सुनकर सब प्रसन्न हुए।

अजितनाथ पुराण में रन्न ने अत्तिमब्बे का गुणगान भी मुक्त कंठ से किया था। अजितनाथ पुराण के उपोद्घात के रूप में अत्तिमब्बे का वृत्त जोड़ा गया है। अत्तिमब्बे का नाम इस कारण से अमर बना है। अत्तिमब्बे के व्यक्तित्व को बड़े ही सुंदर निरूपित किया है। पुराण प्रसिद्ध महिला रत्नों की कतार में रखकर दिखा दिया है कि वह किसी से कम नहीं है। रन्न ने अत्तिमब्बे को जिन जननी के समकक्ष माना है। सुवचन वनिता / कविवर कामधेनु / चक्रवर्ति पूजिता / जिनशासन प्रदीपिका / दानचिंतामणि / विनय चूड़ामणि / सम्यक्त्व शिरोमणि / शीलालंकृता / गुणमाला कलिका आदि विशेषणों से रन्न ने अत्तिमब्बे का यथार्थ गुणगान किया है।

अत्तिमब्बे ने अजितपुराण की एक हजार प्रतियाँ बनवाईं। मठों और मंदिरों में इसे बाँट दिया। योग्य व्यक्तियों को भी दान दिया। महामना अत्तिमब्बे ने रन्न का सुवर्ण तुलाभार करके वह सुवर्ण कवि को दे दिया। और भरी सभा में रन्न का गुणगान करते हुए सम्मानित किया। कन्नड भाषामृत को दुहकर औटाकर इससे मलाई निकालकर रखने का श्रेय पंप कवि का था। कन्नड भाषामृत जमाकर दही बनाकर मथकर उससे नवनीत निकालने का श्रेय पोन्न का था। कन्नड भाषामृत से बने नवनीत को औटाकर सुगन्धित घृत

बना देने का श्रेय रन्न के पाले पडा । ये कन्नड साहित्य के रत्न त्रय हैं। मैं दानचितामणि हूँ सही, पर मेरा यह पुत्र रन्न केवल दान-चितामणियो और सम्यक्त्व चूडामणियो का यशोगान करनेवाले चारण शिरोमणि है।

ऐसा कहकर अत्तिमब्बे ने सब का आनद बढा दिया।

## १८

राष्ट्रकूटो के बाद गगराज्य दुबल बना । चामुन्डराय ने शस्त्रसन्यास ग्रहण किया और गोम्मट के सान्निध्य में ही आत्मचितन में लीन रहने लगा । जैसे ही समर परशुराम के शस्त्रन्यास का समाचार चोळो ने सुना तो उनमें सुप्त राज्य-दाह रूपी साप फन फैलाने लगा । कर्नाटक पर मद गज के समान चढ आए, पदतल पर आए हुए गावो को कुचला डाला । इस प्रकार चालुक्य साम्राज्या पर धाक जमाने के निमित्त आगे बढे । इरिवबेडग ने तुगभद्रा पार करके चोळो का मुकाबिला किया । सर्व सेनापति अण्णिगदेव ने इरिवबेडग का दाहिना हाथ बनकर चोळो से युद्ध किया । युद्ध में चालुक्य जीत तो गए पर दुर्भाग्य से ठीक उसी समय वर्षा प्रारभ हुई । तुगभद्र में बाढ आई । नदी के इस पार चालुक्यो की सेना, रसद उस पार रह गई । शस्त्रास्त्र भी उसी पार था । चालुक्य सेना हतबुद्धि-सी हो गई । न रसद न शस्त्र । करें ही क्या ? ऐसे अवसर का लाभ उठाते हुए चोळो ने फिर से धावा बोलने का निश्चय किया और रास्ते में पडनेवाले गाँवो को लूटते हुए अपने लिए अवश्य रसद आदि जुटाने लग । पहले चोळ हार गए थे और दुम दबा कर भाग खडे हुए थे।

अब रनोत्साह ने गुजरात की ओर कूच किया । इधर विजई चालुक्य सेना खाली हाथ रह गई थी । दोनों के बीच में केवल छः मील का अन्तर रहा होगा । एक के सिर पर विजय सवार थी इसी के कारण दूसरे के सिर पर शैतान सवार था बदला लेने के क्रोध के कारण !

एक दिन चोलों के पड़ाव में एक पालकी आई । उसके साथ पन्द्रह-बीस कहार भी थे । सैनिकों ने उन्हें रोका और डाँट कर पूछा कि तुम कौन हो ? और कहाँ से आ रहे हो ? इस पालकी में कौन है ?

हम कल्याणी जा रहे हैं ? पालकी में राजमाता विराज रही है ? — कहारों ने कहा ।

यह उत्तर चोलों को असमंजस में डाल दिया । फिर उन चोलों ने सोचा कि यदि इसे हम कैद कर रखें तो अवश्य चालुक्य सन्धि कर लेने के लिए विवश हो जाएँगे । इस अवसर का खूब लाभ उठा सकते हैं । सेनापति को समाचार दिया गया । उन्होंने आते ही पालकी से उतर जाने की आज्ञा दी । कहारों ने म्यान से तलवार खींची फिर पालकी के चारों ओर खड़े हो गए । अत्तिमब्बे ने बाहर झाँकते हुए पूछा कि किसने हम को रोका है ?

हम चोल सेनापति है । हमारी आज्ञा है कि तुम उतर जाओ अब हमारी हिरासत में हो चमली ?

— सेनापति ने बड़े घमंड से कहा ।

मैं क्यों उतर जाऊँ ? कैसे तुमने मुझे हिरासत में लिया है ? और क्यों

— अत्तिमब्बे की भौंहें तन गई थी ।

अरे ! क्या बकते हो ! दो चार कहा दे तो दिमाग ठिकाने आएगी । चोटी पकड़ के उतरवा लो ।

चोल सेनापति ने अपने जवानों को आज्ञा दी ।

कहारो ! तुम धीरज रखो ।

— अत्तिमब्बे ने कहरो से कहा । बाहर आई । चोळो के सम्मुख खडी हो गई और बोली

क्या मुझे हिरासत में लेना चाहते हो ? हम ने क्या अपराध किया है ? बताओ ।

अपराध ! अपराध यही कि तुम हमारे दुश्मन की माँ हो । तुम्हारे बेटे ने हमारे सैकडो जवानो को मारा है । उस अकेले व्यक्ति के कारण हम हार गए, नही तो सारा कर्नाटक हमारे पदतल पर आया होता ।

— सेनानी ने दात पीस कर जवाब दिया ।

मेरा पुत्र तुम्हारे ही समान सेनाधिपति हैं । अपने कर्तव्य का निर्वहण मात्र उसने किया है । क्या चालुक्य सेना में तुम्हारे हाथ किसी की मौत नही हुई ? वाद विवाद क्यो ? अपने व्यवहार की बात अपने पास ही रहने दो ।

अत्तिमब्बे ने सलाह दी ।

वाह ! तुम बडी चालाक हो ।

— व्यग से हँसते हुए सेनापति ने अपने सैनिको की ओर लाल लाल आँखो से देखते हुए कहा —

क्या देखते हो ? बढो आगे ! ले लो हिरासत में !

वे आगे बढे । पालकी को घेर लिया । अत्तिमब्बे की भौंहे चढ गई । बोली

खबरदार ! कही आगे एक कदम आया तो कुशल नही होगा । स्त्रियो, बाल बच्चो और निरीह जनता को कुचल कर साम्राज्य स्थापित करनेवाली तुम्हारी ऐसी बुद्धि पर थूक है । तुम्हें धिक्कार है ।

अत्तिमब्बे ने जोर से कह दिया ।

जैसे ही योद्धा सैनिकों ने उसे पकड़ने के निमित्त हाथ बढ़ाया वैसे ही क्रुद्ध होकर ज्वाला मुखी के समान आग उगलती हुई दृष्टि से घूरकर अपने पदतल पर रहनेवाली मुट्ठी भर मिट्टी को उन सैनिकों की ओर फेंक दिया। उन को ऐसा लगा कि सैकड़ों हजारों बिजलियाँ एक साथ उन पर टूट पड़ी हों। बिजलियों के लिए जहाँ बिजलियाँ टूट पड़ी थीं वह स्पष्टीय कराहों की चिनगारियों का जाल दिखाई दे रहा था। सभी योद्धा वज्राहत से मूर्छित हो गए। अभिमन्यु ने नमस्कार जपते हुए पालकी की परिक्रमा की। कहारों और पालकी को घेर कर एक अग्निस्तम्भ निर्मित हुआ। घेरे के अंदर रहनेवालों को वह बचाती था। पर योद्धों को यह सचमुच अग्निस्तम्भ ही था। उस अमानुषिक व्यापार से योद्धा दूर भ्रष्ट होकर खड़े रह गए।

अभिमन्यु पालकी में बैठ गई और पालकी आगे बढ़ी। पालकी और कहारों के चारों ओर निर्मित वह अग्निस्तम्भ भी उसी प्रकार आगे बढ़ा।

घड़ी दो घड़ी की यात्रा के बाद अभिमन्यु की पालकी तुंगभद्रा के किनारे आ पहुँची। यामवन्य सेना के पड़ाव पर उतरते ही अभिमन्यु ने मन्त्रजप करते हुए योद्धों का दिग्बन्धन कर दिया। उस मन्त्र शक्ति से दोनों के बीच में विद्युत् प्राकार सृष्टि हुआ। क्षण में यह लीला देखकर सारी सेना चकित हो उठी। खबर पाकर हरिवर्मदेव सेनाधिपति अम्बिकास को साथ लिए चला आया। इस अमानुषिक एवं अप्राकृतिक दृश्य से चकरा उठा। सोचा अब हम दूर खड़े न पीछे हटे बनता न आगे बढ़े पीछे सैन्य प्रवाह है आगे यह अलौकिक विद्युत प्राकार है क्योंकि प्रवाह में उतरे तो हाथी भी पीठ से बह जाते। आगे यह आग्नेय योद्धों का कोलाहल सब धस कर रहा है। वे बढ़े आ रहे हैं। अब हम के फंदे में फँस जाएँगे। हरिवर्मदेव चिंताक्रांत हुआ। अम्बिकास को भी

कुछ नही सूझ रहा था । दोनो घबरा उठे । तब वहाँ सहसा एक पालकी दिखाई दी । आश्चार्य से दोनो देख ही रहे थे । अत्तिमब्बे वहाँ थी इरिवबेडग आगे बढा ।

माताजी ! कैसे समय दर्शन दिए ।

कह उस के पदतल पर सिर रख दिया । अण्णिग भी कम चकित नही था । माताजी के चरणो में नतमस्तक हुआ । पदतल पर वह भी गिर जाता पर वहाँ इरिवबेडग खडवन पडा हुआ था । माताजी से बोला

माँ हम सकट में फँसे हैं । पीछे प्रवाह आगे शत्रु । अब यह नया सकट भी उपस्थित हुआ । खैर, आप श्रवणबेळगोळ मे क्यो कर आई ? चोळ बडे नीच होते हैं ।

अत्तिमब्बे ने इरिवबेडग को ऊपर उटाया । देह में लगी धूल पोच डाली । अण्णिग के सिर पर प्यार से हाथ फेरा ।

माँ ! वही, सामने चोळो का सेना है । हमारे पास कुछ भी ही बचा है न रसद न शस्त्र ! हम बडे सकट में फँसे हैं ।

घबडा हट से अण्णिग फिर बोला ।

अण्णिग घबराओ मत ! जब तक मैं जीवित हूँ कर्नाटक साम्राज्य का बाल तक बाँका न होगा । मेरे रहते न तुम्हारे लिए अनिष्ट की सभावना है न इरिवबेडग की ही । बेचारे चोळो की कौन कहे चाहे तो समस्त भारत के राजा-महाराजा भी एक साथ आक्रमण करें । सेना को सँभालो । मेरी तप शक्ति से निर्मित इस विद्युत्प्राकार के निकट आने का साहस शत्रु करें तो जल जाएँगे ।

— अत्तिमब्बे ने आश्वासन दिया ।

माँ ! तुगभद्रा को शात करने के लिए कुछ तो करो ।

— अण्णिग ने प्रार्थना की ।

अण्णिग ! यह तुगभद्रा ही क्या ? आवश्यकता हो तो मैं

सप्त समुद्र को अध्यात्म शक्ति से सोख सकती हूं । डरो मत । पार करने के लिए सन्नद्ध हो जाओ ।

— इस प्रकार अभय देकर अतिमब्बे ने पुत्र को और हरिवेदन को विदा किया ।

अतिमब्बे के आगमन का शुभ समाचार चालुक्य सेना के कोने कोने में पहुंच गया । प्रत्येक सैनिक में विचित्र स्फूर्ति का संचार हुआ ।

चोलों ने आक्रमण करने का साहस किया । पर आगे बढ़ नहीं सके । उस विस्तृत प्राकार कूप-एक को पहले से निकट तक आ नहीं सकते थे ।

अतिमब्बे की शक्ति का अनुभव था अतएव आगे बढ़ने का विचार छोड़ दिया । दूर ही से चालुक्य सेना की गतिविधि को देखते रहे ।

चालुक्यों का आत्मबल ऐसा जाग पड़ा था कि उन्होंने बेधड़क खाया पिया । पेड़ के नीचे आराम से लेट कर पान चबा कर खाया । धूप उतर गई । चालुक्य सेना नदी पार करने की तैयारी में लग गई । एक रथ पर जिन-मूर्ति को बिठा दिया । सैकड़ों दीप जलाए गए । पुष्प गुच्छों से रथ सजाया गया । अतिमब्बे भी रथारूढ़ हुई । जिन-मूर्ति के पदतल पर बैठ गई । उसकी बगल बगल में हरिवेदन और अण्णिग बैठ गए । रथ में चार सफेद घोड़े जोते गए । उस नदी में उतार दिया । नदी का पानी किसी खिंचाव के कारण दस दस गज हटता गया । बीच में रास्ता खुला । रथ आगे बढ़ा । पीछे से सैकड़ों हाथी हजारों घोड़े लाखों सिपाही चल पड़े । आश्चर्य की बात यह थी कि वह विस्तृत प्राकार भी उसके पीछे पीछे चलने लगा ।

चोल सेनापति यह देख ही रहा था । नदी पार करते हुए

शत्रु को रोकने की इच्छा थी फिर भी कुछ करते नही बन रहा था। इस विवशता नें उसको बेचैन कर दिया। फिर भी सेना को आज्ञ दी कि तीरो से हमला करो। उनके फेंके बाण अत्यत वेग से चले आते पर इस ज्योतिर्मंडल के पास आते ही पर जले पक्षी की भांति गिरा जाते और जल जाते।

घडी दो घडी के अदर सारी चालुक्य सेना नदी के उस पार थी। चोळो ने भी इस मौके का लाभ उठा कर नदी पार करन चाहा। पर एक तो उस प्रज्वलित दीवार के निकट ही नही अ सके। सेना के पार पहुचते ही अत्तिमब्बे रथ से उतर आई और पूजा के फूलो को अजली में भर कर नदी पर चढाया। तुरत ही ऐसा शब्द हो उठा मानो समुद्र ही छीक रहा हो। पानी उमड आया।

वाढ के आघात से किनारे पर के वृक्षा गिर पडे। जिस से तुगभद्रा की शोभा और वढ गई। कर्नाटक महिला-रत्न के कीर्ति-प्रवाह में चोळो का पराक्रम वह गया। कर्नाटक की सीमा से वाहर खदेडने तक अत्तिमब्बे की मत्रशक्ति ने चोळो का पीछा किया।

## १९

अत्तिमब्बे आंखो देखा की एक एक करके महान विभूतियां अस्तगत होती जा रही थी। ऐसे अवसरो पर कहती प्रभो! क्यो मेरे भाग्य मे ये सब मुझे देखना वदा है। खैर तुम्हारी इच्छा! कभी-कभी आप्तेष्टो की मृत्यु का समाचार मिलता। तव अपने कान के परदे को फाड देने के लिए प्रार्थना करती।

इस के पिता वृद्धावस्था में लवकुंठि आए और यहीं अंतिम साँस तोडी। माताजी सती हो गईं सतिकमले बोली —

पिताजी आप देवतुल्य हैं। आपने बहुत कुछ दान पुण्य किया। इस ढंग से आपने दान दिया कि दाँये हाथ का दिया बाँए हाथ को पता न चले। माँ तुमने सचमुच भाग्यवती हो। तुम्हारे ही पुण्य से मैं ज्ञानविज्ञाननिधि हूँ। आपने अपनी सारी संपत्ति मुझे दे डाली। मुझसे दान धर्म करा दिया। आप का सारा जीवन पति और संतान की परिधि में सीमित रहा। भारतवर्ष की महिलाओं का आदर्श था आप का जीवन। अपनी सारी संपत्ति और कीर्ति समाजों में बाँट कर संपन्न थी। अपने सब अनुष्ठानादि किए पर किसी को पता भी चलने नहीं दिया। तुम कीर्तिकामना के पुतले थे।

— इन शब्दों में माता-पितरों का स्मरण करके रो पड़ी।

पितरों का वियोग हुए। थोड़े दिन हुए थे पप महाकवि के देहावसान का समाचार बिजली से टूट पड़ा। उनके साथ उनकी तीनों पत्नियों ने सहगमन किया। कवितापुष्पार्णव! क्यों तुमने आँखें बंद कर ली? हे नवोध (हे जयपुर)! कर्नाटक अब निठुरा बना। तुम्हारी तीनों रानियाँ तुम्हारे रत्न सब मानो थीं। श्रीपतीरत्न चतुर रत्नाकर रत्न! केवलमप्रकटि सूनाम्नमपि!! कर्नाटक-कमलाकरभरण!!! अब तुम्हें कहाँ पाऊँ?

— इस प्रकार पूज्य पति का स्मरण करके रो पड़ी।

अभी पप के देहावसान हुए पंद्रह दिन हुए होंगे सत्तम की मौत लवकुंठी में हुई। सास को सती होने से रोकने का भरसक प्रयत्न किया। मृत भगविधि के लिए ही यहीं आप रह जाइए कहकर आग्रह किया। पर कौन परंपरा के विरुद्ध जाना चाहता है? सत्तम कि चिता पर पद्मब्बे हँसते हँसते सो गईं। इस प्रकार अपनी सास को अग्नि जलाने देख कर अत्तिमब्बे से रहा नहीं गया। उसे

सभालने के लिए बहुए आगे बढी। उन्ही को सबोधन करते हुए अत्तिमब्बे बोली

ये ऐसे सास-ससुर थे कि कभी मेरे हाथ को रोकने का प्रयत्न नही किया। मुझे पतिहीना अनाथिनी जानकर सदा मेरी इच्छाओ को पूर्ण करने में लगे रहे। मैंने इनकी सारी सपत्ति लूटी इनके घर का मानो दीवाला ही निकाला। तब भी उसके मुह से चकार तक नही निकला।

ठीक इन्ही दिनो में पोन्न और अजितसेनाचार्य जी के अतिम दिन भी आए। प्रभो! कहकर रो पडी। सोच रही थी कि सचमुच पार्पा चिरायु होते हैं। आंख के आंसू अब सूख गए थे। सदा सुन्न से बैठे रहती सदा मन ही मन आचाय और पोन्न की महिमा का स्मरण किया करती थी। दो दिन बीते। काळलादेवी के काल कवलित होने का समाचार मिला।

मामी! काळलादेवी! घमड तुम्हारे नाम लेनेवाले के निकट भी नही रह सकता! गोम्मट के अत्युन्नत विग्रह खडा करके स्वर्ग और मर्त्य का अतर नाप दिया। मैं भावगीति हूँ तो तुम एक महाकाव्य हो।

कर्नाटक के महान व्यक्तित्व एक एक करके अस्त होते जा रहा है और देश अनाथ बन रहा है। न जाने और भी क्या क्या देखने के लिए मैं जीवित हूँ!

अत्तिमब्बे की आहें निकलने लगी। परिस्थिति ऐसी थी कि अत्तिमब्बे सदा सशक रहने लगी। दिन-रात उसे यही भय रहता कि कही कोई बुरा सुनना नही पडे। न जाने आज किसकी मौत होनेवाली है? उठते बैठते दु खद समाचारो का भय उसे सताने लगा था। एक दिन चामु डराय के स्वर्गवास का समाचार मिला।

—मामा जी मैं आप के प्यार को कैसे भूल्? आप के धैय स्थैर्य का स्मरण करके हृदय भी आश्चर्य चकित होता है। आप कैसे

महामहिम हो । आप महामना हैं । आप की बराबरी करनेवाला इस संसार में कौन होगा ? माताजी की आज्ञा के बहाने आपने इन्द्रगिरि की चोटी को कोमल बनाने का प्रयत्न किया और उस पाषाण को सजीव किया । बाहुबली की अनुपम मूर्ति गढ़ाई । प्रस्तर प्रतिमाओं में जैसे बाहुबली हैं वैसे ही भव्यात्माओं में आप महान हैं अनुपम हैं । सचमुच आज कर्नाटक अनाथ हुआ । शिल्प-लोक निष्फल हुआ । कन्नड़ काव्य-उपवन अन्धकार मय बन गया । अब क्या बचा है ? किस लिए अब जीवित रहना है ? क्या और किसके वास्ते मैं जीवित रहूँ ?

— अत्तिमब्बे मारे फूट फूट कर रोने लगी ।

अत्तिमब्बे अब पूर्ण विरक्त बन गई । कभी कभी संपत्ति भी दान दे बैठी । सोमवर्म कभी का मिट गया था । आए दिन मृत्यु का समाचार सुन सुनकर विषण्ण होकर मोहकर्म भी मिट गया । अब उपवास करके देह शोषण करने लगी । दिन रात तपस्या में लीन रहती । स्वप्न में भी समवसरण को देखती हुई दिव्य ध्वनि सुनने के साथ में आत्मचिंतन में डूबी रहने लगी । लौकिक से विरक्त तो हुई पर लोक से विरक्त नहीं हो सकी । सदा याचकों की टोली पीछे पड़ी रहती । कभी कभी अत्तिमब्बे का हाथ खाली रहता । तब भी न नहीं कहती । अपनी वस्तुओं में कुछ न कुछ दिया देती थी । कभी कभी पुत्र के पास ही याचकों को भेजने के लिए विवश हो जाती थी ।

प्रतिदिन नियमित प्रातःकाल अत्तिमब्बे के चरणों पर सौ मुद्राएँ चढ़ाकर नमन किया जाता था । उन में से एक एक मुद्रा अपने पोतों को देकर अपनी बहुओं को दस दस देकर, दान के नाम पर दस मुद्राएँ लिया रखती और बाकी सब दान देती थी । एक बार बड़ी दूर से आश्रम के संचालक आए ।

उन्होंने निवेदन किया

माताजी ! आश्रम की आर्थिक स्थिति शोचनीय बन गई है ।

विद्यार्थियो की मन्दा बढ रही है पर आमदनी घटती जा रही है। देने के लिए है कौन ? राष्ट्रकूटो के अधःपतन मे हमारी रीढ टूट गई। चामुडराय भी गए। कल्पतरु सी काळलादेवी भी अब नहीं। गगो की ओर से जो भी वार्षिकी बधी थी वह कम कर दी गई है। हम किकर्तव्य विमूढ बने हैं। अजितसेनाचार्य की बातो के भरोसे हम यहाँ चले आए। आचार्य जी ने कहा था कि जब तक अत्तिमब्बे है तब तक आप को चिन्तित होने की जरूरत नहीं होगी। सकट की स्थिति में दानचिन्तामणि के पास कहला भेजने पर सहायता मिल जाएगी। यही कहते कहते ध्यान भाव से समाविस्थ हुए थे। हम सब के द्वार खटखटा चुके। हर कहीं हमें वहान से टालने का स्वभाव दिखाई पडा। कहीं कहीं इतना दुःख सुना कि बस चलता तो अपने हाथ से उनकी ही कुछ सहायता कर आते। अन्त मे आप को ही कष्ट देना पडा। आप की अनुमति हो तो कहीं उधार लेकर अपना काम चला लेंगे। नहीं तो यही एक जैन विश्वविद्यालय है। इसे भी बद कर देंगे। कन्नड प्रांत में अब केवल दो ही जैनियो के आधार बच हैं। एक तो आप हैं दूसरे श्रवणबेळगोळ के गोम्मटनाथ हैं।

अत्तिमब्बे ने यह सब शातचित्त से सुना। सोचने लगी — मेरी भूल थी कि मैं दानचिंतामणि बनी। समाज के दैन्य को दूर करने का बीडा व्यर्थ ही क्यो उठाया ? औरो के समान कहीं अज्ञात रह जाती तो यह सकट नहीं रहता। क्या जैन समाज रसातल चला गया ? यदि जनता अपनी ओर से जितना बने उतना ही हाथ बँटावें तो इस विश्वविद्यालय का भार सभालना कठिन होगा ? कैसी दरिद्रता आई है ? यह धनाभाव का परिणाम नहीं, भावना के अभाव का परिणाम है। जनता स्वार्थी और भाव-शून्य बन गई है। क्या करूँ ? अपने पास मैंने एक कानी कौडी तक नहीं रखी।

ऐसे सोचते सोचते अत्तिमब्बे की आँखो से आँसू की बाध

द गई।

उसके आंसू देखकर आश्रमवासी बोले —

माताजी ! क्षमा कीजिए। आप को हमने कष्ट दिया। यह हमारी दुर्बलता थी। आप आंसू बहाए ! अजितसेनाचार्य जी की बात मानकर निराश होने पर चले आए। और आश्रम को चाहे बंद कर सकते हैं पर आप के आंसू देख नहीं पाते। आप का रोना और गोम्मटेश्वर का खण्डित हो जाना दोनों एक सा है !

प्रवक्ताओ ! मैंने अजितसेनाचार्य जी को वचन दिया था। वचन का पालन करूंगी। आखिर दानदेनेवाली मैं कौन हूं ! अजितसेनाचार्य की पावनकृति मेरे पास है। यही मेरे लिए अक्षय निधि है। आश्रम को बंद करने की बात सोची भी नहीं जा सकती। हां परिस्थिति के अनुरूप हमें परिवर्तन करना पड़ेगा। अब बंकापुर का नाम समाप्त प्राय है। अब हमारे लिए सजीव कल्पवृक्ष केवल गोम्मटेश्वर है। अतएव उसे श्रवणबेळगोळ ले जाइए। हमारा विश्वविद्यालय वहां चल सकेगा। उसका नाम गोम्मटेश्वर विश्वविद्यालय हो। पर कवि जिस विश्वविद्यालय में अध्ययन कर रहा था वह बंद क्यों हो ! जिस विश्वविद्यालय ने रन्न जैसे कवि दिया है उस का नामो निशान तक रहने नहीं पाए ? चामुण्डराय को लिखा पढ़ाकर यशस्वी बना हुआ विद्यालय स्थगित हो जाय ? नहीं नहीं कष्ट का सामना करना है। करेंगे। पथभ्रष्ट न हो। श्रवणबेळगोळ में स्थापित करके चला दें। अभी इसका प्रबंध कर दीजिए।

— इतना कहकर अत्तिमब्बे अंदर गईं। गोम्मट विश्वविद्यालय के लिए बहुओं से सहायता की याचना की।

बहुओं ने कहा —

माताजी ! हमारी सारी संपत्ति आप ही की देन है। इतना बोझा हम पर डाल रखा है कि हम से ढोते नहीं बने। आप

के नाम पर हम अपना सारा सुवण विश्वविद्यलय के लिए दान देंगी केवल इस मागल्य, नत्थू, नूपुर, कर्ण-फूल और दो दो चूडियो को रख लेगी।

ऐसा कहती हुई दोनो वहुओ ने अपना सारा सुवर्ण लाकर सचालको के सम्मुख ढेर लगा दिया।

महाशय ! अव इस से किसी भाति काम चलाइए। आगे भगवान की कृपा। श्रवणवेळगोळ में विश्वविद्यालय प्रतिष्टापित हो तो चिता नही रहेगी। कई महानुभाव परमात्मा के दर्शन के लिए आते रहेगे। कम से कम सौ में विद्यालय का एक दानी निकलेगा तो भी काम से चलता रहेगा।

— अत्तिमब्वे ने यह कह कर उन सचालको को विदा किया।

दिन वीतते गए। अत्तिमब्वे की भक्ति भी वढती गई। साक्षात् मूर्तिमती भक्ति ही वन गई। आँखो में सदा परज्योति की झाकी वसी रहती। कानो में सदा भगवन्नमामृत की धारा वहुएँ वहा रही थी। उसकी जीभ पचनमस्कार से पगी रही। अत्तिमब्वे में भक्ति के अनुपात में शक्ति भी वढी। अपनी अपूर्व शक्ति को छिपाए रखने का भर सक प्रयत्न किया करती थी, पर उसे अपना सयम कभी कभी तोडना पडता था। एक वार लक्कुडि में इरिवबेडग का दरवार लगा हुआ था। वहाँ राजगज मस्ती में पागल बना और जो भी कुछ मिला नष्ट करने लगा। आखिरकार सीधे इरिवबेडग के दरवार में ही घुस पडा। इरिवबेडग को सूंड मे उठाकर चक्राकार घुमा ने लगा इरिवबेडग वह चीख उठा।

माँ ! वचाओ ! मो वचाओ !!

अत्तिमब्वे महल में ही थी। न जाने कैसे उसे यह बोध हुआ। दौडते दौडते दरवार आई। पचनमस्कार का जप करते हुए हाथी के पास गई। उसे देखते ही हाथी शात हुआ।

क्यों गजराज ! तेरी क्या सूझी ? अतिमब्बे के पथ पर तेरी नजर लगी । धन् तेरे को ।

— ऐसा कहते हुए उसकी पीठ सहलाने लगी । हाथी ने हरिविक्रम को सूँड से उतार दिया । अतिमब्बे ने धरती पर पड़े हुए हरिविक्रम को उठाया । उस का स्पर्श क्या था संजीवनी का स्पर्श करना था । वह नव चैतन्य पाकर जाग उठा । बोला —

माँ तुम्हारी बड़ी कृपा है । नहीं तो मैं बे-मौत मारा जाता । वह अब भी थर थर काँप रहा था ।

उसे अभय दान देते हुए अतिमब्बे बोली —

बेटा ! गोम्मटनाथ की कृपा है ! पंचनमस्कार जपा करो ।

*एक बार सपरिवार वन विहार करने अभिमन्यु गया । नदी* के किनारे पड़ाव पड़ा । सब अपने अपने खेल कूद में मग्न थे । नागदेव नामक अतिमब्बे का एक पोता था । वह न जाने कब दादी की जिन-मूर्ति लेकर खेलने गया । उसे पहला रहा था कि वह हाथ से छूटी और नदी में कहीं खो गयी ।

अतिमब्बे ने अन्न जल छोड़ दिया । शपथ पूर्वक कहा कि जब तक काळकादेवी की दी गई पार्श्वनाथस्वामी की वह मरकत मूर्ति नहीं मिले तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करूँगी । यों ही वृद्धावस्था के कारण अतिमब्बे दुर्बल थी । अब निराहार रहने लगी । अभिमन्यु परेशान हुआ । सारी नदी छनाई गई पर कहीं मूर्ति नहीं मिली । वैसे ही दसों मूर्तियाँ बनवाकर माता जी के चरणों में अर्पित करने का वादा किया पर उसने स्वीकार नहीं किया ।

आठ दिन अतिमब्बे निर्जल रह गईं ! उस दिन फिर हाथी के सिर सनक सवार हुई । वह लोह-शृंखला तोड़कर भागा । रास्ते में जो कुछ मिला कुचल डाला । सीधे नदी में उतरकर उस जिनबिंब को सूँड से उठाकर झूमते-झूमते महल की ओर चला । सबको इस

दृश्य को देख कर भक्ति-परवश हुई । पार्श्वनाथ की जय, गजराज की जयवाली घोषणा गूज उठी ।

हाथी आगे वढा । जहाँ अत्तिमब्वे थी वहाँ आया । अत्तिमब्वे की गोद में जिन-विव रख दिया । अत्तिमब्वे ने हाथी का सत्कार गन्ने आदि खिलाकर किया । सप्ताह भर जिनोत्सव मनाया गया। पोतो ने उस में भर-पूर योग दान दिया । भक्ति की वाढ उमड पडी ।

एक वार गोम्मटेश्वर जिनालय के सचालक फिर से आए।

महाशयो ! आप के शुभागमन से वडा हर्ष हुआ । मैं आप की क्या सेवा कर सकती हूँ ।

अत्तिमब्वे ने सतृप्ति से विनयपूर्वक प्रश्न किया ।

माताजी ! आप के दान से श्रवणवेळगोळ में विश्वविद्यालय वना । यात्रार्थियो से भी कुछ न कुछ मिलता ही रहता है । पर इसी से विश्वविद्यालय का काम सुचारु रूप से चल नही सकता । अभी कोई समस्या नही है । फिर भी आचार्यपाद का अभिमत है कि इस के लिए स्थाई व्यवस्था हो जानी चाहिए । मूल-निधि आप के नाम पर स्थापित हो जाय । अतएव यहाँ आकर आप को कष्ट देना पडा ।

सचालको ने निवेदन किया ।

मूल-निधि की वात है ? कितने की होगी ?

अत्तिमब्वे ने सहज ही प्रश्न किया ।

कम से कम एक करोड की तो होना ही चाहिए।

— सचालको ने उत्तर दिया ।

यह सुनते ही अत्तिमब्वे का उत्साह ठडा पडा । पर इस भाव को व्यक्त नही किया । उन लोगो से इतना ही कहा कि आप यही रह जाइए । एक सप्ताह के अदर इसका प्रवध हो जाएगा ।

अत्तिमब्वे यो तो खाली हाथ थी । अपना कहने के लिए एक

कौड़ी भी नहीं रही फिर भी उसने सुपात्रको तो आश्वासन दे दिया।

पार्श्वनाथ के सम्मुख चुपचाप बैठे बैठे मानसिक पूजा करने लगी। मन ही मन सुवर्णाभिषेक भी कर दिया। पांच दिन बीत गए।

प्रभो क्या अंतिम दिनों में मेरी बात जाती रह जाय? अब तक तुम्हारी कृपा से किसी को भी ना नहीं कहा। अब तक मेरी लाज रखी। आखिरी दम तक मेरी लाज रखना। तुमसे कभी मैंने अपने लिए कुछ नहीं मांगा है जनता के लिए मांग रही हूं। देश के लिए मांग रही हूं। दीन दुखियों को मेरे घर आने की प्रेरणा देनेवाले तुम ही तो हो। क्या यही तुम्हारी लीला है? अब यह मयणवेळमोळ से सुपात्र कैसे जा सके? करोड़ रुपयों की मांग कौन कर रहा है? यह तुम्हारी प्रेरणा नहीं है? मुझ अबला की परीक्षा लेना चाहते हो? तुम तो स्वामी जानते ही हो कि इस अकिंचन के पास क्या है और क्या नहीं है। निस्तेज सूर्य कांतिहीन चन्द्र दान न दे सकनेवाली दान चिंतामणि! इसका रहना न रहना बराबर है। प्रभो अब मेरे घर में सुवर्णवृष्टि हो ताकि आए हुए ये अतिथि खाली हाथ न लौट पावें। फिर मुझे समाधिमरण ही दे दो। कोई बात नहीं।

इस प्रकार उसका रोती रोती मांग रहा था। ठीक उसी समय इस के पीछे पोतियाँ चली आईं। चारों ने देखा कि दादी के आंसू बह रहे हैं। पद्मश्री से रहा नहीं गया। पूछ लिया —

दादी रो क्यों रही हो?

— अक्षयश्री ने प्रश्न किया।

दादी? तबीयत तो ठीक है?

पद्मश्री ने हाथ से छूकर प्रश्न किया।

दादी! बताओ तुमको क्या चाहिए? रोओ मत।

जो चाहो मांगो मैं ला दूंगा। तुम रोओगी तो मैं भी रो दूंगा।

— चौथे नागदेव ने सहानुभूति मे सनी आवाज में कहा और हथेली से आंसू पोछ डाले।

बच्चो ! मैं क्या उत्तर दूं ? तुम में से कोई मेरी मांग पूर्ण नही कर सकोगे ।

ऐसी बात नही दादी । हम अवश्य कर देगे ।

— प्रत्येक ने विश्वासपवक कहा ।

देखो ! मुझे बहुत पैसे चाहिए । मेरे हाथ में एक पैसा तक नही है।

अत्तिमब्बे ने अपने पोतो के सम्मुख अपनी शोचनीय स्थिति का वणन किया ।

वम ! पैसे के लिए रो रही हो ?

इतना कह कर सब वापस गए और कुछ ही क्षणों मे लौट आए ।

दादी ! लो इतना मेरे पास है ।

—गुडमब्बे ने अजुली भर सुवण मुद्रा लाकर अत्तिमब्बे के सामने रख दी । इसी प्रकार अब्बकब्बे और पद्मब्बे ने किया ।

दादी, अब मेरे पास सिफ इतना ही धन है । इस में आधा तुम लो । आधा मेरे पास रहेगा ।

— नागदेव ने बांटते हुए कहा ।

बेटा ! तुम्हारी बहनो ने अपनी सारी पूंजी दे दी । तुम तो केवल आधा देने की बात कहते हो । यह क्यो ?

नागदेव को गोद में लेकर प्यार से अत्तिमब्बे न प्रश्न किया ।

दादी ! और आधा हिस्सा बचा कर रखे रहूंगा । और कभी तुम्हें जरूरत पडे तो ला दगा । समझी !

— बहुत ही सहज भाव से छोटे नागदेव ने उत्तर दिया ।

अतिमब्बे का हृदय फूल उठा । आनंदाश्रु के फौव्वारे छूट निकले ।

कंजूस कहीं का । दादी ! वह बड़ा कंजूस है ।

सब बहुओं ने एक स्वर में करार दिया ।

पगली ! तुम सभी मेरे ही समान मूर्ख हो । वह मेरा मुन्नू बड़ा समझदार है और होशियार है । एक ओर उदारता से काम करता है तो दूसरी ओर कुछ आपद्धन भी बचाए रखता है । दोनों चाहिए नहीं तो मेरे ही समान तुम लोगों को रोना पड़ेगा ।

— इस प्रकार पोतों को समझा बुझाकर देखा साढ़े तीन अंजुली भर स्वर्ण मुद्राएं थीं । अतिमब्बे ने उन्हें अंजुली में भर कर भक्ति पूर्वक पार्श्वनाथ का स्वर्णाभिषेक किया कुबेर का खजाना ही मानों बहा दिया । क्षण भर अन्तर्मुखी हो ध्यानस्थ रही । आँखें क्या खुली देखती है सामने एक ओर अम्मिन दूसरी ओर हरिवर्मदेव खड़े हैं । पोते सब चले गए हैं ।

हरिवर्मदेव ! कब आए बेटा ? तैलप भी कुशल से तो है ? महारानी जक्कलदेवी कैसी है ?

माताजी ! सब कुशल है । आप के दर्शन की इच्छा हुई । चले आया ।     हरिवर्मदेव ने उत्तर दिया ।

चक्रवर्ती सार्वभौम को इस बुढ़िया के दर्शन की चाह ! कहो किसलिए आए ?

बहू अतिमब्बे हँस पड़ी ।

आप को भूलूं ? तब तो मेरा चक्रवर्ती पद बाकी बची भी नहीं रहेगी माँ ! सचमुच आप ही के दर्शन के लिए आया । पिताजी ने आप की सेवा में कहला भेजा है कि नागदेव के स्वर्गवास होने पर नियमानुसार राज्य की ओर से कुछ क्षतिपूर्ति देनी थी । उस समय भूल गए । अब एक सप्ताह से पश्चाताप के मारे उन्हें सोते जागते शांति नहीं मिल रही है और आपद्धन के रूप में मल्लप देव की

धरोहर भी हमारे पास पडी हुई है । वह भी आप को मिलनी चाहिए। इसे चुकता कर देने के निमित्त मुझे भेजा है । हिसाब लगाने पर कुल दो करोड दो लाख मुद्राएं निकली । उसे हाथियो पर लादकर यहाँ ले आया हूँ, स्वीकार कीजिए और शुभाशीर्वाद दीजिए ताकि हमारे वश का भला होता रहे।

अत्तिमब्बे ने पूजाविग्रह हाथ में लिया और ऊपर उठाते हुए कहा

प्रभु पार्श्वनाथ सब का भला करेगा । मेरे बालबच्चे अलग नही तुम अलग नही हो । जब तक मैं जीवित हूँ तब तक तुम लोगो का बाल तक बाँका नही होगा ।

फिर पुष्प का प्रसाद इरिवबेडग को दिया। चरणामृत दिया। जैसे बाल बच्चो को दिया करती थी वैसे ही भोग चढाए गए मेवा आदि भी इरिवबेडग और अण्णिग को दिया ।

ठीक उसी समय रन्न कवि हाँफते हाँफते आ उपस्थित हुआ। अत्तिमब्बे के दर्शन से सतुष्ट होकर बोला

माता जी ! इधर एक सप्ताह से न जाने आप क्यो खिन्न हैं । कम से कम मुझसे अपना दु ख कहे देती !

घबडाए हुए पूछा।

बेटा ! कैसे जाना कि मैं दुखी हूँ ।

माँ ! मैं भक्तग्राम में भले ही रहूँ पर मेरा मन सदा आप ही के चरणो में लीन रहता है । आँख अधी हो पर ही की आँख अधी नही होती । मेरे साथ चलिए । प्रमाण दे दूंगा ।

इतना निवेदन करके अत्तिमब्बे, अण्णिग और इरिवबेडग को साथ ले गया और महल के आँगन मे अपने रथ पर स्थित मूर्ति को अनावरण कर देने का आग्रह अत्तिमब्बे से किया । अत्तिमब्बे ने विवश होकर उसका अनावरण किया और दग रह गई । वहाँ अत्तिमब्बे

को ही पद्मासनासीन सुवर्ण प्रतीक के रूप में पाया। उसकी आँखों से बहते आँसू के बिन्दु स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। इसे देखकर सब आश्चर्य चकित हुए।

तात ! कहाँ से इतना सोना आ गया ?

अभिमन्यु ने राम से पूछा।

माताजी आप का दिया हुआ है आपने मेरा तुला भार करा दिया था। उस सोने से आप की मूर्ति गढ़वाकर नित्य पूजा कर रहा हूँ।

जीवित व्यक्तियों की मूर्ति बनवानी नहीं चाहिए ! मृत व्यक्तियों की मूर्तियाँ बनाई जाती है।

अभिमन्यु ने कहा।

माता जी ! आप तो अमर हैं। आप इस नियम के अपवाद हैं।

— राम ने गंभीरता पूर्वक झुककर नमस्कार किया।

पागल कहीं का ! सोना दिया था आराम से रहने के लिए। बाल बच्चों और उनकी माँ को आभरण बनवाते। आराम का जीवन बिताते। उसके बदले मुझ जैसी साधारण स्त्री की मूर्ति बनवाने में सारा सोना लगा बैठे। मुझ जैसी भिखारी अनाथिनी की मूर्ति बनवाकर पूजा की ? तुमने अपनी मूर्खता से इस तरह चार चाँद लगा दिए ! मेरे मामाजी कहा करते थे कि कवियों का व्यवहार ज्ञान शून्य रहता है। तुम्हारा बर्ताव साक्षी भर रहा है। इस सुवर्ण से सहस्रों जिन-मूर्तियाँ बनवा सकते थे ! अभिमन्यु ने राम को डाँटा।

माताजी ! जिनेन्द्र आप की दृष्टि में बड़े हैं पर हमारी दृष्टि में आप बड़ी हैं ! आपने मेरी पत्नियों को सोलह सिंगार से उनकी झोली भर दी है। मेरे बेटे राम को इतना दिया है कि कोई हिसाब नहीं कर पाता। मेरी सूनी झोली अभिमन्यु का तुलाभार करके सोना सोना ही दे रखा है। अब मुझे पहले की भूख नहीं है। मैं आराम से रहता हूँ। यदि किसी दिन मैं निर्धन भी बनूँ तो आप की

मूर्ति के सामने बैठकर प्रार्थना करूंगा ।

यह कहते समय रन्न भाव-परवश था।

सबो ने मिलकर भक्ति पूर्वक अत्तिमब्बे की सुवर्ण प्रतिमा उठाई और सीधे महल के दीवानखाने ले आए । वहाँ इरिवबेडग के द्वारा लगाए गए सोने के ढेर के सम्मुख रख कर इरिवबेडग, अण्णिग और रन्न तीनो ने मिलकर उस मूर्ति का अभिषेक ऐसे ही किया जैसे जिन-मूर्ति का किया जाता है । जलाभिषेक, क्षीराभिषेक और गधाभिषेक किया । अजली में भर-भर कर सुवर्ण से भी अभिषेक किया। बहू-बेटे, बालबच्चे सब ने मिलकर अत्तिमब्बे की जय ! दानचितामणि की जय ! सम्यक्त्व चूडामणि की जय ! कह कर जयघोष किया ।

अत्तिमब्बे को बच्चो का यह खेल अच्छा लगा । वह आनद से फूल उठी। पार्श्वनाथ की हरी मूर्ति को अपनी सुवर्ण-मूर्ति की जाघो पर रखा और कहा —

महाप्रभो ! इन बालको को आशीर्वाद दो । मैं नही जानती कि ये क्या कर रहे हैं । अच्छा है या बुरा, तुम ही जानो । इसे स्वीकार करो । इन पर अनुग्रह करो ।

— भक्तिभाव से अतिमब्बे गद्‌गद् हो उठी।

अत्तिमब्बे की सुवर्ण प्रतिमा की जाँघो पर पार्श्वनाथ की मूर्ति रख देने से ऐसा लग रहा था मानों दानचितामणि सम्यकत्व में पनपकर फूली-फली और पगी हो ।

## परिशिष्ट

## पारिभाषिक शब्द-कोश

**अकृत्रिम जिनालय**

निसर्ग निर्मित जिनमंदिर कुल ८ ११ १७ ४८२ ऐसे मंदिर तीनो लोको मे पाए जाते है। यहाँ केवल देवताओं की ओर से जिनो की पूजा होती है।

**अनुमोदन पुण्य**

किसी सत्कर्म के अनुमोदन से मिलनेवाला पुण्य।

**अपराजित**

पूर्व विदेह के अजितवीर्य तीर्थंकर।

**अरहंत (अर्हत) केवली और तीर्थंकर**

घातिकर्मों से मुक्त चेतनाओं को अरहंत कहते है। उनकी दो कोटियाँ है 1) जो अपने निर्वाण के लिए प्रयत्न शील होते है वे केवली है और 2) जो लोक-सामान्य की मुक्ति की कामना रखते है ऐसे विश्वानुकंपी चेतना तीर्थंकर है। ये दोनो जिन और सर्वज्ञ भी कहलाते है। इनका शरीर अप्राकृतिक होता है। जरा स्वेद आदि रहित एवं सदा सुवासित रहता है। इस परम पवित्र शरीर का ही दूसरा नाम परमौदारिककाय है।

**आर्यिका**

जैन संन्यासिनी विरक्ता।

**ईशानकल्प**

पृथ्वी के ऊर्ध्व भाग में क्रमश: दो-दो लोकों के आठ स्तर है

जिन को कल्प कहते है। प्रथम स्तर में दक्षिण की ओर फेले हुए लोक को ईशानकल्प कहते है ।

ऊर्जयत

जुनागढ (गुजरात) के तीन मील दूरी पर रहनेवाले गिरनार को ऊर्जयत कहते है। यही बाईसवें नेमिनाथ तीर्थ कर ने निर्वाण प्राप्त किया ।

कर्म - घातिकर्म और अघातिकर्म

यह अचेतन तत्व है । काया, वाचा मानसा कर्म सग्रह हुआ करता है । यही जीव के जन्म, जीवन और मरण का कारण है । दैविकगुणो को आच्छादित करनेवाले कर्म को घातिकर्म कहते है। ज्ञानावरणीय, दशनावरणीय मोहनीय और अतराय ये घातिकर्म के अवातर भेद है। नाम, गोत्र, आयु और वेदनारूप कर्म का नाम अघातिकर्म है। घातिकर्म से मुक्त जीव जिन कहलाता है अघातिकर्म से भी मुक्त होने पर जिन ही सिद्ध कहलाता है ।

कषाय सल्लेखन

अतरग के रागद्वेष को क्रमश कृचल डालनेवाला व्रत

कुन्दकुन्द

ई पहली सदी में विद्यमान जैनाचार्य थे । प्रवचनसार, नियमसार, समयसार और पचास्तिकाय नामक दार्शनिक ग्रन्थो के रचयिता है ।

कैलासगिरि

आदि तीर्थ कर आदिदेव का निर्वाण-स्थान ।

गुणस्थान

जैनागमो के अनुसार मुक्ति पथ के चौदह गुणस्थान है ।

तरहवें तीर्थंकर वासुपूज्य का जन्म और निर्वाण स्थान। भागलपुर (बिहार) के पास आजकल चंपापुर नाम से यह स्थान प्रसिद्ध है।

कि

भवभ्रमण में एक उत्सव

घातिकर्म से मुक्त जीव

ई दूसरी सदी में गुणधर मुनि ने १८ गाथाओं में कषाय प्राभृत नामक आगम ग्रंथ की रचना की। उस पर वीरसेनाचार्य एवं उनके शिष्य जिनसेनाचार्य ने (८१४-८७२) क्रम से २ और ४ श्लोकात्मक व्याख्या लिखी है। इस व्याख्या का नाम जयधवला है।

विश्वात्मक पूरित मुक्त-आत्मा

तीर्थंकर-वाणी

ई दूसरी सदी में भूतबली और पुष्पदंत आचार्यों ने मिलकर छः सौ सूत्रों में जिनागमों का संग्रह किया। इस पर वीरसेनाचार्य (८१४-८७२) ने ७२ श्लोकों की व्याख्या लिखी। इस बृहत्कृति का नाम धवला है।

तीर्थंकर बनने की योग्यता एवंग्यावाला नाम कर्म 1) माँ के

गर्भ में आने के छ महीने पूर्व 2) जन्म लेने पर 4) वैराग्य-प्राप्ति के बाद, 5) केवलज्ञानी बनने के समय और अघातिकर्मों से मुक्त होकर सिद्ध बनने के अवसर पर चतुर्निकाय अमरों द्वारा मनाए जानेवाला उत्सव।

पंचनमस्कार

जैन गायत्री। अर्हत, सिद्ध, दिगंबराचार्य, दिगंबर यति (उपाध्याय) और दिगंबर मुनि इन पांचों के दैवी गुणों का स्मरण करना।

पंचपरमेष्ठि

अर्हंतादि पांचकोटि के जीव जो पंचनमस्कार के विषय हैं।

परीषह

मुक्तिपथ के रोड़े।

परमौदारिककाय

अप्राकृतिक तत्त्व से निर्मित १०८ लक्षणों से युक्त अर्हत देह।

पिंछ

जैन साधु के हाथ में रहनेवाले मोर पिच्छ के झाड़।

बलदेव

त्रिषष्ठि-शलाका-पुरुषों में नौ बलदेव माने जाते हैं।

रत्नत्रय

1) सम्यग्दर्शन (जैनागमों पर विश्वास) 2) सम्यक्ज्ञान (जैनागमों का ज्ञान) 3) सम्यक्चारित्र्य जैनागमों के अनुरूप जीवन बिताना।

लोंच

सिर और दाढ़ी-मूंछ के बाल उखाड़ने की क्रिया।

वासुदेव

त्रिपष्ठि-शलाका पुरुषों में नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव भी हैं। प्रतिवासुदेव को पराजित करके वासुदेव अर्धचक्री बनते हैं।

विदेहक्षेत्र

तीर्थंकरों का निवास स्थान। जम्बूद्वीप के सप्त क्षेत्रों में चौथा।

श्रावक-श्राविका

जैन गृहस्थ नर-नारी।

समवसरण

तीर्थंकरों के सत्कार समारम्भ जो देवताओं द्वारा आयोजित होता है। इस सभा में तीर्थंकर उपदेश देते हैं।

सम्प्रधिमरण

शुभ-सकल्प में आनेवाली मृत्यु।

सम्मोदशिखर

यहाँ बारह तीर्थंकर निर्वाण हुए हैं। बिहार प्रांत मे हजारीबाग जिल्हा में है। ४४८१ फुट ऊँचा है।

सामयिक

सध्या समय की प्रार्थना।

सल्लेखन

दो प्रकार के हैं 1) कषाय सल्लेखन अर्थात् रागद्वेष का त्याग और 2) काय सल्लेखन-आमरणांत अन्नजल का त्याग।

सिद्ध

अघातिकर्म से मुक्त जीव।

सिद्धलोक

जैनागमों के अनुसार त्रिलोक में अंतिम लोक जहाँ सिद्ध निराकार स्थिति में अनंतकाल अनंत विहार करते रहते

# परिशिष्ट

## शुद्धि पत्र

विज्ञ पाठकों से निवेदन है कि नीचे के सही रूप सकेतानुसार यथास्थान जोडकर पढे।

| पृ स | पक्ति | शुद्धपाठ | पृ स | पक्ति | शुद्धपाठ |
|---|---|---|---|---|---|
| 10 | 10 | राजकीय | 20 | 23 | उद्दीप्त |
| 25 | 1 | प्रेयसी | 25 | 3 | में |
| 26 | 7 | अगुली | 26 | 11 | अपने |
| 27 | 14 | तिलक | 28 | 4 | ग्रहण |
| 29 | 8 | का | 29 | 13 | अवेग |
| 30 | 19 | व्रत | 32 | 7 | रहे |
| 34 | 22 | के लिए | 34 | 23 | और |
| 36 | 6 | महर्षि | 36 | 7 | ओतप्रोत |
| 37 | 24 | कविचक्रवर्ती | 38 | 14 | त्याग |
| 40 | 26 | लोक | 46 | 3, 7, 8 | चक्रवर्ती |
| 46 | 11 | आश्वासन | 99 | 1 | आश्चय |
| 102 | 26 | प्रा | 108 | 3 | मूंछो |
| 108 | 17 | समझी | 116 | 1 | लिपटा |
| 116 | 12 | मखमली | 125 | 17 | सताने |
| 133 | 18 | कल्पना | 133 | 18 | विभार |
| 152 | 16 | समथन | 163 | 16 | तो |
| 164 | 19 | दिया | 179 | 24 | लिए |
| 182 | 1 | मत्र | 184 | 19 | से |
| 188 | 3 | ताक | 191 | 16 | वहाइए |
| 199 | 6 | वताई | 200 | 8 | विशेप |

| पृ स | पंक्ति | शुद्धपाठ | पृ स | पंक्ति | शुद्धपाठ |
|---|---|---|---|---|---|
| 208 | 14 | तुम्हारी | 209 | 7 | चींटी |
| 209 | 15 | पहाड़ | 212 | 12 | सुरूपा |
| 212 | 18 | बात | | 20 | पोष को |
| | 21 | पालन | 213 | 3 | तो भी |
| 213 | 18 | दृष्टि | | 22 | शारीरिक |
| | 25 | देह न | 220 | 23 | स्पर्श |
| 220 | 25 | सर्कंपी | | 25 | प्रभु को |
| 221 | 5 | इस | 225 | 15 | रिझाने |
| 225 | 22 | के | 226 | 24 | वस |
| 227 | 9 | उनके | 231 | 10 | पीस |
| 232 | 13 | कहारो | 233 | 3 | आये बड़ा |
| 233 | 13 | पोछ | 234 | 22 | सरक |
| 235 | 2 | आशा | 235 | 4 | गिर |
| | 7 | करना | | 8 | था |
| ,, | 22 | अतिमब्बे ने | 236 | 2 | अतिमब्बे |
| 236 | 5 | तुम | | 10 | कपने |
| | 16 | नाराज | | 2 | की |
| | 26 | बजाते | | | |

न सू पृ 175 पंक्ति 7 में—संगीत नृत्य से नहीं — होना चाहिए, उसी पृ पर 10 वीं पंक्ति में—से नहीं—पदपूर्ण छोड़ कर पढ़ना चाहिए।

पृ 234 की 9 वीं पंक्ति में कुछ शब्द अधिक पड़े हैं— सही वाक्य यों है — उस विकृत आकार के निकट आ नहीं सकते थे।

उसी पृ के 11 वीं पंक्ति के प्रारंभ में — कुछ एक को पहले से — जोड़कर पढ़ा जाय।